वीर
मुनि श्री विद्यानन्द
विशेषांक
श्री महावीर दि० जैन पुस्तकालय

वर्ष ५२ बैसाख कृष्णा १५ सोमवार २२ अप्रैल १९७४ मूल्य ३)

सम्पादक कार्यालय
६९. तीरगरान स्ट्रीट,
मेरठ शहर (उ. प्र.) २५०००२

मुनि विद्यानन्द विशेषांक

अ० भा० दिगम्बर जैन परिषद का पाक्षिक पत्र

मुख-पृष्ठ सज्जा
श्री हरिशचन्द्र विभाकर

मुख-पृष्ठ मुद्रण
ज्ञानलोक प्रिंटर्स, लालकुर्ती मेरठ

धर्म के अद्भुत प्रणेता

प्राणिमात्र के शुभचिन्तक

चारित्र शिरोमणि त्यागमूर्ति तपोनिधि

पूज्य श्री १०८ मुनि विद्यानन्द जी

के चरणों में

सादर समर्पित

परमेष्ठी दास जैन

राजेन्द्र कुमार जैन

अनमोल वचन

प्रत्येक आत्मा में धर्म मौजूद है केवल उसे जगाने की आवश्यकता है।

* * *

युग के साथ चलना चाहिये, परन्तु क्षमतावान तो वही है जो युग को अपने साथ ले चलने की योग्यता उपार्जित करे।

* * * * *

जो समय का मूल्य रखता है, समय उसका सम्मान करता है और जो समय को खो देता है वह समय मे खो जाता है।

* * * * *

यह जीवन समय मे विभक्त है। व्यर्थ समय खोने वालो को समय स्वय ही अग्नि मे जलाकर भस्म कर देता है।

* * * * *

समय कामदुघा धेनु है, इसकी सेवा से मनचाहा वरदान मिल सकता है। एक एक ईंट रखने से महान भवन का निर्माण यदि सम्भव है तो एक-एक क्षण का मूल्याकन करने से उन्नति के उच्च शिखरो का स्पर्श सुनिश्चित है।

* * * * *

उठो, समय को पहचानो! जीवन का प्रत्येक क्षण मगलमय है, उसे क्रियाबहुल कर उस पर सुखी जीवन की आधारशिला रखो।

* * * * *

हम चाहे जितना भी ज्ञान प्राप्त कर ले, लेकिन यदि उसके अनुसार अपना आचरण नही बनाते तो वह ज्ञान भारस्वरूप ही है। वह तभी कल्याणकारी हो सकता है जब उस जीवन मे क्रियात्मक रूप से उतारा जाय।

* * * * *

तीर्थंकर महावीर का २५०० वा निर्वाण महोत्सव मनाना तभी सफल होगा जब देश मे सभी निरोगी बनें। जैन समाज को इस शुभ अवसर पर सारे देश में नेत्र शिविरो का आयोजन करना चाहिए जिनमे कम से कम २५००० नि.शुल्क नेत्रो के आपरेशन किये जावे।

यह जीव ज्ञानार्जन द्वारा जैसे-जैसे जिनेन्द्र-भगवत् प्रतिपादित तत्व को जानता है, वैसे-वैसे धर्म-मति मे अपने उपयोग को लगाता हुआ पापों के क्षय करने में समर्थ हो जाता है।

गृह-त्यागानन्तर, मुनिश्री के वर्षायोग-स्थानों की नामावलि

१९४६	कोण्णर [कर्नाटक]
१९४७	हूमच ["]
१९४८	कुम्भोज [महाराष्ट्र]
१९४९	शेडवाल [मैसूर]
१९५०	" ["]
१९५१	" ["]
१९५२	" ["]
१९५३	" ["]
१९५४	" ["]
१९५५	" ["]
१९५६	" ["]
१९५७	हूमच क्षेत्र [कर्नाटक]
१९५८	सुजानगढ [राजस्थान]
१९५९	" ["]
१९६०	वेलगांव [कर्नाटक]
१९६१	कुन्द कुन्दाद्रि ["]
१९६२	शिमोगा ["]
१९६३	दिल्ली
१९६४	जयपुर [राजस्थान]
१९६५	फिरोजाबाद [उ० प्र०]
१९६६	दिल्ली
१९६७	मेरठ [उ० प्र]
१९६८	बडौत ["]
१९६९	सहारनपुर ["]
१९७०	श्रीनगर-गढवाल, हिमालय [उ० प्र०]
१९७१	इन्दौर [म० प्र०]
१९७२	श्री महावीर जी [राजस्थान]
१९७३	मेरठ [उ० प्र०]

श्री बद्रीनाथ मन्दिर के मुख्य द्वार पर

अलकनन्दा के तट पर मुनि विद्यानन्द जी

माणा गाव के स्कूल मे बच्चो के साथ

श्री बद्रीनाथ के मन्दिर मे प्रवचन के लिए आते हुए मुनि विद्यानन्द जी
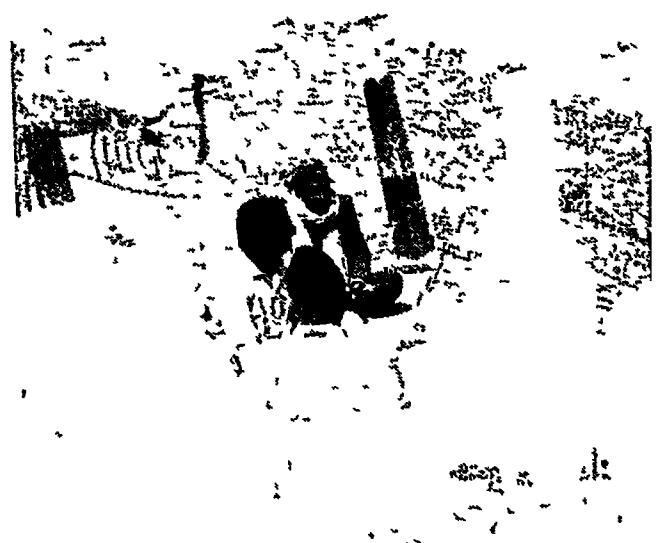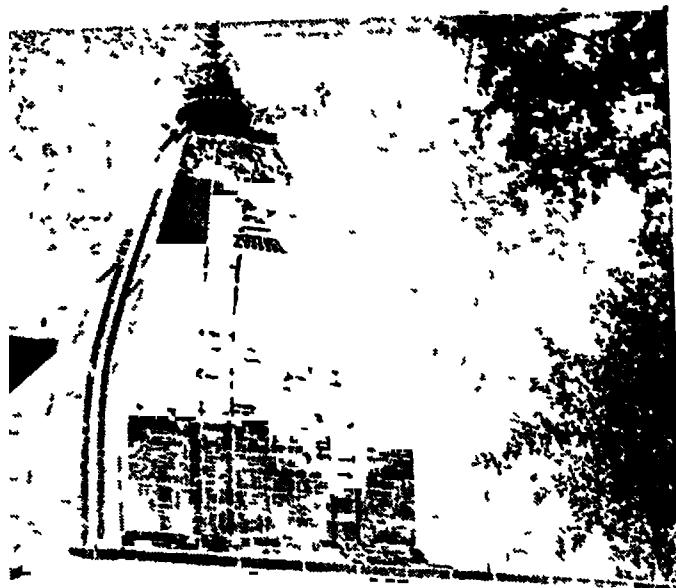
श्रीनगर का जैन मन्दिर

अलकनन्दा के तट पर चर्चा करते हुए

"पूज्य मुनि विद्यानन्द जी धर्म के अद्भुत प्रणेता, श्रमण सस्कृति के प्रतीक, आध्यात्मिक सत होने के अतिरिक्त विश्व प्रेमी और विद्वानो के लिए विशेष स्नेह रखने वाले हैं। आपके हृदय मे जैन धर्म जो विश्व का धर्म है उसके उद्योत के लिए बड़ी लगन है। भगवान महावीर स्वामी के २५०० वे निर्वाण महोत्सव पर जो कार्य उनके सरक्षण तथा उनकी प्रेरणा से हो रहा है वह अनोखी बात है। उनका नाम सदैव अमर रहेगा। मुनिश्री के प्रति मैं अपनी आदरांजलि अर्पित करता हूं। मुनिश्री के द्वारा धर्म को खूब प्रभावना हो यही मेरी भावना है।"
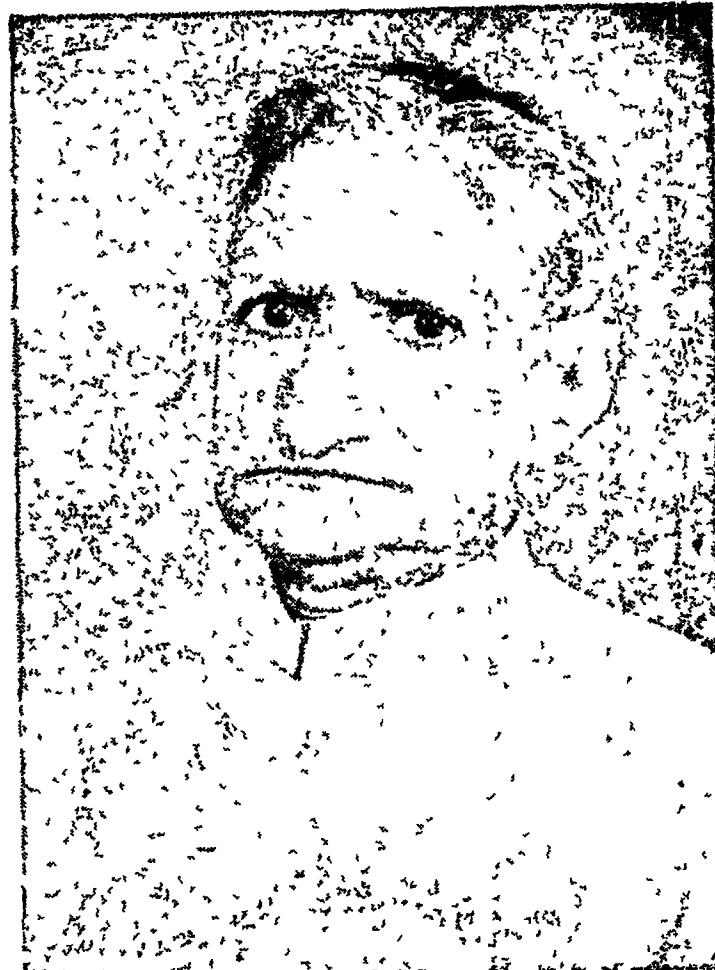
परिषद् के प्रधान
बा० महावीर प्रसाद जैन, हिसार
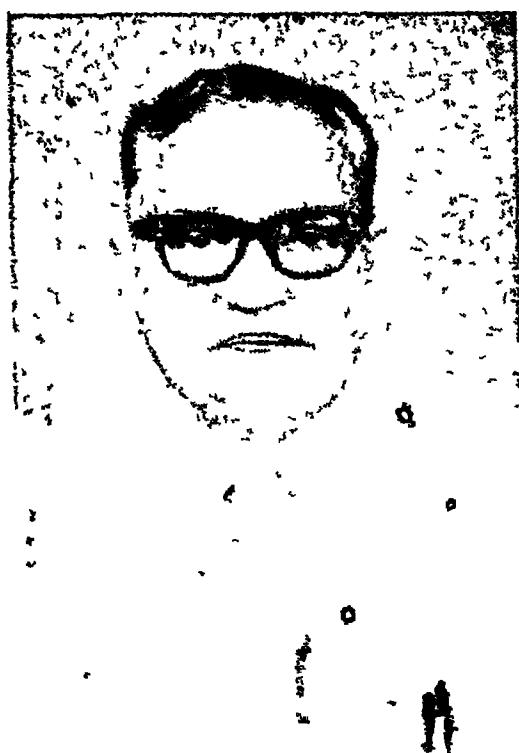
परिषद् के प्रधानमत्री
श्री सुकुमार चन्द जैन

मुनि विद्यानन्द जी के उत्तर भारत में विहार के कारण दिगम्बर जैन मुनियो के प्रति जनता मे विशेष आदर व आकर्षण हुआ है। उनके प्रवचनो से प्राणी-मात्र का कल्याण हुआ है।

अनेकान्त धर्म के सच्चे उपासक युगद्रष्टा मुनिश्री विद्यानन्द जी दीर्घजीवी हो तथा समस्त प्राणीमात्र का इसी प्रकार कल्याण करते रहे इसी भावना के साथ मैं मुनिश्री के चरणो मे श्रद्धा के सुमन अर्पित करता हूं।
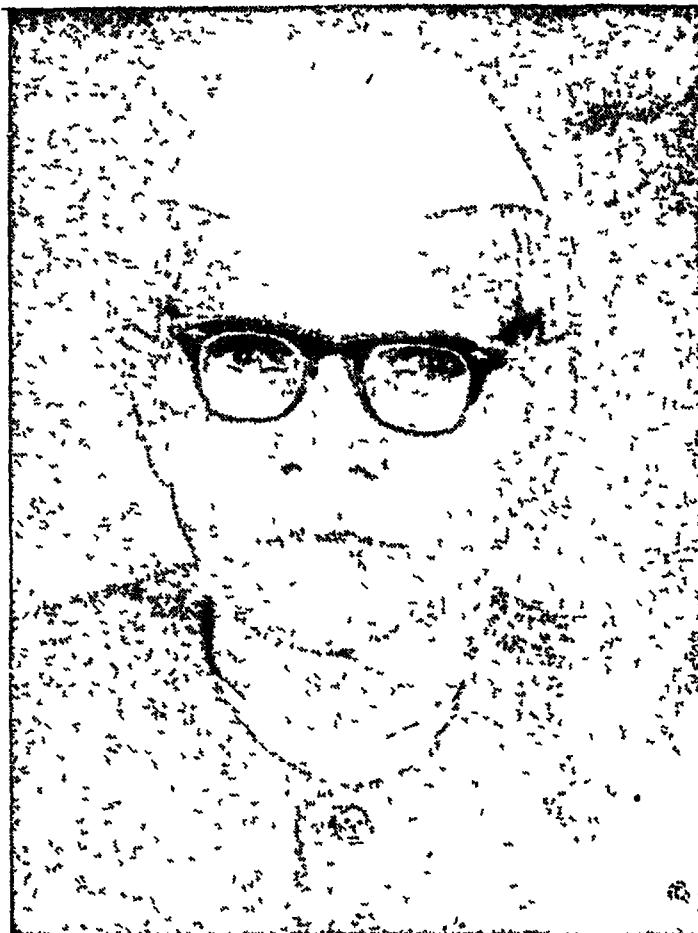
परिषद के संस्थापक

बा० रतनलाल जैन, बिजनौर

विश्व धर्म प्रेरक मुनिश्री विद्यान जी हमारे सौभाग्य से तीर्थंकर महाव के २५०० वे निर्वाण महोत्सव की यो नाओ को उचित दिशा देने मे सलग्न । मैं अपनी श्रद्धा के सुमन मुनिजी चरणो मे अर्पित करते हुए उनके चिर होने की कामना करता हू ।

श्री अक्षयकुमार जैन, दिल्ली

'यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि 'वीर' मुनि विद्यानन्द जी की ५० वी जन्मजयन्ती मना रहा है । इस युग मे समय के अनुरूप मुनि विद्यानन्द जी ने जो समाज और देश मे नवचेतना जागृत की है उसे देखते हुए उन्हे युग प्रवर्तक कहा जा सकता है । भगवान महावीर का यही पावन उपदेश था जिसे आज वह सम्पूर्ण देश मे पैदल यात्रा करके आलोकित कर रहे हैं । वह रूढिवाद के कट्टर विरोधी हैं । सरलता और सौम्यता की प्रतिमूर्ति राष्ट्र-धर्म से ओत-प्रोत हैं । प्रभु से कामना है कि वह दीर्घजीवी हो और देश व समाज का कल्याण करते रहे ।"

तोर्थंकर महावीर के २५०० वे निर्वाण महोत्सव के सन्दर्भ में जिन योजनाश्रो का सूत्रपात हुश्रा है उन सभी का सचालन हमारा नवयुवक वर्ग कर रहा है श्रौर यह सब मुनि जी को ही देन है। युगद्दष्टा मुनि श्री विद्यानन्द जो महाराज ने धर्म के प्रति नयी पीढी के श्रन्दर श्रास्था का निर्माण किया है।

ऐसे त्याग मूर्ति मुनि विद्यानन्द जी समाज का इसी प्रकार मार्ग दर्शन करते रहे इसी भावना के साथ मैं उनको ५० वी जन्म जयती पर श्रपनी श्रादराजलि श्रर्पित करता हूं।

लाo राजेन्द्रकुमार जैन दिल्ली

विश्व धर्म प्रेरक मुनि श्री विद्यानन्द जो की ५० वी जन्म जयन्ती पर मैं मुनि जो का हार्दिक श्रभिनन्दन करता हूँ।
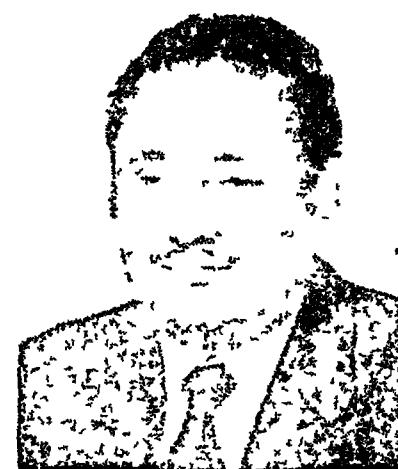
परिषद के कोपाध्यक्ष

श्री रमेश चन्द जैन दिल्ली

श्री शंकरलाल कासलीवाल

बम्बई

मुनिश्रीभ्यो नमो नमः

मुझे प्रथम दर्शन परमविज्ञ श्राचार्य रूप मुनि श्री विद्यानन्द जी के श्रतिशय क्षेत्र श्री महावोर जी मे हुए। मुझे उस समय मुनि श्री से श्राचार श्रौर विचार रूप ऐसी प्रेरणा मिली कि जो दिन-प्रतिदिन मुझे फलित होती दिखती है।

पश्चात् श्रनेको स्थान पर परम पूज्य मुनि श्री के दर्शन हुए श्रौर प्रतिसमय मुझे मूक प्रेरणाएँ मिलती रही। मुझे तो ऐसा लगता है कि उनको प्रेरणाश्रो से मेरा इह श्रौर परलोक सदा सन्मार्ग पर श्राता रहेगा।

परिषद् की प्रबन्ध समिति के सदस्य

ला० राजेन्द्रकुमार जैन धामपुर

मुनि जी ने उत्तराखड मे हिमालय के अचल मे धर्म की जो ज्योति जगाई है वह सदा अमर रहेगी। मुनि जी इसी प्रकार हमारा मार्ग दर्शन करते रहे यही भावना है।

परिषद् की प्रबन्ध समिति की सदस्या एवं हरियाणा
विधान सभा की उपाध्यक्षा

श्रीमती लेखवती जैन

मैं मुनि श्री विद्यानन्द जी से बहुत प्रभावित हूं। मेरी यह हार्दिक कामना है कि वे युग युग तक इसी प्रकार हम सबका मार्ग दर्शन करते रहे।

परिषद् की प्रबन्ध समिति के सदस्य

श्री नथमल सेठी कलकत्ता

मैं मुनि श्री विद्यानन्द जी को ५० वी जन्म जयन्ती पर उनका हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।

मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज की श्री बद्री विशाल
यात्रा के मुख्य सहयोगी

श्री जितेन्द्र कुमार जैन
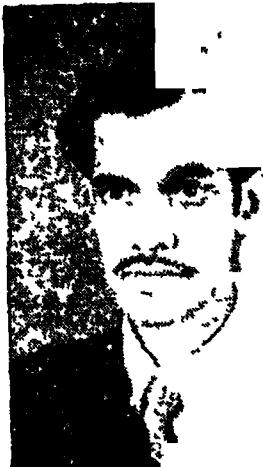
यह पूज्य गुरुदेव की कृपा और आशीर्वाद का ही परिणाम था कि सम्पूर्ण यात्रा निर्विघ्न हुई। इस यात्रा के दौरान मैंने मुनि श्री को काफी निकट से देखा और मेरा यह विश्वास है कि मुनि जो इस युग के महान सत हैं और ऐसे सत ही इस देश का कल्याण कर सकते हैं। मैं मुनि जी के प्रति अपनी आदराजलि अर्पित करता हूँ।

मुनि विद्यानन्द स्तवनम्

स्व० डा० नेमिचन्द्र जैन शास्त्री आरा

(यह स्तवनम् मृत्यु से पूर्व मेरठ पधारने पर स्व० डा० नेमिचन्द्र जी ने वीर मे प्रकाशनार्थ दिया था)

यदीयै तेजोभि परिणतविचारैः प्रवचनै.,
मनोरागद्वेष· विलयमधिगच्छन्ति जगताम्।
शिव सत्य दिव्य सुखदमथ यद्दर्शनमहो,
सदा निद्यानन्दो जयतु भुवि सोऽय मुनिवर ॥१॥

यदीय व्यक्तित्व गुणगणनिधान सुविदितम्,
यदीय पाण्डित्य बुधजनसमीहा स्पदमभूत्।
प्रसिद्धिसिद्धिर्वा दिशि दिशि यदीया प्रचलिता,
पदद्वन्द्वे तस्य प्रणतिरनिश मे विलसतात् ॥२॥

यदीया सत्कीर्त्ति· तुहिनधवलाभा शिखरिणी,
प्रतिष्ठा यस्यास्ति प्रभुपदसमानावनितले।
यदीयं सम्मान निखिलजनवर्गेष्वतिशयम्,
उपास्ते त 'चन्द्र' प्रणतहृदयो 'नेमि' सहितः ॥३॥

चमत्कार वाणी वितरति यदीया सुललिता,
यदीयत्यागस्यापरिमितकथा कास्तु कथिता।
लभन्ते नो शान्ति क इह परमा यस्य शरणे,
अपूर्व. निर्ग्रन्थ विहरतितरा कोऽपि भुवने ॥४॥

परं पूज्य लौकै. जगति जननं यस्य सततम्,
पर श्लाघ्य लौकैरमलचरित यस्य प्रकटम्।
पर ध्येया लौकैरमररचना यस्य निखिला,
महावोर स्वामी प्रथित वरशिष्यो जयतु स ॥५॥

जनोऽसोऽल्पज्ञो वा भवति सुमहान् यस्य कृपया,
यदोय स्पर्शो वा यदुमपि सुवर्ण प्रकुरुते।
यदीयाशार्वाणी विकरति सुधासिन्धु लहरीम्,
समन्तादौभद्र. भवतु चिरभद्राय स भुवः ॥६॥

नमस्तस्मै भूयो युगपुरुषवर्याय सततम्,
नमस्तस्मै भूयोऽखिलजननमस्याय सततम्।
नमस्तस्मै भूयो भवतु च मुनीन्द्राय सततम्,
अह लोके मन्ये यमिममकलक श्रुतधरम् ॥७॥
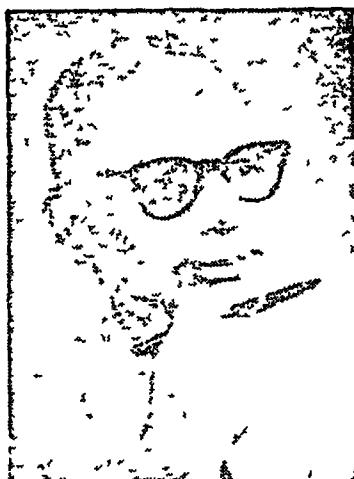
हे नगाधिराजविहारी महामुनि !

डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन', डी० लिट्०,
हरिनगर, अलीगढ

हे नगसम्राट बिहारी महामुने ! आप भारत के मुकुट नगाधिराज के दर्शनो के लिए दैवी प्रेरणा से प्रेरित हुए और पदयात्रा प्रारम्भ कर दो।

हे दिव्य दिगम्बर ! नगाधिराज ने आपको क्यो आकृष्ट किया ? क्या इसलिए कि पाण्डव धर्मराज युधिष्ठिर के साथ वहा गये थे। गाण्डीवी अर्जुन ने भी वहा शस्त्रास्त्र पाने के लिए यात्रा की थी। क्या अर्जुन का वह लक्ष्य अनुकरणीय था ? नही, वह तो भौतिक लोभ-लिप्सा थी।

क्या इसलिए कि महातपस्वी विश्वामित्र ने वहा तपस्या की थी ? नही, वह तपश्चर्या तो खडित थी, क्योकि एक नारी मेनका से ही वे पराजित हो गये थे।

फिर क्या इसलिए कि वह मनु की निवास-स्थली था ? नही, उन्होने तो भीगे नयनो से प्रलय-प्रवाह देखा था। उसके साथ मनु तो बुद्धि-रूपी इडा के आगे हृदय रूपी श्रद्धा को ठीक तरह से समझ ही न सके थे।

क्या इसलिए कि हिमालय कुबेर का निवास स्थान है ? नही। आप और आपका दिगम्बरत्व तो अर्थ-त्याग का ज्वलन्त प्रतीक है और मोक्ष को वरण चुका है। अत ऐसा विचारना तो नितान्त असगत और अयुक्त है।

फिर क्यो हिमालय-यात्रा के लिए आकृष्ट हुए मुनिवरेण्य ? समझा, कुमार सभव मे कालिदास के कथन—'अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज' मे आपकी श्रद्धा जगी और दृढ से दृढतर होती हुई दृढतम बनी। उस नगाधिराज को कविकुलचूडामणि कालिदास ने 'देवतात्मा' क्यो बताया ? उसमे जो गूढ तत्व है, उसी तत्व को पाने और उसमे आत्म-रमण करने के लिए आपने हिमालय की यात्रा की होगी, हे हिमालय के दिगम्बर मुनि !

हे दिव्यतमयात्रि ! आपने हिमालय के प्रत्येक ककर मे शकर के दर्शन किये हैं। उस शकर के पवित्रतम दर्शनो से अपनी आत्मा को विश्वव्यापिनी बनाकर और लोक-मानस को आलोकित करके जन-जन का जो कल्याण किया है, उसकी अनुभूति आज प्रत्येक भारतवासी कर चुका है।

येनात्माबुध्यतात्मैव परत्वेनैव चापरम्।
अक्षयानन्तबोधाय तस्मै सिद्धात्मने नमः ॥

महामहिम महामुने ! हिमालय के कण-कण मे आपकी दिव्य दृष्टि ने पूत-पावनत्व के दिव्य दर्शन किये हैं। उस दर्शन-प्रक्रिया मे भारतीय सस्कृति के महामत्र जो आपकी वाणी से प्रस्फुटित हुए हैं, उनसे विश्व के प्राणी महान कल्याणकारी सदेश प्राप्त करके आत्मोद्धार कर सकते हैं।

आपने ही सर्व प्रथम धर्म की विराट परिधि के दर्शन करके जैन शासन को समझा और विश्व-धर्म की जय' का उद्घोष किया। अत विश्व के जन-जन के लिए आप प्रणम्य हैं, श्रद्धेय हैं, प्रेय हैं और श्रेय है।

हे महामनीषिवर ! आपने ही नगाधिराज की पूत पावन स्थलियो मे बताया कि आनन्द-पद्धति अहिसा ही जगत की माता है। परिणाम ही पुण्य और पाप का कारण है। हल चलाकर जीवो का घात करने वाला एक कृपक पुण्यात्मा है, लेकिन जाल मे एक भी मछली न फँसने पर भी जाल डालने वाला एक मछुआ पापी है।

हे शारदासुपुत्र ! आपने गीता के वाङ्मय तप की व्याख्या को समझा है। वाणी की अहिसा प्रिय सत्य बोलने मे है। इसीलिए 'सत्य ब्रूयात' के साथ ऋषियो ने 'प्रिय ब्रूयात' की शर्त लगायी थी। इसीलिए भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता मे अर्जुन से कहा था—

"अनुद्वेगकर वाक्य सत्य प्रियहित च यत्।
स्वाध्याभ्यसन चैव वाङ्मय तप उच्यते॥"
(गीता १७/१५)

हे वीतराग महा तपश्विन् पूज्य विद्यानन्दजी

ओ पाटल के सुन्दर पुष्प !
पाखुरी सा अनावृत तन
करुणापूरित वीतराग मन
उजले चरित और ज्ञान का
गन्धवान मकरन्द
बहा रहा यश समीर
तुम्हारे मधुवर्षी सन्देशो का
सौरभ पा
महक रहा है सारा देश।

—डा० कुसुम जैन, गुना

महाराज ! आप ब्रह्मचर्य और अहिसा द्वारा शारीरिक तपस्वी बने हैं और पवित्र भावना द्वारा मानसिक तपस्वी बनकर मानव लोक को दिव्या-लोक प्रदान किया है। अतः हमारी श्रद्धाँजलि आपके पवित्र व्यक्तित्व के प्रति सादर समर्पित है, क्योकि आत्मा और मन धर्म और साहित्य के प्रति समर्पित है।

जिन्होंने आत्मा को आत्मरूप में स्व-रूप तथा अन्य परद्रव्यों को परद्रव्य-रूप में जाना उन अक्षय (नित्य) एव अनन्त बोध-सम्पन्न सिद्ध भगवान् को नमस्कार है।

सम्पादकीय :–

उदारचेता, व्यवहारदर्शी मुनिश्री विद्यानन्द जी महाराज !

इस वीसवी शताव्दी मे भारतवर्प मे अनेक स्वनामधन्य दिगम्वर जैन साधु हुए हैं, और उनमे से वहुतो ने अपने अपने ढग से धर्म प्रचार तथा लोकोपकार किया है। उनमे से मुनि श्री विद्यानन्द जी ने मुझे विशेष प्रभावित किया है। इसका कारण यह है कि वे उदारचेता हैं, और उनका दृष्टिकोण व्यापक एव वहुत स्पष्ट है।

उनका जन्म २२ अप्रैल सन् १६२४ को दक्षिण भारत के वेलगाव जिलान्तर्गत शेडवाल ग्राम मे व्राह्मण परिवार मे हुआ था। किन्तु उनके पिता श्री कालप्पा जैन धर्म के प्रति मूलत. श्रद्धालु थे, और वे स्व० प० माणिकचन्द्र जी न्यायाचार्य के सहाध्यायी थे। उन्होने दक्षिण भारत मे सर्वकल्याणकारी जैन धर्म का जम कर प्रचार किया था इन्ही सस्कारो से सुसस्कृत मुनि विद्यानन्द जी (सुरेन्द्र कुमार) भी निर्भीकता-पूर्वक जैन धर्म के उदार सिद्धान्तो का प्रचार कर रहे हैं।

मैं इस वात से भी गौरवान्वित हू कि उन्होने मेरे सहाध्यायी श्री महेन्द्र कुमार सिंह (आ० महावीर कीर्ति जी) से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की थी। उनके मन मे वाल्यावस्था से ही विरक्ति-भाव समाया हुआ था, इसलिये उन्होने विवाह बधन मे न फॅसकर सन् १६६३ मे ३८ वर्ष की अवस्था मे ही मुनि दीक्षा धारण कर ली थी।

मुनिश्री विद्यानन्द जी अपने नाम के अनुरूप ही निरन्तर विद्याध्ययन मे आनन्द लेते रहते हं। यही कारण है कि उन्होने जैन धर्म और जैन दर्शन के साथ ही अन्य सभी प्रमुख धर्म ग्र थो का भी अध्ययन-मनन किया है, और वे उन पर यथाप्रसग साधिकार प्रवचन करते हैं। साथ ही वे जैन धर्म के मूलभूत सिद्धान्तो का विविध धर्मों के साथ ऐसा समन्वय करते हैं कि श्रोतागण आश्चर्य चकित रह जाते हं। उनकी धर्म सभाओ मे निरन्तर इतनी विपुल सख्या मे जैनाजैन जनता एकत्रित होती है कि अन्य किसी धर्म गुरु की सभा मे देखने मे नही आती।

मुनि श्री अपने प्रवचनो मे जैन धर्म के सर्व-कल्याणकारी उदार सिद्धान्तो का वहुत ही स्पष्ट भाषा मे विवेचन करते हं। वे सुधारवादी चर्चा भी करते हं। जैन समाज मे प्रविष्ट कुरूढियो का दृढतापूर्वक निषेध करते हैं, और वे परम्परागत लीक से हटकर भी चलते हं, किन्तु उनके व्यक्तित्व का यह अद्भुत प्रभाव है कि सुधारक

यदन्तर्जल्पसपृक्त मुत्प्रेक्षाजालमात्मन ।
मूल दु खस्य तन्नाशे शिष्टमिष्टं परं पदम् ॥

एव रूढिवादी—दोनों ही वर्ग उन्हे समान आदर-पूर्वक देखते है।

मुनि विद्यानन्द जी (युवा छात्र सुरेन्द्र कुमार) ने सन् ४२ के स्वतंत्रता आन्दोलन मे भी सक्रिय भाग लिया था और वे महात्मा गांधी के प्रति आस्थावान् रहे हैं। यही कारण है कि वे आज भी राष्ट्रवादी सन्त हैं। अनेक भाषाविद् होते हुए भी वे हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा मानते हैं। राष्ट्रीय पर्वो पर धर्म और कर्तव्य का बोध कराते हुए वे अद्भुत प्रवचन करते हैं। उनके प्रभावपूर्ण वक्तृत्व और व्यक्तित्व से प्रभावित होकर सर्व-साधारण जनता ही नही, अपितु सभी धर्मो के विशेषज्ञ लोग भी उनकी प्रवचन–सभाओ मे पहुंचते हैं। आज का उच्छृङ्खल कहा जाने वाला कालेजो और विश्वविद्यालयो का छात्र वर्ग मुनि जी को अपने विद्या-सस्थानो मे आमन्त्रित करके उनके मर्मस्पर्शी प्रवचनो को बडी ही रुचि एव श्रद्धा के साथ सुनता है। छात्र ही नही, विश्व-विद्यालयो के उपकुलपति, प्रोफेसर एव व्याख्याता मन्त्रमुग्ध होकर उनके प्रवचनो को सुनते हैं। उनके प्रवचनो, प्रेरणा और प्रयत्नो के फलस्वरूप कई विश्वविद्यालयो मे जैन धर्म के ग्रथ पाठ्यक्रम मे रखे गये हैं।

मुनि श्री की साहित्य प्रचारक रुचि बहुत व्यापक है। जहा उन्होने 'स्वतन्त्रता और समाज-वाद' जैसी पुस्तके लिखी हैं वहां 'मगल-कुकुम' जैसे धर्मपाठो का सुरुचिपूर्ण सग्रह प्रकाशित करवाया है। 'सगीत पत्रिका' जैसा नयनाभिराम शास्त्रीय प्रकाशन भी उन्हीं की सुरुचि एवं सत्प्रेरणा का सुफल है। ऑल इण्डिया रेडियो से जैन भजनो का प्रसारण एव जैन रिकार्ड्स का निर्माण एव प्रचार भी उन्ही की दूरगामी प्रेरणा का सुफल है। अभी कुछ समय पूर्व ही पर्याप्त विचार विमर्ष के पश्चात मुनि श्री ने 'जैनध्वज' को नूतन रूप प्रदान किया है, जिसे तीनो जैन सम्प्रदायो ने स्वीकार किया है। किन्तु 'श्रेयांसि बहु विघ्नानि' के अनुसार इस सुन्दर एक्य निर्माण के प्रतीक-जैनध्वज का कुछ रूढिवादी लोग तर्कहीन विरोधी स्वर भी उठा रहे हैं।

मुनि श्री विद्यानन्द जी ने जहां 'अहिसा विश्व धर्म' और 'स्वतन्त्रता—समाजवाद' जैसे राष्ट्रीय विषयो पर प्रभावपूर्ण विवेचन किया है वही 'निर्मल आत्मा ही समयसार'' जैसे गहन आध्यात्मिक प्रवचनो द्वारा सत्य और तथ्य का निश्चय प्रधान विवेचन करके श्रोताओ और पाठको को आश्चर्य चकित कर दिया है। आपके राष्ट्रीय एव सामाजिक प्रवचनों की ही भांति इन घोर आध्यात्मिक प्रवचनो को भी हजारो श्रोता मन्त्रमुग्ध होकर सुनते रहे हैं।

इन समयसारी प्रवचनो में मुनि श्री ने कहा है—"आत्मा की खोज करने जा रहे हो और उसे पुद्गल-पर्यायो मे खोज रहे हो। यह तो वाछितोपलब्धि का पथ नही। "तुम यह सब प्रवचन, मेधाबल तथा श्रुतदर्प छोडो। कुछ काल मौन रहो तथा अपने मे ही उस अन्वेष्टव्य का अन्वेषण करो।'

यदि पुण्य-अपुण्य का चिन्तन बना रहेगा तो आत्मप्रदेश में अनेक उत्प्रेक्षाएं विकल्प उपस्थित करती रहेंगी, वे ही दुःख की मूल है। उन्हे शेष करने पर इष्ट परम पद सुलभ हो जाता है।

"निर्मल आत्मा की प्राप्ति को ही सर्वोपरि ध्येय मानने वालो को इतर हेय द्रव्यो के समान गण, गच्छ और सघ भी अन्तत त्याज्य है। जहा निर्मल अवस्था अशेष ग्रथिविमोककारिणी है, वहा निर्मल आत्मद्रव्य के अतिरिक्त कौन स्वकीय है ?"

"नय की लघुवीथियो से नही, शुद्ध निश्चय के मार्ग से चलो। नित्य शुद्ध क्षायिक दृष्टि रखो, अपने मे ही तन्मय रहो। परमात्मा भी व्यवहार-नय से सर्वज्ञ है, निश्चयनय से तो आत्मज्ञ ही हैं।"

इसी प्रकार मुनि श्री की सग्रहीत पुस्तक-- "आध्यात्मिक सूक्तिया" मे एक से एक महनीय सूक्तिया मुद्रित हैं जो मुनि श्री के आध्यात्मिक अध्ययन--मनन की द्योतक हैं।

मुनि श्री विद्यानन्द जी की अद्भुत शोधपूर्ण पुस्तक 'तीर्थंकर वर्द्धमान' उनके विपुल अध्ययन, मनन और प्रशस्त अध्यवसाय की द्योतक है। इस पुस्तक के मुखपृष्ठ पर जीवन्त स्वामी (महावीर स्वामी की ससार त्यागने से एक वर्ष पूर्व) की प्रतिमा का मनोहर चित्र मुद्रित है जो अदृष्ट पूर्व है) भ० महावीर के २५ सौ वर्ष पूर्व का भारत का मानचित्र दिया गया है। भ० महावीर की जन्म कुण्डली, गर्भकाल, कुमारकाल, तपकाल देशना-काल आदि को सूक्ष्मगणना करके वर्ष, मास और दिन निर्धारित किये हैं तथा पचकल्याणको की सही तिथिया निकालकर मुद्रित की हैं। जैसे जन्म--चैत्र शुक्ला १३, उत्तर फा०, सोमवार, २७ मार्च ५९९ इस्वी पूर्व। इस प्रकार भगवान महावीर की आयु (गर्भकाल ९ माह, ७ दिन, १२ घटे को सम्मिलित करके) कुल ७१ वर्ष ३ माह २५ दिन १२ घटे निर्धारित की है।

इस प्रकार मुनि श्री का यह शोधकार्य अद्भुत और अभूतपूर्व है। मैंने एक बार उन्हे स्वय इस शोधकार्य मे तल्लीन देखा था, जब वे सैकडो वर्ष पुराने विदेशी पचागो के अध्ययन मे लगे हुए थे। उन्होने तब मुझे अपने इन निष्कर्षों को बतलाते हुए अपूर्व तुष्टि दिखलाई थी। तभी मैंने एक लेख मे लिखा था कि "मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी हैं।" इस विशिष्ट अर्थ सूचक शब्द पर मेरे एक दो मित्रो ने थोडी आपत्ति भी की थी, किन्तु मुझे उस समय 'अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी' से अधिक सूचक शब्द नही मिला था। जहा अनेक साधुओ को मैंने प्राय खान पान आदि की चर्चा करते देखा है वहा मुनि विद्यानन्द जी को निरन्तर ज्ञान चर्चा मे मगन पाया है और अनुभव किया है कि उनके मन मे यह भावना है कि जैन धर्म का प्रचार जन-जन मे हो, जैन धर्म को विश्वधर्म का स्थान प्राप्त हो सभी वर्ण, जाति और वर्ग के नर-नारी जैनधर्म को धारण करके आत्म-कल्याण करे तथा जैन समाज की सकीर्ण मनोवृत्ति दूर होकर उदार एव व्यापक बने।

एक बार मैंने मुनि श्री के उदारतापूर्ण उद्गार सुनकर उनको सराहना की और उनके प्रति अपना आदरभाव व्यक्त किया तो मुनि श्री बोले

उपास्यात्मानमेवात्मा जायते परमोऽथवा।
मथित्वाऽत्मानमात्मैव जायतेऽग्निर्यथातरु.॥

"आपने ही तो ४० वर्ष पूर्व 'जैनधर्म की उदारता' पुस्तक लिखी थी। मैंने उसे पढा—समझा, और आज उसी की बात कह रहा हूं, तो इसमे कौन-सी नई बात है ?" यह सुनकर मेरा मन उनके प्रति श्रद्धावनत हो गया।

एक बार 'वीर' पत्र मे एक ऐसा लेख छप गया था, जो नही छपना चाहिये था। उसको वहुत समय तक चर्चा चलती रही। उसी समय मैं मुनिश्री के पास महावीर जी क्षेत्र के चातुर्मास मे पहुंचा। तब मुनिश्री ने मुझ से सर्वथा एकान्त मे जो चर्चा करके स्पष्टीकरण किया, उससे मैं अत्याधिक प्रभावित हुआ और उनके प्रति नम्रीभूत हो गया।

मुनिश्री विद्यानन्द जी के माध्यम से सुसम्पादित साहित्य प्रकाशित हो रहा है, अभी तक उपेक्षित विद्वानो का यथोचित सम्मान हो रहा है, जैन धर्म को व्यापक रूप देने के लिए सक्रिय योजनाये बन रही है तथा महावीर की २५ सौवी निर्वाण तिथि को सफल बनाने के लिए सुदृढ प्रयास हो रहे हैं। यह और इन जैसे ही अनेकानेक लोकोपकारी कार्योको देखते हुए मुनिश्री विद्यानन्द जी के ५१ वे वर्ष मे प्रवेश करते समय मगल-कामना करता हूं कि वे कम से कम इतने ही वर्ष और जीवित रहे, जिससे उनके अपूर्ण कार्य भली-भांति पूर्ण हो सके।

—परमेष्ठीदास जैन

मनुष्य आत्मा की उपासना करने पर परमात्मा हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे वृक्ष अपना ही अन्तर्मन्थन करने से अग्नि हो जाता है।

मानवीय गुणों से ओतप्रोत
मुनि श्री विद्यानन्द जी

श्री यशपाल जैन, दिल्ली

मुनिश्री विद्यानन्द जी के प्रति मेरे मन मे गहरी आत्मीयता है। वह उन महापुरुषो मे से हैं, जिनकी वाणी समस्त मानव-समाज के लिए कल्याणकारी है। वह जैन मुनि हैं, लेकिन उनके उपदेश, उनकी शिक्षाए सबके लिए लाभदायक हैं। वह विद्या-प्रेमी हैं निरतर उत्तम ग्रंथो का स्वाध्याय करते रहते हैं। उनकी रुचि व्यापक है। उनकी दृष्टि इतिहासज्ञको है। वह जो पढते हैं, उसका चिन्तन करते हैं और चीजो की गहराई मे जाते हैं।

इस सबके साथ-साथ वह मानवीय गुणो से ओतप्रोत हैं। वह सबके प्रति स्नेह रखते हैं और सबके मान की रक्षा करते हैं। इसी से जो भी कोई उनके निकट आता है, आनन्द से विभोर हो उठता है।

मुनिश्री वराबर चिन्तन करते रहते हैं कि मनुष्य किस प्रकार शुद्ध और प्रवुद्ध वने। इसके लिए वह मार्ग भी बताते रहते हैं। वह कहते हैं कि अपने अत करण को निर्मल वनाओ और समष्टि के हित मे अपना हित मानो। जो व्यक्ति सकीर्ण स्वार्थ को छोड देता है, वह निरन्तर ऊचा उठता जाता है, उसका जीवन ऊर्ध्वगामी बनता जाता है।

मुनिश्री से मेरा परिचय बहुत पुराना है। मुझे उनका स्नेह पाने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैने जब जब उनके दर्शन किये हैं, उन्हे समाज के श्रेय का चिन्तन करते पाया है।

उनकी रुचि जैन धर्म और जैन दर्शन तक ही सीमित नही है। उन्होने अन्य धर्मो और दर्शनो का भी गहराई से अध्ययन किया है। उनके लिए कोई भी धर्म या दर्शन त्याज्य नही है। उन्हे जहा जो अच्छा मिलता है, ग्रहण कर लेते हैं। उनकी दृष्टि अत्यन्त उदार है।

मुनिश्री की पचासवी जयती के पावन अवसर पर मैं उनका हृदय से अभिनन्दन करता हू और प्रभु से प्रार्थना करता हू कि मुनिश्री शतजीवी हो, तथा जैन और जैनेतर समाजो का मार्ग-दर्शन करते रहे।

अव्रती व्रतमादाय व्रती ज्ञानपरायणः।
परात्मज्ञानसम्पन्नः स्वयमेव परोभवेत्॥

हे धर्मी के संवेदित स्वर !

—डा० देवेन्द्र कुमार शास्त्री

जीवन के नश्वर वैभव पर तज अपनी नयी उमंगे,
निकल पडे यौवन–वन मे मदमाती नवल तरगे,
तुमने चरितहीन ऋतुएँ सम्बोधित कर सतत्व भरा,
व्यभिचरित दिशा के आनन का ताप, शोक, सताप हरा ।

तेरी वाणी मे गगाजल शान्ति–सुधा नित भरता है,
विश्वधर्म का पुराकल्प वह सृष्टि मनुज का करता है ।
ओ पवन–वेग ! नव आस्था के चल–विचलित कल्मष तुम से,
मूर्च्छित थी जो निष्ठा जग की वह जाग उठी फिर तुम से ।

हारे, थके, दलित मानव को दिया अभय जीवन सारा,
करुणा के हे अमरस्रोत ! अकित करते वत्सल न्यारा ।

तुमने धर्मी के नाम मनुज जीवन सारा लिख डाला,
ज्योतिर्मय दीप–शिखा अकप आलोकित जग कर डाला ।
हे विद्या के आनन्द–कन्द ! जीवन के स्थिर एक छन्द,
नव गीतो को लय मिल जाती तुम (मे) कैसा भी छन्द-बन्ध ।

केवल विश्वास तुम्हारे पर सांस–सास ऊर्जा लाई,
नगर–नगर मे डगर–डगर मे विवेक–तन्मयता छाई ।
विद्या की प्रत्यूषी किरणे उदयाचल के मस्तक पर ।
वर्षों के इस अन्तराल मे जगमग करती धरती पर ।

हे धर्मी के सवेदित स्वर तुमने यह अलख जगाया,
महावीर की काया मे नर–जन्म नया तुमने पाया ।

अव्रती जब व्रत-ग्रहण करता है, व्रती होता है; व्रती होने से उसम सम्यक्ज्ञानपूर्वक सच्चारित्र का समावेश होता है और आत्म-विषयक परम ज्ञान से सम्पन्न होने पर वह स्वय ही परमात्मा हो जाता है ।

'जीयाच्चिरं मुनिवरो वदतां वरोऽयम्'
'वदतांवर' मुनि विद्यानंद जी

पन्नालाल साहित्याचार्य

पूज्यवर श्री १०८ मुनि विद्यानन्द जी वक्तृत्व-कला के पारगामी हैं। इस कला के कारण आप 'वदतांवर' कहे जाते हैं। आपका सर्वधर्म सबन्धी अध्ययन अगाध है। सर्व धर्मो की चुनी हुई सामग्री आप अपने प्रवचनो मे इस रीति से रखते हैं कि सुनने वाले भाव विभोर हो जाते हैं। 'अपनी बात कहना, दूसरे की बुराई नही करना' यह प्रशस्त वक्ता बनने की आधार भित्ति है। इसी भित्ति के ऊपर मुनिराज के प्रवचन लोकग्राह्य हो रहे हैं। जब हम स्वय बुराइयो से ओत-प्रोत हैं तब हमे दूसरो की बुराई कहने का अधिकार ही कहा है ?

यह अध्ययन का युग है। पूज्य मुनिराज निरन्तर अध्ययन में निमग्न रहते हैं और जिस प्रकार गोताखोर व्यक्ति समुद्रतल मे मोती को साथ ले आता है पर कंकड पत्थर को वही छोड आता है उसी प्रकार मुनिराज किसी भी धर्म के ग्रन्थ से मोती के सदृश उत्तम सदर्भ को हृदयगत कर लेते हैं और अन्य सदर्भ को छोड देते हैं।

समाज मे कहा क्या हो रहा है ? कौन विद्वान् क्या कर रहा है ? इसकी पूरी जानकारी महाराज रखते हैं। विद्वान् एक मार्गदर्शक के रूप मे समाज को प्राप्त हैं उनका सम्मान और सरक्षण यदि समाज न कर सकी तो वह पथभ्रान्त हो सकती है। विद्वानो के सरक्षण को लेकर आपने भारतवर्षीय दि० जैन विद्वत्परिषद् के द्वारा प्रचारित 'महावीर विद्यानिधि' की श्लाघना की है और सम्मान को लेकर विद्वानो के सम्मान की योजना को प्रोत्साहित किया है।

आपके वक्तृत्व मे स्पष्टता है। लोकप्रियता के प्रलोभन मे पडकर आप जैनधर्म और जैन समाज की मिथ्या आलोचना को चुपचाप सहन नही कर लेते किन्तु उसका इतना करारा उत्तर देते हैं कि बडे बडे नेताओ यहा तक कि मिनिस्टरो को भी बगले झाकना पडती हैं।

श्री भगवान् महावीर के २५०० वे निर्वाण

जातिर्देहाश्रिता दृष्टा देह एवात्मनो भव.।
न मुच्यन्ते भवात्तस्मात्ते ये जातिकृताग्रहाः ॥

मुनिराज जी से मेरा प्रथम साक्षात्कार श्री गोपाल दास जी वरैया के शताब्दी समारोह के समय दिल्ली मे हुआ था। प्रथम साक्षातकार मे ही आपका यह आदेश मिला कि 'आपको पुरुदेव चम्पू' की टीका लिखना है'। आदेश की पूर्ति कर जब मैं उसकी पाण्डुलिपि देने के लिये मेरठ गया तब आपने बहुत प्रसन्नता प्रकट की। बडौत के चातुर्मास मे आपने सूक्ष्मग्राही दृष्टि से उसका अवलोकन किया।

आज वह पुरुदेव चम्पू सस्कृत और हिन्दी टीका के साथ भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित है। पूज्य महाराज के आदेश से ही वह इदौर की वीर निर्वाण ग्रथ प्रकाशन समिति की ओर से पुरस्कृत की गई है।

मुनि श्री के चरणो मे विनम्र विनयाञ्जलि अर्पित करता हुआ उनके दीर्घायुष्क होने की कामना करता हू।

महोत्सव को प्रभावक बनाने के लिये वे नई नई योजनाए सोचते रहते है। सारा समाज एक ध्वज के नीचे एकत्रित हो इस भावना से आपने पचरगी ध्वजा का रूप प्रचारित किया है और प्रसन्नता है कि उसे जैन समाज के सब अन्तर्भेदो ने स्वीकृत कर लिया है।

मुनि श्री की बद्रीनाथ यात्रा बडी प्रभावक रही है और उससे यह तथ्य सामने आ चुका है कि बद्रीनाथ की प्रतिमा जैन प्रतिमा है। इसी प्रकार एक यात्रा यदि कैलाश की सभव हो सकती तो उसके विषय मे चली आ रही भ्रान्त धारणाओ का निरसन हो जाता।

पूज्य मुनिराज जन्मना कन्नडभाषी हैं पर हिन्दी पर आपका पूर्ण अधिकार है। आपकी वाणी, भाषा और लेख से कोई यह अदाज नही कर सकता कि आप जन्मता हिन्दी भाषी नही हैं।

जाति का आश्रय-स्थान शरीर है और आत्मा का लौकिक अधिष्ठान भी देह ही है; इसलिए जो जाति-आग्रही है, वे अपने मे जात्यभिमान रखने से भव-मुक्त नहीं होते।

श्री विद्यानन्द जी का
अभिनन्दन

(श्री शोभनाथ पाठक, मेघनगर)

विश्व-धर्म के प्रवल प्रणेता जन जन मुख दाता ।
नत हम अभिनन्दन करते हैं, हे युग निर्माता ॥

अर्द्धशती पर श्रद्धा गागर छलक छलक जाये ।
हो दीर्घायु, असीम ज्ञान से जग को हर्षाये ॥
श्रमण दूत अवधूत दिगम्बर शम दम अपनाये ।
विद्यानन्द विशाल हृदय, हम आक नही पाये ॥
भौतिकता मे भूले भटके जन जन के त्राता ।
नत हम अभिनन्दन करते हैं, हे युग निर्माता ॥

पाच महाव्रत सम्बल से सवरे धरती सारी ।
सुख समस्टि के स्रोत, बने हर मानव उपकारी ॥
अणुभय से आकुल अतस की व्यथा-कथा न्यारी ।
सत्य अहिसा सुधा-धार से सीचे जग क्यारी ।
मुनिश्री समवशरण से हे सुख सागर उफनाता ।
नत हम अभिनन्दन करते है, हे युग निर्माता ॥

जीवन भर जग मगल का जिसने व्रत अटल लिया ।
गरल पान कर स्वय, सुधा का युग को स्रोत दिया ।
अपरिग्रह - अस्तेय - अहिसा नव निर्माण किया ।
ब्रह्मचर्य नर देह धरे मानो अवतार लिया ।
दिव्य दिगम्बर मुनिवर का दर्शन उछाह लाता ।
नत हम अभिनन्दन करते हैं हे युग निर्माता ॥

विदिताशेषशास्त्रोऽपि न जाग्रदपि मुच्यये ।
देहात्म दृष्टिर्ज्ञातात्मा सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ॥

विरल एवं महान व्यक्तित्व
मुनि विद्यानन्द जी

(श्री अगर चन्द नाहटा, बीकानेर)

दिगम्बर मुनि जीवन की साधना वास्तव मे बहुत ही कठिन है। ज्ञान और चारित्र दोनों का सुमेल तो और भी कठिन है। पूज्य मुनि श्री विद्यानन्द जी मे यह दोनो विशिष्ठ गुण सहज ही विशिष्ठ रूप मे पाये जाते हैं। अत उनके प्रति मानव मात्र का अधिकाधिक आकर्षण स्वाभाविक ही है।

मैंने सबसे पहले उनके दर्शन जयपुर मे किये। स्वर्गीय प० चैनसुखदास से मैं मिलने गया था और वे मुनि श्री के व्याख्यान मे जाने की तैयारी मे थे। इसलिए मुझे भी साथ चलने को कहा। मैंने इससे पहले उनके प्रवचन की विशाल जनसख्या और वाणी के प्रभाव के सबन्ध मे पढा व सुना था पर उनके दर्शन और प्रवचन श्रवण का सुअवसर नही मिला था। अत मैं भी पडित जी के साथ प्रवचन सभा मे जा पहुंचा। पडित जी ने मेरा मुनि जी से परिचय कराया। मुनि जी ने मुझे भी बोलने को कहा। उनको सरलता आत्मीयता और गुणग्राहकता से मैं बहुत प्रभावित हुआ। उनका प्रवचन सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। वह मधुर स्मृति आज भो ज्यो की त्यो बनी हुई है।

जयपुर मे तो विशेष बातचीत नही हो सकी और उसके बाद मे दो बार दिल्ली मे उनसे और मिला। उनके पाण्डित्य और उदार एव विशाल हृदयता तथा कर्मठता एव शुभ भावना से और भी अधिक प्रभावित हुआ। इसी बीच कुछ ग्रथ पढने को मिले। उनकी वक्तृत्व कला के साथ-साथ लेखनकला का सुमेल भी मुझे आकर्षक लगा। ज्यो ज्यो उनके विशिष्ठ कार्यों, योजनाओ और भावनाओ का परिचय मिलता गया त्यो त्यो उनके विरल एव महान व्यक्तित्व की ओर मेरी श्रद्धा बढती गयी।

मैंने अपने दो लेखो मे वर्तमान के जिन जैन आचार्यों, एव मुनियो से मैं बहुत प्रभावित हुआ हू उनका नामोल्लेख किया है, उनमे पूज्य मुनि विद्यानन्द जी का भी सादर नामोल्लेख है। उनकी वाणी मे अदभुत प्रभाव है। लेखनी मे बडा बल है। उनका जीवन बडा सरल एव पवित्र है। साम्प्रदायिक भेदभावो से वे ऊंचे उठे हुए हैं। गुणियो एव विद्वानो के प्रति उनका बड़ा सद्भाव है। जैन समाज को उनसे बड़ी आशा हैं। मेरी सादर श्रद्धांजलि उनके चरणो मे समर्पित है।

देह में आत्मदृष्टि रखने वाला यदि अशेष शास्त्रों का ज्ञाता भी है तो भी मुक्त नहीं हो सकता; किन्तु आत्मज्ञ यदि सुप्त है, तो उन्मत्त है तो भी मुक्त हो जाता है।
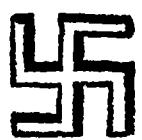
अभिनन्दनीय मुनिश्री

डा० ज्योति प्रसाद जैन, लखनऊ

प्रत्येक युग की कुछ विशेपताए होती हैं—वर्तमान युग की भी अपनी विशेषताये हैं। गत लगभग दो सौ वर्षों मे अनेक सामाजिक, आर्थिक," राजनैतिक एव वैचारिक क्रान्तियो और आन्दोलनो के फलस्वरूप मानव जीवन मे भारी परिवर्तन हुए हैं। वैज्ञानिक अनुसन्धानो और यान्त्रिक आविष्कारो ने मनुष्य की भौतिक सुख-सुविधाओ मे द्रुतवेग से वृद्धि की है। भौतिक सभ्यता का अद्भुत विकास हुआ है। इसके परिणाम स्वरूप कई महाविनाशकारी महायुद्ध भी हुए और जीवन सघर्ष तथा राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय द्वन्द्व ससार पर छा गये हैं। जीवन मूल्य बदल गये है। मनुष्य भौतिकता का एव धन का दास होता जा रहा है और उसके विपरीत आध्यात्मिकता, धर्मभाव एव नैतिकता से दूर होता जा रहा है। अत सर्वत्र आपाधापी, ईर्ष्या-द्वेष मद-मात्सर्य विषय लोलुपता एव अशान्ति का बोलबाला है।

ऐसी स्थिति मे, स्वाभाविक है कि अनेक महात्मा, मनीषी, सुधारक और धर्मोपदेष्टा भी यत्र-तत्र उदय मे आ रहे हैं। समान परिस्थितियो मे ऐसा पहिले भी कई बार हुआ है। भगवान महावीर के समय मे भी लगभग ऐसी ही स्थिति थी। अद्वितीय महामानवो का वह अद्वितीय युग था। उसके उपरान्त भी प्राय पाच-पाच शतको के अन्तराल से ऐसा होता रहा है—जैन परम्परा मे इन युगो को उपकल्कि और कल्कि युगो की सज्ञा दी गई है, जब धार्मिकता एव नैतिकता का अत्यधिक ह्रास हुआ और उससे मानव जाति को उबारने के लिये सन्तो और महात्माओ का भी बहुसख्या में उदय हुआ। यह एक ऐतिहासिक सयोग जैसा है।

आधुनिक युग मे भी लगभग सौ वर्ष पूर्व भारतवर्ष मे पुनरुत्थान की, ज्ञान जागृति, समाज सुधार और राष्ट्रीय भावना की अप्रतिम लहर

स्वस्मिन् सदभिलाषित्वादभीष्टज्ञापकत्वतः।
स्वय हितप्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मनः॥

आई थी। उसके परिणाम स्वरूप देश ने राजनैतिक स्वतन्त्रता भी प्राप्त की और शिक्षा, सभ्यता तथा कम से कम लौकिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों मे वह अति विकसित पश्चिमी देशों के साथ होड करने की स्थिति मे भी आ गया। किन्तु, साथ ही भौतिकता के विकास और अर्थ प्रधान दृष्टि ने नाना प्रकार के भ्रष्टाचार, अनैतिकता और अशान्ति को भी प्रश्रय दिया। अतएव सर्वत्र यह आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि धर्मभाव की, आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों की पुन स्थापना हो।

ऐसा लगता है कि इसी भावना से प्रेरित होकर आज अनेक सन्त, महात्मा, मनीषी और प्रबुद्ध विचारक उपरोक्त उद्देश्य की सिद्धि मे अपने-अपने ढग पर, सलग्न है। इनमे से अनेक तथाकथित गॉड-मैन (ईश्वरीय पुरुष) भी प्रकाश में आ रहे है जो स्वयं को भगवान, आचार्य, स्वामी जी, इत्यादि नामो से प्रचारित कर रहे हैं, अपने-अपने दल और नवीन सम्प्रदाय बनाकर बहुधा आधुनिक पद्धतियों, वैज्ञानिक साधनों, विज्ञापन विधाओं का भी उन्मुक्त प्रयोग कर रहे हैं। उनमे से कितने और कहाँ तक उपरोक्त उद्देश्यो मे सफल होंगे, या न होंगे, यह तो भविष्य ही बताएगा।

इन नवीन मसीहाओं के अतिरिक्त, जैन आदि परम्परामूलक धर्मों के भी अनेक साधु महात्मा अपनी संस्कृति के अनुरूप उसी सदुद्देश्य की पूर्ति मे संलग्न हैं। स्वय जैन परम्परा के जो वर्तमान चार-पाच सम्प्रदाय हैं उनके समस्त साधु–साध्वियो, त्यागियों एव सुधारक मनीषियो की सख्या दो–अढाई सहस्र के लगभग है। जैन साधु प्राय. त्यागी, तपस्वी, निष्परिग्रही, नि स्वार्थ धर्म और समाज सेवी तथा उच्च आचार-विचार वाले सन्त होते हैं और समाज के आदर एव भक्ति के भाजन होते हैं। इन जैन साधुओ मे भी वर्तमान मे एक दर्जन के लगभग ही ऐसे हैं जो अपनी विद्वत्ता, आकर्षक व्यक्तित्व, उदार दृष्टिकोण, वक्तृत्व एव लेखन क्षमता आदि गुणो के कारण पर्याप्त प्रभावक एव प्रसिद्ध है।

दिगम्बर मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज उक्त प्रभावक जैन सन्तो मे कई दृष्टियो से अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। आकर्षक व्यक्तित्व, गभीर अध्ययन, बहुमुखी प्रतिभा, लेखन पटुत्व, प्रभावपूर्ण वक्तृत्वशक्ति, असाम्प्रदायिक समन्वयी दृष्टि, मधुर व्यवहार और सन्तोचित निस्पृहता, इत्यादि नाना सद्गुणों ने मिलकर सोने मे सुगन्ध का काम किया है। कल्पना, विचार प्रवणता, आविष्कारक बुद्धि और एक अनोखी सूझ-बूझ का अद्भुत मिश्रण है। अपने विचारो का प्रचार करने और उन्हें कार्यान्वित करने का उनका उत्साह, लगन और एक प्रकार की सुष्ठु छटपटाहट स्पृहणीय है। वह स्वय विद्वान हैं अतएव विद्वानो का उचित सम्मान और प्रतिष्ठा समाज में हो इसके लिये भी सदैव प्रयत्नशील रहते हैं।

उनकी एक उक्ति, जो मुझे बहुत प्रिय लगी, वह है—'धन्य, धन्य आलोचना, निर्मल करे

आत्मा में आत्महित की सदाभिलाषा होने से, अभीष्ट ज्ञापकता नियमन होने से तथा स्वयं के हित में प्रयोक्ता होने से आत्मा ही आत्मा का गुरु है।

स्वभाव । इसी प्रसग मे उन्होने एक बार लिखा था—

"जैनो तपस्या के समान आलोचक का धर्म स्वैराचार विरोधी होता है (चित्र जैनी तपस्या हि स्वैराचार-विरोधिनी) । वह समीक्षा के सिद्धान्तो के प्रति पूर्ण अहिसक रहकर निकषोपल पर सुवर्ण के समान अपनी आगमचक्षु बुद्धि के शाणोपल पर वस्तु-सत्य को परखता है । ऐसा आलोचक अपने व्यवसाय के प्रति परम धार्मिक और विश्वस्त होता है । पदार्थ, व्यक्ति, शब्द और अर्थ उसके समीप आकर धन्य हो उठते हैं ।"

साधुत्व के आदर्श के विषय मे महाराज श्री की जो सटीक धारणा है वह उनके निम्नोक्त उद्गार से प्रगट है—

"दिगम्बर मुनिवेष विश्व मे एकमात्र वीतराग-मुद्राकित वेष है । आज के प्रवुद्धयुग मे जहा श्रद्धा विवेक और बुद्धि की अनुपादिका है, विश्व के लोग बडी सूक्ष्म दृष्टि से देखते हैं । यदि अणुमात्र भी शिथिलाचार लोकदृष्टि मे आया तो यह मुनिपद के लिए ही अपवाद नही होगा, अपितु सनातन अहिसा परम्परा को भी (लोग) दोष लगाते नही चूकेगे । ज्ञान और तप के मार्ग पर आत्म साधना करने वाले निर्ग्रन्थो को प्रति-क्षण अग्नि परीक्षा मे अपने को समझना चाहिए, और जो हमारी ज्ञात-अज्ञात भूलो को बताते हैं, उन आलोचको को शुभाशीर्वाद देना चाहिए ।"

जैन सन्तोचित उपरोक्त महत्वपूर्ण उद्बोधन केवल साधुवर्ग का ही नही, वरन् सभ्य मनुष्य मात्र का पथ प्रदर्शक एव स्व-पर कल्याणकर है । वर्तमान विश्व को, इस देश को और इस समाज को उक्त कसौटी पर खरे उतरने वाले कदाग्रह-विहीन, निस्पृह लोकोन्नायक सन्तो की ही आवश्यकता है ।

महाराज श्री की इस पचास वी जन्मजयन्ती के शुभोपलक्ष्य मे उनके चरणो मे अपनी विनीत श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए हमारी यह हार्दिक भावना है कि वे जिनोक्त आदर्श निर्ग्रन्थ सन्त के रूप मे चिरकाल पर्यन्त स्व पर कल्याण करते रहे ।

'इतीद' भावयेन्नित्यमवाचागोचरं पदम् ।
स्वत एव तदाप्नोति यतो नावर्तते पुनः ।।
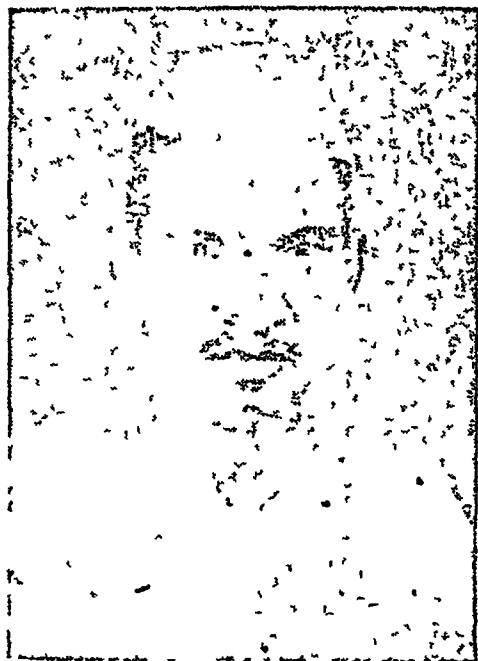
ऋषिकेश में संतों के बीच मुनि विद्यानन्द

एक संस्मरण

स्व० श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी

हरिद्वार मे गगा तट पर विहार करते हुए मुनि विद्यानन्दजी ने पर्वत की उच्च चोटी पर स्थित चण्डी मन्दिर को देखकर कहा कि यहा तो इतनी ऊचाई पर भी यह मनोरम दृश्य दिखाई पड रहा है, मन चाहता है कि इस प्रकार के प्राकृतिक दृश्यो का अधिक से अधिक आनन्द लूं।

उन्हे जब गगा की मुख्य धारा से निकली गग नहर का अवलोकन कराया तो वे हर्ष विभोर होकर कहने लगे कि यह विशाल नदी मेरे मन को मोहित कर रही है, गगा की महिमा मैने बहुत सुनी, परन्तु पर्वतो के मध्य उसके दर्शन करने का मुझे आज यह सौभाग्य प्राप्त हुआ।

गंगा पार जाने वाले नौका मार्ग के समीप दो तीन साधुओ से देर तक वार्तालाप करते रहे, एक महात्मा ने जब उनसे पूछा कि आपका यह शरीर कहा से आ रहा है तो उन्होने कहा, "अपने देश भारत के अनेक स्थानो से। यह सारा देश अपना ही तो है" महात्मा ने प्रसग बदलते हुए मुनि श्री को बताया कि जहा आप बैठे हैं यहा असली गगा बह रही है और जहा हरिद्वार मे आप ठहरे हैं वहा असली नही। इस पर मुनि श्री ने कहा, "मुझे तो उन दोनो के जल में असली और नकली का कोई भेद दिखाई नही दे रहा।" मुनि श्री प्रवचन के उपरान्त हर की पौडी के सामने की ओर से जाते हुए दो तीन महात्माओ से वार्तालाप करते हुए कहने लगे, "महाराज, मेरे धर्म मे तो मानव सेवा का बडा ऊचा स्थान है" यह बात उस समय चली जब महात्माओ ने ससार को असार बताते हुए वैराग्य की बाते कही और मुनि श्री ने कर्मयोग का समर्थन किया।

मुनि विद्यानन्दजी को हरिद्वार के एक कलाकार ने कई सुन्दर चित्र भेट किये। एक व्यक्ति

वाणी से अगोचर (अप्रतिपाद्य) इस आत्मपद को उक्त प्रकार से अनुभव करना चाहिये ऐसा करने से आत्मा से ही उस पद की प्राप्ति हो जाती है, जहा से पुनः लौटकर संसार में नहीं आना पड़ता।

ने उनके स्थान पर आकर उनकी मुद्रा का उनके सम्मुख कोयले से एक सुन्दर चित्र बना दिया। उसकी इस कला पर मुग्ध होते हुए उन्होने कहा कि यह कलाकार अपने निर्वाह के लिए इधर उधर भटकता फिरे यह कोई अच्छी बात नही। ऐसे कलाकारो को तो सरकार को सरक्षण देना चाहिए।

ऋषिकेश के रमणीक दृश्यो का अवलोकन करते हुए उन्होने कहा—सचमुच यह तो किसी दिन भारत का तपोवन ही रहा होगा। उन्हे जब बताया गया कि यहा स्वामी रामतीर्थ ने वर्षो साधना की थी और फिर वे टिहरी नरेश के विशेष आग्रह पर टिहरी चले गये थे तो वे इस तपोस्थली से और भी अधिक प्रभावित हुए और मुस्कराते हुए पूछने लगे, "और किन-किन महापुरुषो का इससे सम्बध है ?"

इसके उत्तर मे जब उन्हे बताया गया कि महाभारत युद्ध की समाप्ति पर इसी तपोस्थली के बीच से पाडव स्वर्गारोहण के लिए गये थे तो वे पुराने इतिहास की इन घटनाओ मे और भी अधिक रुचि लेने लगे।

भारत के इससे भी और अधिक प्राचीन इतिहास की चर्चा भी चली और मुनि श्री ने तपस्वी भगीरथ के गगा लाने मे बडी रुचि ली। वे पूछने लगे कि गगा का कहाँ से उद्गम है। उन्हे बताया गया कि लगभग १८ हजार फुट की ऊचाई से गगा गोमुख से निकली है और वहा से निकलने पर लाखो नर नारी बडी श्रद्धा के साथ गगोत्री पहुचकर गगा के दर्शन करते हैं। वहा गगा को सभी व्यक्ति मा भागीरथी पुकारते हैं।

उन्होने तपस्वी भगीरथ के पुरुषार्थ की बडी प्रशसा की और कहा कि उन्होने सारे विश्व मे गगा के नाम को उज्ज्वल कर दिया। जब उनसे कहा गया कि जैन धर्मावलम्बी तो गगा के प्रति कोई श्रद्धा नही रखते तो उन्होने कहा, "नही, ऐसी बात नही, हमारे जैन शास्त्रो मे गगा जल को बडा पवित्र माना है।"

मुनि श्री ने सरकार के दो विशेष सस्थानो हैवी इलैक्ट्रिकल्स हरिद्वार तथा एटीबायोटिक्स, ऋषिकेश के कर्मचारियो, अधिकारियो एव कुछ विशिष्ट व्यक्तियो के बीच भी अपने विचार व्यक्त किये। उन्होने कर्तव्यपरायणता तथा अधिकार का तुलनात्मक विवेचन करते हुए लोकमान्य तिलक के कर्मयोग का समर्थन किया और उन्हे प्रेरणा की कि इन सस्थानो के काम को आप सरकार का न समझकर राष्ट्र का समझे और अपनी कर्तव्य निष्ठा मे किसी प्रकार की कमी न आने दे।

उन्होने इस सम्बन्ध मे यहा तक कहा कि जो व्यक्ति निश्चित समय से कम घण्टे काम करते हैं वे राष्ट्रीय समय को चोरी करते हैं, यदि प्रत्येक व्यक्ति पूरे समय तक काम करे तो निश्चय ही हमारे देश मे निराशा न रहने पाये। उन्होने विश्वास प्रकट किया कि इस समय देश मे जो निराशा का वातावरण बना हुआ है यह कुछ वर्षों के बाद नही रहने पायेगा।

मुक्त्वा परत्र पर बुद्धिमहंधिय च संसार दुःखजननी जननादविमुक्तः।
ज्योतिर्मय सुखमुपैति परात्मनिष्ठ स्तन्मार्ग मेतदधिगम्य समाधितन्त्रम्॥

卐

हरिद्वार मे
हर की
पौडी पर

卐
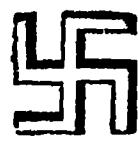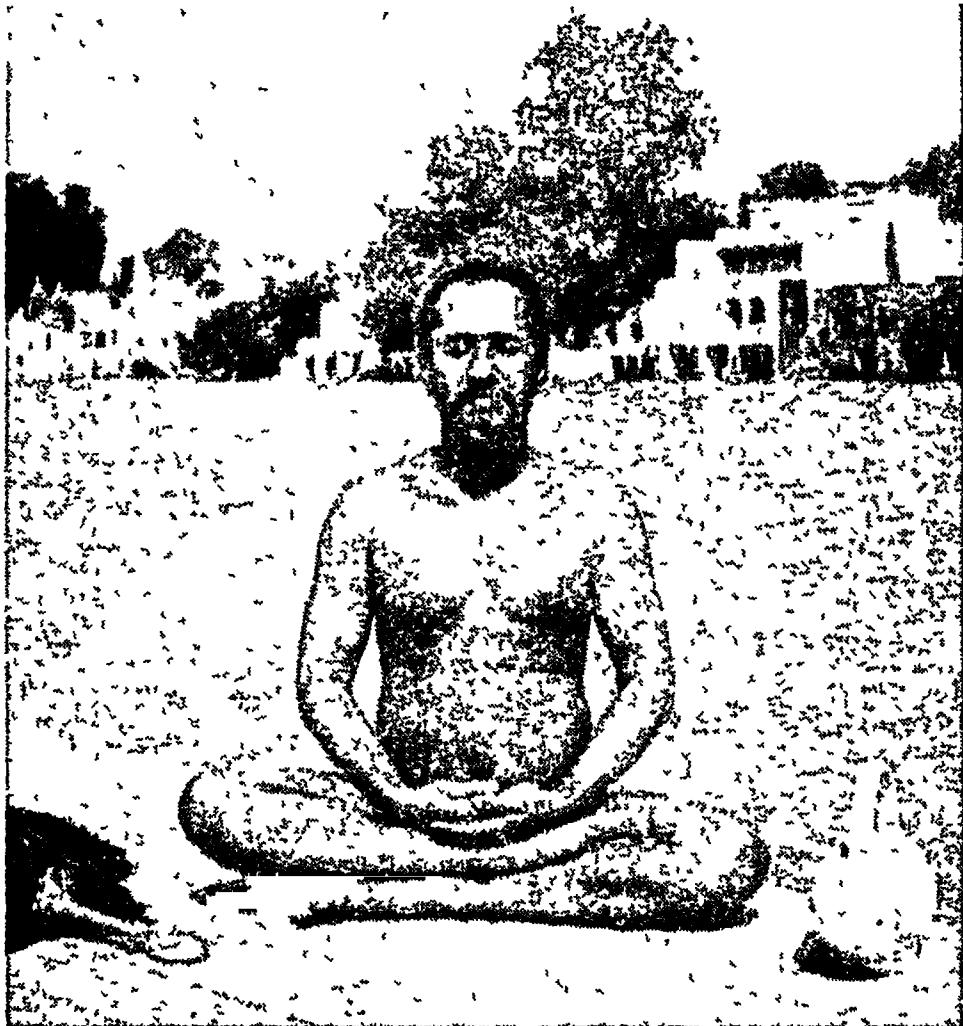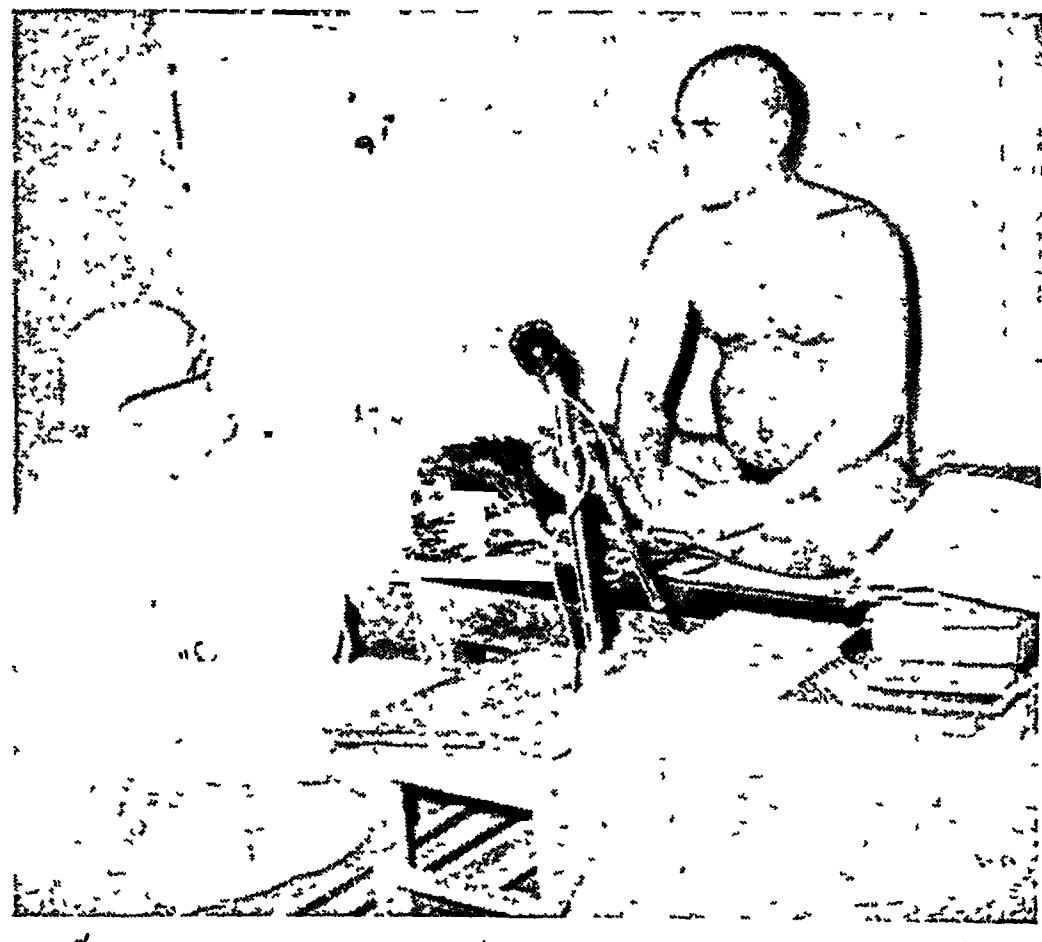
आकाशवाणी के चीफ प्रोड्यूसर आचार्य कैलाश चन्द देव वृहस्पति मुनिश्री से भेट वार्ता रिकार्डिंग क त हुए।
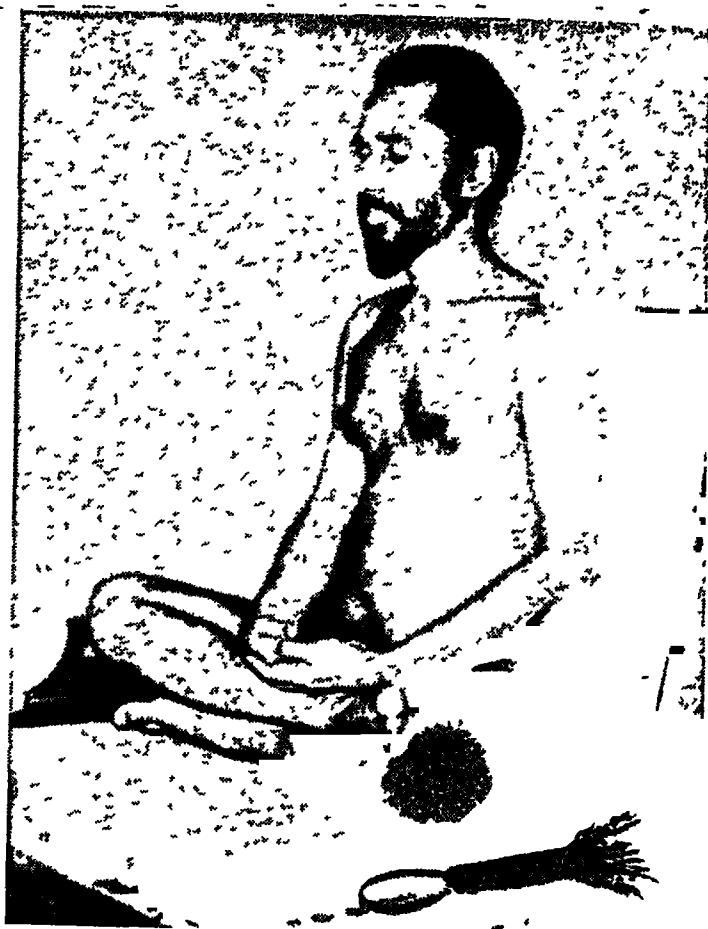
मुनि विद्यानन्द जी

दीक्षा के समय
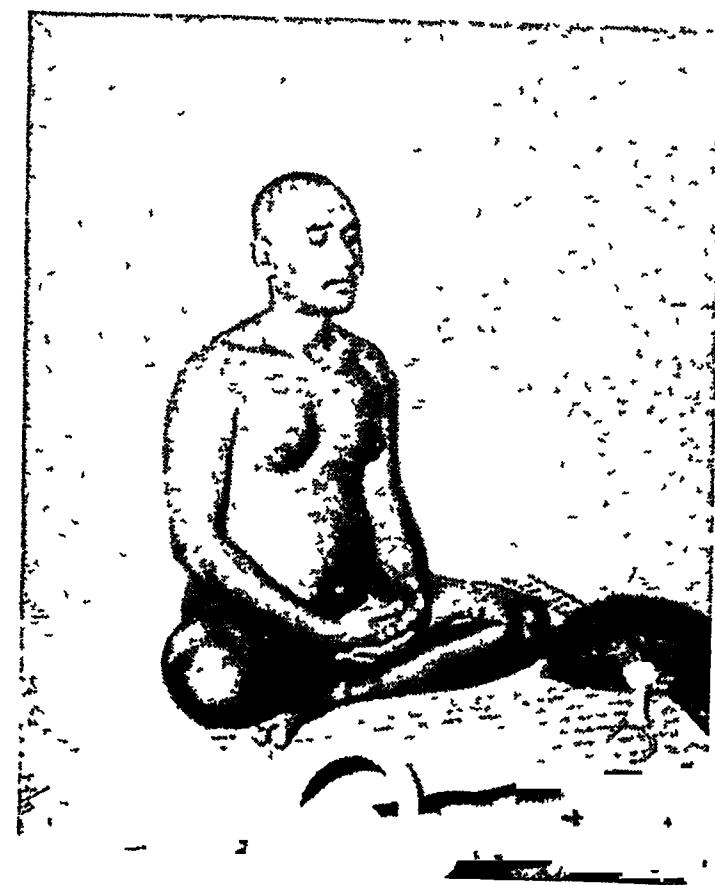
दीक्षा के ५ वर्ष बाद
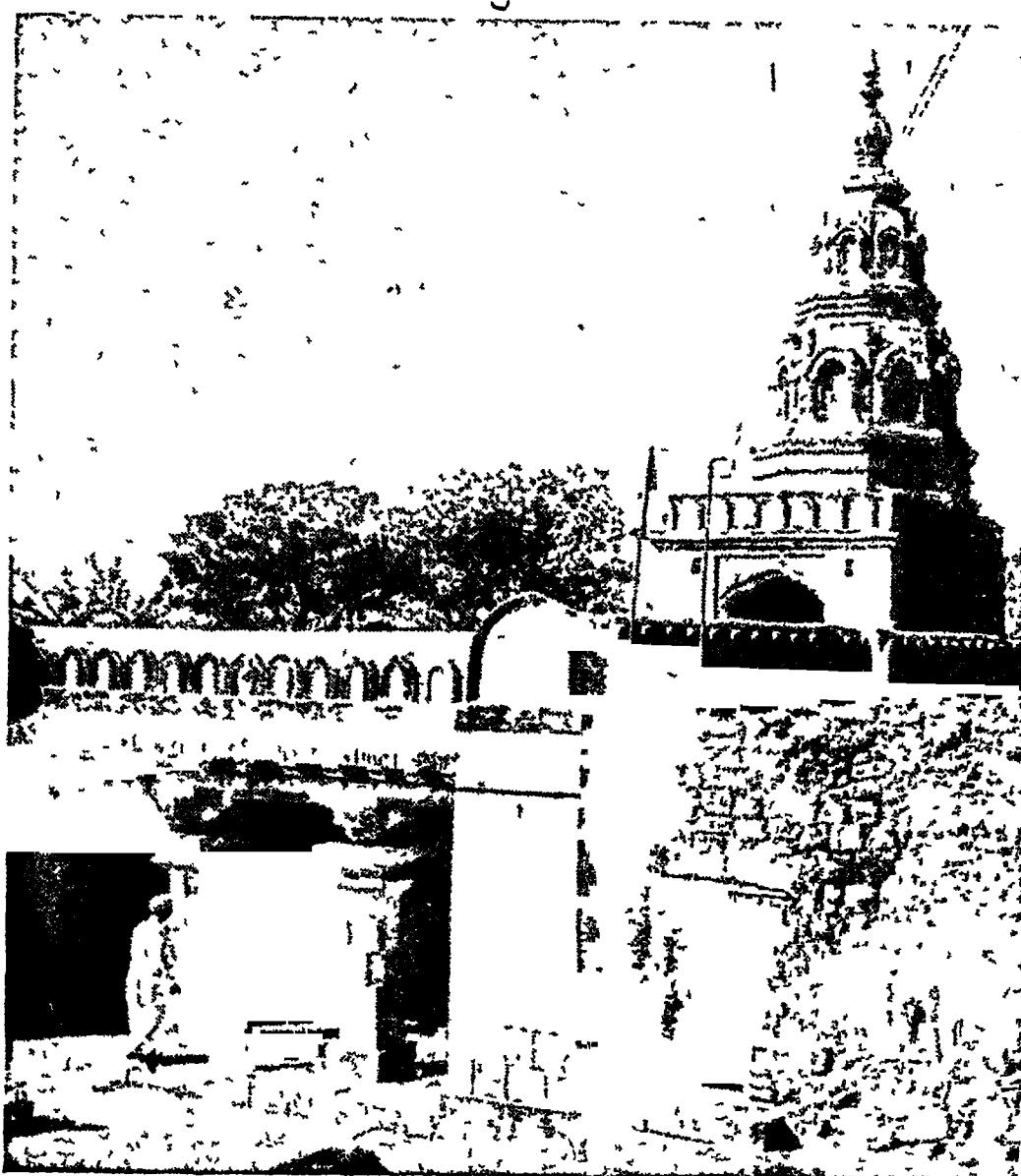
श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर शेडवाल
जहां बालक सुरेन्द्र (आज के विद्यानन्द मुनि) श्रावक अवस्था मे
जिन पूजाकिया करते थे।

ज्वालापुर को प्रवचन सभा मे पं० केलाश चन्द्र जेन मगलाचरण कर रहे हैं।

दिल्लो को सभा मे अपने गुरू आचार्य देशभूपण जी महाराज के साथ

प्रवचन देते हुए

मुनि विद्यानन्द जी उज्जेन मे

समवशरण का अधिष्ठाता देवता

डा० गोकुलचन्द्र जैन, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

समवशरण शब्द आपका परिचित है। तीर्थंकरों की धर्मसभा का नाम समवशरण है। जहां समवशरण लगता अपार जनसमूह उमड पडता। कहते हैं देव, मनुष्य, पशु सभी समवशरण सभा मे पहुंचते हैं, बिना वैर विरोध के। किसी तरह का भेद नही। सब शान्त धर्मपिपासु और तीर्थकरों के उपदेश सबकी समझ मे आ जाते हैं। कैसी अद्भुत बात है। सारे मनुष्य भी एक भाषाभाषी नही। पशुओ की बात तो बहुत दूर है। फिर भी वे सब धर्मोपदेश समझ लेते हैं।

बात विचित्र अवश्य लगती है, पर है सत्य। मुनि विद्यानन्द जी की धर्म सभा में आप गए हो तो आपको यह बात जल्दी समझ मे आ जायगी। जहा उनकी धर्मसभा होती है जन-समूह उमड पडता है। न ऊच-नीच का भेद, न छोटे-बडे का भेद, न स्त्री-पुरुष का भेद, न बच्चे-बूढे का भेद। और मजा यह कि सब स्वय नियत्रित, स्वयं अनुशासित। शान्त, पूर्ण शात। इतनी शाति होती है उनकी सभा मे कि सुई गिरे तो खन की आवाज सुनाई दे जाए।

कहते है तीर्थंकर बोलते नही, उनकी दिव्य ध्वनि खिरती है और सब अपनी-अपनी भाषा मे समझ लेते हैं। जिन्होने मुनि विद्यानन्द जी के धर्मोपदेश सुने हैं उन्हे यह बात अजीब नही लगेगी। असत्य नहीं लगेगी। मुनि जी के धर्मोपदेश सबकी समझ मे आ जाते हैं। उनके मात्र मुख से नही रोम-रोम से उपदेश खिरते हैं। जिसने उन्हे देख लिया वह धन्य हो गया।

आओ मुनिश्री के जन्म दिन पर हम सब कामना करे कि वे तीर्थंकर बने और सारे ससार को मोक्ष का मार्ग दिखाए।

आत्मज्ञानात् परं कार्यं न बुद्धौ धारयेत् चिरम्।
कुर्यादर्थवशात् किंचिद वाक्काभ्यामतत्पर॰॥

आत्मज्ञान से भिन्न किसी कार्य को देर तक बुद्धि में नहीं रखे, प्रयोजनवश यदि आत्मज्ञान से अन्यत्र उपयोग लगाना आवश्यक प्रतीत हो, तो उन कार्यों में उदासीनता से कुछ अंश में वाणी और शरीर को लगाये; तत्पर न हो उस आत्मभिन्न कार्य में, अत्यन्त मग्न न हो।

संसार दुःखों को उत्पन्न करने वाली परपदार्थों में अहबुद्धि का परित्याग कर, जन्म-मरण से विमुक्त हुआ पुरुष परम आत्मनिष्ठा से इस समाधितन्त्रोक्त मार्ग का आश्रय लेकर आत्मसुख को प्राप्त है।

विश्वधर्म की स्वाँति-सुधा के चातक-चन्द्र प्रणाम तुम्हें !

कविवर घासीराम जैन, 'चन्द्र'

आत्मजयी गौरव गरिमा के पुज-पुनीत प्रणाम तुम्हे !
ज्ञानजयी जय जिनवाणी के पावन गीत प्रणाम तुम्हे !
कर्मजयी जय भरम-तिमिर के नाशक-दीप प्रणाम तुम्हे !
मोहजयी दुर्द्धतप-धारक त्याग महीप प्रणाम तुम्हे !
क्रोधजयी जय क्षमा धर्म के धारक धीर प्रणाम तुम्हे !
मानजयी जयमद-मत्सर के मारक वीर प्रणाम तुम्हे !
माया के गढ चूर धन्य मार्दव धन धार प्रणाम तुम्हे !
लोभ कषाय निवार शाति के पारावार प्रणाम तुम्हे !
कामजयी जयशील-शिरोमणि नतमस्तक ससार तुम्हे !
सत्य शिरोमणि शाति सुधा के निर्मल-नीर प्रणाम तुम्हे !
तृण-कचन समभाव एकसम मदिर, महल, मसान तुम्हे !
धन्य परोषह जयीमोह-सहारक-मत्र प्रणाम तुम्हे !
धर्म धुरधर धीर धरा के धन्य सपूत प्रणाम तुम्हे !
पच महाव्रत पावन पालक जय अवधूत प्रणाम तुम्हे !
भेद ज्ञान के भाषक मुनिवर विद्यानद प्रणाम तुम्हे !
हरण तिमिर भ्रम-मूल मुक्ति के वाहक दूत प्रणाम तुम्हे !
धन्य दिगम्बर धन्य चिदम्बर जय निर्ग्रंथ प्रणाम तुम्हे !
मित्र शत्रु समभाव भवोदधि-तारक-सत प्रणाम नुम्हे !
ज्ञानामृत-सागर गुणमणि जय मान्य महत प्रणाम तुम्हे !
त्याग तपोधन तन्मयतामय शिवपुर-पथ प्रणाम तुम्हे !
जनमन हर्षक जन जन नायक भवदधि तार प्रणाम तुम्हे !
विविध भेद भाषा परिभाषक गुण आगार प्रणाम तुम्हे !
तन धन धाम विमोह-विचारक जय निष्काम प्रणाम तुम्हे !
विश्व धर्म की स्वाति-सुधा के चातक-'चन्द्र' प्रणाम तुम्हे !

वासनामात्रमेवैतत् सुख दुख च देहिनाम् ।
तथा ह्य्ुद्वेजयन्त्येते भोगा रोगा इवापदि ॥

ग्रन्थ ग्रन्थ की गरिमा निर्ग्रंथ पथ के नायक
जनवंद्य मुनिश्री विद्यानन्द जी

लेखक—डा० महेन्द्र सागर प्रचण्डिया, एम. ए., पी-एच. डी, साहित्यालकार
(सहायक संचालक : अखिल विश्व जैन मिशन)

किसी भी जन समुदाय और समाज की आचार-सहिता से अनुप्राणित जीवन-चर्या को संभालने का दायित्व तत्कालीन सन्तो पर निर्भर करता है। आचार गिरा कि समाज का सगठन बिखरने लगता है। आज के सामाजिक सगठन का नैतिक स्खलन हो रहा है और वह सहार के समुद्रतट पर खडा है। सतुलन बिगडा कि उसका विनाश सुनिश्चित है। अपने-अपने समुदाय के सतुलन बनाए रखने के लिये अनेक सन्तो के प्रयास हो रहे हैं। इसी परम्परा मे विश्व धर्म सप्रेरक जनवंद्य पूज्य मुनिश्री विद्यानन्द जी का स्थान बडे महत्व का है।

उनका कोई घेरा नही, घनेरे उनसे घिरे हैं। उनका कोई मार्ग नही, वे स्वय सन्मार्ग हैं। वे सचमुच जीवित हैं अस्तु उनमे प्राणोमात्र को जीने देने के लिए समभाव भरे हैं। उन्हे पाकर सारे नापाक पाक बन जाते हैं।

आज से लगभग दो वर्ष पूर्व जब सारा देश भगवान महावीर का निर्वाणोत्सव दीपावलि पर्व के रूप मे मना रहा था और सयोग से मुनिश्री श्री महावीर जी क्षेत्र मे वर्षा-वास के प्रवास मे थे, क्षेत्राधिकारियो के आह्वान पर मुझे दीपावलि के पर्व पर मुनिराज के शुभदर्शन लाभ का सुयोग मिला था। यद्यपि उस समय मैं शरीर से त्रस्त किन्तु मन से मस्त था और इस सुयोग से मेरे हर्ष का दायरा दरिया मे बदल गया था।

निर्वाणोत्सव पर आयोजित विशाल जनसभा मे मुझे मुनिश्री के दर्शन लाभ हुए। नेत्रादिक बर्हि इन्द्रियो द्वारा आत्म प्रकाशन होता है और वाणी चरित्र की प्रतिध्वनि होती है। मुनिश्री की शारीरिक सुघरता उनको दिव्यात्मा का परिचायक है।

मुझे भी अपने विचार व्यक्त करने का अवसर मिला। जो कुछ कह सका, उसके मूल में मुनिश्री की अमूल्य प्रेरणा थी। मुनिश्री के प्रवचन हुए। उनकी वाणी वस्तुतः जिन वाणी है। वे विचारो के विश्व विद्यालय हैं। ग्रंथ-ग्रथ मे शव्दायित भ० महावीर की महिमा मुनिश्री के स्वरो मे सहज ही मे ध्वन्यायित हो गयी। श्रोता धन्य हो गए और अनन्य पागए।

अपरान्ह मे वैठक में चर्चा हुई। कितनी गहरी पैठ है, कितना गम्भीर अध्ययन है और है गजब की चरित्र-साधना। उनका चिन्तन वस्तुत. चिन्तामणि है। उनकी उपस्थिति में सारे विरोध

देहधारियों को सुख तथा दुःख की अनुभूति वासनाजन्य है। वासना ही सुखात्मक तथा दुःखात्मक रूप में अनुभूत हो रही है। उन्हें भोग उसी प्रकार उद्विग्न करते रहते हैं, जैसे आपत्तिकाल में रोग दुःखदायी हो उठते हैं।

अनुरोध मे बदल जाते हैं। वे विमर्श के विध्याचल हैं और हर्ष के हिमालय हैं। महान हैं।

मुनिश्री पदयात्री हैं। मथुरा से मेरठ पद-यात्रा मे अलीगढ प्रवास की अनुमति प्राप्त कर हम गर्वित और गौरवान्वित हुए थे। अलीगढ प्रवास मे जिनवाणी की अच्छी प्रभावना हुई थी विद्वानो की विदग्ध गोष्ठिया, भक्तो की भीड और जनसाधारण मे मुनि दर्शन की असाधारण अधीरता वस्तुतः उल्लेखनीय है। मुनिश्री त्याग की उज्ज्वलता हैं। साधना की तेजस्विता है। सत्य की शक्ति हैं। अनेकान्त की अप्रतिम अभि-व्यक्ति हैं। वे चरित्र चक्रवर्ती हैं। उनके सान्निध्य मे आकर व्यक्ति अपने सम्पूर्ण आग्रह सहज मे ही छोड देता है और आनदित हो जाता है। मुनि श्री साकार अनन्वय अलकार हैं। अन्त मे ऐसे मुनिराज को मेरे अनन्त नमस्कार हैं।

मुनिवर

मुनिवर श्रेष्ठ तिहारो नाम।
वन्दन करते आज सकल जन, सकल लोक अभिराम।
पुण्य प्रभा की मादकता को, क्योकर भूलूं स्वामी।
गति देती जीवन धारा को, सत्य सुपथ अविराम।
मुनिवर श्रेष्ठ तिहारो नाम।
मोहमयी तमसा रजनी मे, विह्वल हो जे भूले।
मन,बुधि, चित, अहमण्य समर्पित, शरण लह्यो विश्राम।
मुनिवर श्रेष्ठ तिहारो नाम।
हिय पै हारे को हक दीन्हो, हे करुणामय ज्ञानी।
मृदुवाणी पीयूष निचोर्यो, पूर्ण करे मन काम।
मुनिवर श्रेष्ठ तिहारो नाम।
तेरी वाणी के गगा-जल, अवगाहन जो कीन्हो।
'आदित' की पूजी अभिलाषा, बुद्धि विषय उपराम।
मुनिवर श्रेष्ठ तिहारो नाम।

—आदित्य श्रीवास्तव

वपुर्गृह धन द्वाराः पुत्रा मित्राणि शत्रवः।
सर्वथान्यस्वभावानि मूढः स्वानि प्रपद्यते ॥

महातपस्वी गृद्धपिच्छाचार्य ने आत्मा को शुद्ध एवं अकलङ्क बनाने के लिए तप के महत्व और आवश्यकता पर बल देते हुए बारह तपों का विशेष तथा विस्तृत निरूपण किया है। इन तपों मे एक वैयावृत्त्य तप है, जो दश प्रकार के निर्ग्रन्थों की परिचर्या द्वारा सम्पाद्य है। दश निर्ग्रन्थो मे जहां आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, सघ और साधु इन नौ प्रकार के मुनियो की वैयावृत्त्य का उल्लेख है वहा मनोज्ञ मुनियो के वैयावृत्त्य का भी निर्देश है। तत्त्वार्थसूत्र के व्याख्याकारो ने इन दशो प्रकार के निर्गथो की उनके गुण विशेष की दृष्टि से, निर्ग्रन्थत्व समान होते हुए भी, पारस्परिक भेद सूचक परिभाषाए प्रस्तुत की है। इन में 'मनोज्ञ' निर्ग्रन्थ की परिभाषा निम्न प्रकार दी गयी है—

मनोज्ञो ऽभिरूप:।१२। अभिरूपो मनोज्ञ इत्यभिधीयते। सम्मतो वा लोकस्य विद्वत्ता-वक्तृत्व-
महाकुलत्वादिभि ।१३।
अथवा विद्वान वाग्मी महाकुलीन इति यो लोकस्य सम्मत: स मनोज्ञ तस्य ग्रहण प्रवचनस्य लोके गौरवोत्पादन हेतुत्वात ।

तत्त्वार्थ वार्तिक व तत्त्वार्थ वार्तिक भाष्यकार अकलङ्कदेव 'मनोज्ञ' निर्ग्रन्थ की व्याख्या देते हुए कहते हैं कि जो अभिरूप हो उसे मनोज्ञ कहते हैं। अथवा जो विद्वान-विविध विषयो का ज्ञाता, वाग्मी यशस्वी वक्ता और महाकुलीन आदि रूप से लोक मे मान्यता प्राप्त हो उसे मनोज्ञ कहा जाता है, क्योंकि उससे शासन की प्रभावना और गौरव वृद्धि होती है।

आचार्य विद्यानन्द स्वामी ने भी तत्त्वार्थ श्लोक वार्तिक व भाष्य मे अकलङ्क देव द्वारा अभिहित 'मनोज्ञ' निर्ग्रन्थ की परिभाषा को दोहराकर उसका समर्थन किया है।

मुनि विद्यानन्द जी निश्चय ही वर्तमान काल के 'मनोज्ञ' निर्ग्रन्थ हैं। वे विविध विषयो के ज्ञाता हैं, यशस्वी वक्ता हैं, महाकुलीन हैं और सुयोग्य लेखक ग्रन्थकार है। जिन शासन की उनके द्वारा जो आश्चर्यजनक प्रभावना एव गौरव वृद्धि हो

शुभपुरुष :-

मुनिश्री विद्यानन्द जी

डा० दरबारीलाल कोठिया

रही है वह सर्व विश्रुत है। उनकी व्याख्यान सभा-मे सैकडो-हजारो नही, लाखो श्रोता उपस्थित होते और उनके प्रवचन को शान्ति पूर्वक सुनते हैं। उन का ऐसा प्रभावक भाषण होता है कि जैन अजैन, भक्त-अभक्त सभी मुग्ध एव चित्र लिखित की भाति उनके भाषण को सुनते तथा पुन सुनने के लिए उत्सुक रहते है। उनका प्रवचन हित, मित और तथ्य की सीमाओं मे कभी बाहर नहीं जाता तथ्य को वे बडी निर्भीकता और शालीनता से प्रस्तुत करते हैं। इन्दौर, दिल्ली, मेरठ आदि की उनकी व्याख्यान सभाओ को जिन्होंने देखा सुना है वे जानते है कि उनका प्रवचन लाखो श्रोताओ पर जादू जैसा प्रभाव डालता है। ऐसे ही प्रवक्ता

शरीर, घर, धन, स्त्री, पुत्र, मित्र और शत्रु इत्यादि सब अन्य (आत्मभिन्न) स्वभावी हैं; मूढ इन्हें अपना मानता है।

को 'वाग्मी' कहा गया है। आचार्य जिनसेन ने युगप्रवर्त्तक आचार्य समन्तभद्र को उनकी अन्य विशेषताओ के साथ 'वाग्मी' विशेषता का भी सश्रद्ध उल्लेख किया है। 'वाग्मी' का विरुद बहुत कम वक्ताओ को प्राप्त होता है। सौभाग्य की बात है कि यह विरुद आज मुनि श्री को उपलब्ध है।

मुनिजी अध्यात्म शास्त्र के ममज्ञ तो हैं हो, भूगोल इतिहास सगीत, चित्रकला आदि लोकशास्त्र के विविध विषयो के भी विशेपज्ञ हैं। जब मुनिजी क्षुल्लक थे और पार्श्वकीर्ति उनका सुभग नाम था तब आपने जिस ऐतिहासिक 'सम्राट सिकन्दर और कल्याण मुनि' नामक पुस्तक लिखी थी और जिसका सब ओर से स्वागत हुआ था उससे स्पष्ट है कि मुनि श्री भूगोल और इतिहास मे रुचि ही नही रखते, उनके वेत्ता भी हैं। सगीत कला के आण पडित हैं, यह इसीसे विदिन है कि इस विस्मृत और उच्च कोटि की कला को श्रमण भजन प्रचारक सघ जैसी विशिष्ट सस्था को स्थापना द्वारा उसे सप्राण हो नही किया, अपितु उसके द्वारा उसे और उसके विशेपज्ञो तथा उस पर कार्य करने वालो को आपने पुरस्कृत एव सम्मानित कराया है।

भगवान महावीर की २५०० वी निर्वाण शती अगले वर्ष मनायी जाने वाली है। इस अवसर पर विभिन्न योजनाओ को आपके चिन्तन ने जन्म दिया है। भगवान महावीर के जीवन से सम्बन्धित अनेक चित्रो का अन्वेषण और निर्माण आपकी चित्रकला-विशेषज्ञता का सुपरिणाम है। जैन ध्वज का निर्धारण आप की ही अनोखी सूझबूझ है, जिसे जैन परम्परा के सभी वर्गो ने स्वीकार कर लिया है। भ० चन्द्र प्रभुका सप्तमुखो चित्र जैनदर्शन के प्रसिद्ध सप्तभगी-सिद्धान्त का चित्र है। सगम देवके साथ क्रीडारत भगवान महावीर का चित्र राजकुमारावस्था मे ध्यानरत महावीर का चित्र जैसे दुर्लभ चित्र उन्होंने खोज निकाले और समाज के सामने पहली बार आये। अपनी कृति 'तीर्थंकर वर्द्धमान' मे जो महावीर कालीन भारत का मानचित्र दिया है वह उनके भूगोल विज्ञान का प्रदर्शक तो है ही, चित्र विज्ञान का भी प्रकाशक है।

पूज्य विद्यानन्द जो की सर्वतोमुखी प्रतिभा यही तक सीमित न रहो वह आगे भी बढो और उसने उन्हे योग्यतम लेखक तथा ग्रन्थकार भी बना दिया। फलत 'निर्मल आत्मा ही समयसार' 'आध्यात्मिक सूक्तिया' 'अहिंसा-विश्वधर्म' 'तीर्थंकर वर्द्धमान' 'समय का मूल्य' 'पिच्छी कमण्डलु' 'सम्राट सिकन्दर और कल्याणमुनि' जैसी कृतियां उनकी प्रतिभा से प्रसूत होकर 'सर्वजनाय' और 'सर्वहिताय' ख्यात हो चुकी हैं।

इस तरह मुनि विद्यानद जी को जो लोक मान्यता और लोक पूज्यता प्राप्त है उससे उन्हे आचार्य गृद्धपिच्छ के शब्दो और आचार्य अकलकदेव तथा विद्यानन्द की व्याख्याओ मे 'मनोज्ञ-निर्ग्रन्थ' स्पष्टतया कहा जा सकता है।

हम मुनि जी से तभी से परिचित है जब वे क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति थे और चिन्तन लेखन मे सदा

मोहेन सवृत ज्ञान स्वभाव लभते न हि।
मतः पुमान् पदार्थानां यथा मदन कोद्रवैः ॥

निरत थे। दिल्ली के लाल मदिर मे वे विराजमान थे, तब उनसे साक्षात् भेट हुई थी। हमे अपनी 'सम्राट सिकन्दर और कल्याण मुनि' कृति भेट करते हुए मेरी तत्काल प्रकाशित नयी पुस्तक 'न्यायदीपिका' की आपने बार-बार प्रशसा की। क्षुल्लक, मुनि जैसे पूज्य एव उच्च पद पर रहते हुए भी आपकी गुण-ग्राहिता सदा अग्रसर रहती है। विद्वानो के प्रति आपके हृदय मे अगाध मान है। उनकी स्थिति और स्तर को उन्नत करने के लिए उनके चित्त मे जो चिन्ता और लगन है वह अन्यत्र दुर्लभ है। शिवपुरी मे विद्वत्परिषद् द्वारा की गयी जैन विद्या निधि' की स्थापना से पूर्व कई वर्षो से उनके हृदय मे ऐसी योजना का विचार चल रहा था, जिसे आपने गत महावीर जयन्ती पर अलवर मे आमत्रित कराकर व्यक्त किया और मथुरा मे पुन· आने का आदेश दिया। यहां महाराज ने मेरी 'जैन तर्कशास्त्र मे अनुमान विचार' कृति की भी उल्लेख पूर्वक मराहना की। डा० ए एन उपाध्ये, डा हीरा लाल जैन, डा स्व. महेन्द्र कुमार जी, डा. स्व नेमीचन्द्र जी शास्त्री आदि विद्वानो के साहित्य सेवा कार्यो का सोल्लास उल्लेख करते हैं। यह उनकी हार्दिक गुण ग्राहिता ही है।

इस गुणग्राहिता को उन्होने क्रियात्मक रूप भी देना आरम्भ कर दिया। इन्दौर, मेरठ और कोटा मे विद्वानो को सम्मानित कर पुरस्कृत किया जाना उन्ही की गुणग्राहिता का प्रतिफल है। समाज मे विद्वत्सम्मान का जो भाव जागृत हुआ उसका एक मात्र श्रेय मुनि जी को है। मथुरा मे विद्वत्परिषद के तत्त्वावधान मे 'महावीर विद्यानिधि' का जन्म उन्ही की हार्दिक प्रेरणा से हुआ है।

श्री बाबू लाल जी पाटोदी इदौर के शब्दो मे 'मुनि श्री अविराम दौडती सदासद्य उस नदी की भांति हैं जो हर घाट-वाट पर निर्मल है और जो किंचित भी कृपण नही है, ··· वे अनेकांत की मगलमूर्ति हैं और इसीलिए प्रत्येक दृष्टिकोण का सम्मान करते हैं और उसमे से प्रयोजनोपयोगी निर्दोष तथ्यो को अगीकार कर लेते हैं।' और तीर्थकर के यशस्वी सम्पादक डा० नेमीचन्द्र जी जैन की दृष्टि मे 'दर्शनार्थी जिनके दर्शन के साथ एक हिमालय अपने भीतर पिघलते देखता है, जो उसके जन्म-जन्म के सौ सौ निदाग शांत कर देता है। वन्दना से उसके मन मे कई पावन गगोत्रियां खुल जाती हैं। इस तरह मुनिश्री के दर्शन जीवन के सर्वोच्च शिखर के दर्शन हैं।

आज हम मुनि जी के ५१वे जन्म दिवस पर अपने श्रद्धा सुमन उनके पद-पकजो मे इस मगलकामना से अर्पित करते हैं कि व्यक्ति व्यक्ति, समाज-समाज और राष्ट्र-राष्ट्र मे घुन की तरह व्याप्त हिसा, अशाति, असदाचार, भ्रष्टाचार, छल, अविश्वास आदि मानवीय कमजोरियां दूर होकर अहिसा, शांति, सदाचार, पवित्रता और विश्वास जैसी उच्च मनुष्य की सद्वृत्तियों का सर्वत्र मगलमय सुप्रभात हो। मुनिश्री दीर्घकाल तक हमे मगल-पथ का प्रदर्शन करते रहे। ★

मद्य आदि उन्मादक पदार्थों का सेवन करने पर उत्मत्त हुआ जैसे पदार्थों के वास्तविक स्वरूप को नहीं जान पाता, वैसे मोह से आच्छादित ज्ञान स्व-स्वभाव को प्राप्त नहीं करता।

सतयुग

(श्री सुरेश सरल)

मेरे मित्र
सतयुग आता नही
बनाया जाना है
सतयुग निर्माण के लिये
नीव की, या
ईट गारा चूना की जरूरत नहीं
रगो की जरूरत नही
मन्दिर मे बैठकर
एक सा सूत्र सौ बार पढने की जरूरत नही
किसी त्यौहार के नाम
छप्पन प्रकार के पकवान
उदरस्थ करने की जरूरत नहीं
न ही जरूरत है गगा मे नहाने की
और न तीर्थों के चक्कर लगाने की
भरी सभा मे पाच रुपया
दान देकर नाम लिखाने की जरूरत नही
अभिनन्दन पत्र दिखाने की जरूरत नही
मेरे दोस्त।
यह सब तो कलयुग है
मगर
हमे बनाना है सतयुग
और
सतयुग के लिये
जरूरत मानव की नही जरूरत है मन की।
मन धनशाली का
मन बलशाली का
मन विवेकशील का
इनका करना होगा राष्ट्रीयकरण।
राष्ट्रीयकरण हो सकता है
बिना द्वन्द के।
केवल कोई काम करे मन से।
मन किसी धनी आत्मा का
निकले तिजोरी से उतरे सिहासन से
नगे पैर विह्वल होकर दौडे,
पैर मे पड जाये फोडे
और आतुरता से
राष्ट्र के सुदामाओ को
लगाले गले से।
फिर मन किसी बलिष्ठ आत्मा का
निकले अखाडे से सिध बाजुओ से
बिना देखे अपना बेजोड शरीर
घूमे गली गली
देखे जगत की पीर
और अपनी थाती की देकर दिलासा

ब्रुवन्नपि हि न ब्रूते गच्छन्नपि न गच्छति
स्थिरकृतात्मतत्त्वस्तु पश्यन्नपि न पश्यति ॥

राष्ट्र के तडफते लक्षणो की सास टूटने के
पूर्व ला दे सजीवनी
बचाले जिदगी।
अन्त मे मन चाहिये
किसी विवेकी मानव का
जो
निकले किताबो से सरल व्यवहार लेकर
प्यार लेकर
प्रीत के व्यवहार की भाषा सुनाये
प्रीत मे मरना-मिटना सिखाये।
बढती नेता गिरो को नष्ट करदे
भ्रष्टाचारियो को भ्रष्ट करदे
अपनी वाणी का सहारा ले और
प्राण प्राण मे यह आस्था भरदे
कि न कोई यहाँ धनी है
न ही कोई बली विजेता
न कोई मायावी नेता।
यहा केवल मनुष्य हैं
मनुष्य जो केवल
मन के धनी हैं
मन के बली हैं
मन के गुणी हैं
तब कहेगे आप सचमुच
यह कहलाता है, सतयुग।

आत्मा मे जिसने अपना स्थितीकरण कर लिया है; वह कार्य करता हुआ भी अकर्म अवस्थापन्न हो जाता है। अतः बोलता हुआ भी नहीं बोलता, चलता हुआ भी नहीं चलता तथा देखता हुआ भी नहीं देखता।

मेरे संस्मरण

श्री सतीश कुमार जैन
अध्यक्ष श्रमण जैन भजन प्रचारक संघ

मुझे स्मरण है आज से लगभग दस साल पूर्व की हमारे समाज की स्थिति। धार्मिक चेतना से शून्य प्राय, धर्म समर्थित सामाजिक क्रियाओ के प्रति लगभग उदासीन। अपने मे मगन, अपनी शक्ति से अनभिज्ञ, दूसरो के लिए, धर्म, समाज के उत्थान के लिए कुछ कर गुजरने की प्रवृत्ति के प्रति अनासक्त। विशेष रूप से युवक वर्ग मे धर्म एव उसकी क्रियाओ के प्रति उपेक्षा भाव तीव्रतर होता जा रहा था। भौतिक जगत के काले पजे अपना शिकजा कसते जा रहे थे। एक अजीब सी नकारात्मक स्थिति थी और कुछ लोग इस स्थिति के प्रति सचेत थे भी तो वे बलहीन, हताश हो नैराश्य की इस स्थिति के समक्ष समर्पण कर चुके थे।

नैराश्य के इस अधकार के पटल से लगभग ११ वर्ष पूर्व एक प्रकाश पुन्ज उठना प्रारम्भ हुआ। नैराश्य का अधकार पहले सहमकर ठिठक गया और फिर उसने अपना फैला व्यापार समेटना चालू कर दिया। धर्म समाज की युवा शक्ति के मस्तिष्क के किसी कोने मे चेतना कुलबुलाने लगी। समाज ने यकायक अपने अन्दर एक परिवर्तन महसूस किया और चेतना का अकुर शनै २ बढने लगा। आज वह अकुर एक पेड का रूप धारण कर चुका है। धर्म, समाज नैराश्य के अधकार से बाहर आशा के प्रकाश मे सास ले रहा है।

समाज को स्मरण है ११ साल पूर्व की दुरूह स्थिति और स्पष्ट है उसके समक्ष ये पर्वत सा परिवर्तन। उस अध पतन की कल्पना भी उसके मस्तिष्क मे है और आज के उत्थान का दृश्य भी उसके सम्मुख है तो कौन है वह प्रकाश पुज ? कौन है वह महामानव जिसने समय के ऊपर यह विशाल उपकार किया है ? आज भी दिन रात, अनथक, सलग्न, इस पुनीत यज्ञ मे, वह महान सत हैं श्री १०८ मुनि विद्यानन्द जी।

मुनि विद्यानन्द जी ने उत्तरी भारत मे अपने मगल विहार करके उन योजनाओ को चलाकर जिन्हे आज का समर्थन प्राप्त है जन-मानस की चेतना को झकझोर दिया। चेतना का सूत्रधार उत्तर मे बैठा रहा परन्तु इस सुगधित पवन ने समस्त देश को सुवासित कर दिया।

मुनि विद्यानन्द जी की विभिन्न योजनाओ मे एक योजना है जैन सगीत व जैन पद्यो का प्रचार व प्रसार। आज से लगभग सात-आठ साल पूर्व श्रमण जैन भजन प्रचारक सघ की

यत्र भावः शिवं दत्ते द्यौः कियद्दूरवर्तिनी
यो नयत्याशु गव्यूतिं क्रोशार्द्धे किं स सीदति ॥

स्थापना उन्होने की जिसके अतर्गत जैन भजनो के रिकार्ड बनवाना, जैन भजनो का आकाशवाणी से प्रसारण कराना तथा जैन सगीत साहित्य को प्रकाश मे लाने इत्यादि का कार्यक्रम स्थिर किया।

मुनि विद्यानद जी विद्वानो को सबसे बडी पूंजी मानते हे अत: अपनी इसी मान्यता के अतर्गत उन्होने सन् ६९ मे पहला पुरस्कार एक प्रमाणिक सगीत की पुस्तक पर २५००) रु० का दिलवाया। यह श्रखला आज भी अनवरत है। देश के कितने ही विद्वान उनकी प्रेरणा से पुरस्कृत हो चुके हैं। विद्वान जो उपेक्षित हो चुके थे आज समाज के हृदय में विद्वान के रूप मे प्रतिष्ठित है तथा और उद्यम व मनोयोग से समाज व धर्म को सेवा में रत हैं।

मुनि विद्यानन्द जी के ये सीमाहीन उपकार गणना मे नही आ सकते परन्तु 'वीर' का ऐसा आग्रह था तो गिनने की असफल कोशिश की परन्तु यह असफलता सर्वविदित है। कोई नही गिन सकता न उद्योगपति, न राजनीतिज्ञ, न विद्वान न सामाजिक कार्यकर्ता। ये सीमाहीन हैं, अनवरत हे, चूंकि यह उनका स्वभाव है।

जो आत्मस्थ भाव शिवसुख देने वाले है, उनके लिए स्वर्ग कितनी दूर है? जो शीघ्रतापूर्वक दो कोस ले जा सकता है उसे आध कोस प्रमाण मार्ग ले जाने अथवा चलने में कौन-सी श्रान्ति होने वाली है?

SHIMMERING
NYLON FABRICS
THAT CATCH THE EYE!
MADE OF
modipon
NYLON YARN
NYLON FABRICS MODELLED
HERE ARE CREATIONS OF
MODI RAYON & SILK MILLS,
MODINAGAR
INTERADS
modipon
Makes Better Nylon Yarn
MODI
Makes Better Nylon Fabrics
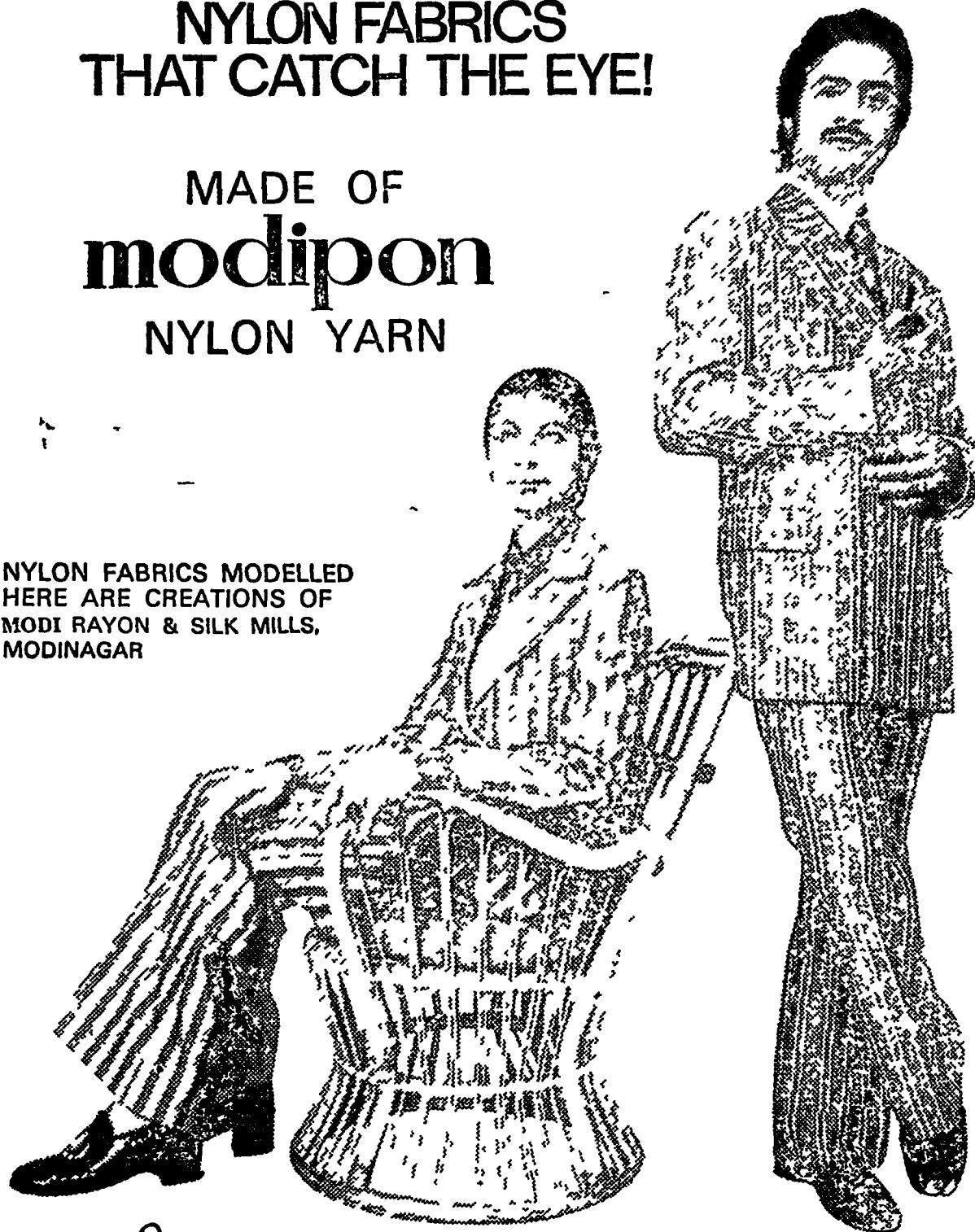
ज्योति ऐसी जागृत हुई अखण्ड और अटल हुई

प० बसन्तकुमार जैन, शास्त्री-मेरठ

परिवर्तन रूप काल में
क्रान्ति की तराल मे
भौतिक-घन मँडराऐ।
अन्धियारा छाया था,
धर्म के मर्म को
भुलाकर, इत-उत
क्रियाकाण्ड मात्र रूप
सभी के मन भाया था।
शिक्षा भई पश्चिमी,
हुई लुप्त, ज्ञान-रश्मि,
ऐसा हुआ भान,
युवावर्ग पथराया था।
भौतिक वायु-वेग से
आध्यात्मिक-दीप-शिखा
बुझने को हुई तब—
देश का समाज, सन्त
रक्षा को ललचाया था।
तभी—
तभी शेढवाल की
भूमि पर खिला पुष्प,
सरस्वती मा ने 'सुरेन्द्र'
सुत जाया था।
'सुरेन्द्र' बाल ब्रह्मचारी
आगे बढे दीक्षा धारी,
नाम पा 'विद्यानन्द'
आनन्द-घन हितकारी।
'एकला चालोरे' मन्त्र
एक अपनाया,
देश के कौने कौने—
करके विहार मगल
सुसुप्त देश-वीर को
जागृत कर समझाया।
युवकों मे उमग छाई,
युवति भी आगे आई,
आध्यत्मिक-ज्योति जली
जिसके प्रकाश से
अज्ञान निशा को मिटाई।
ऐसे 'विद्यानन्द मुनि'
चमत्कारिक कण्ठ-ध्वनि
शैली उपदेश की
जैन अजैन ने सुनि।
मन्दिर और मस्जिद मठ
गुरुद्वारा, जेल, सब
गुफा बन पहाडो में
ज्योति एक जगाई अब।
धन्य धन्य भारत देश,
धन्य धन्य माता पिता,
धन्य धन्य जैन जगत
जिन्हे विद्यानन्द' मिला।
अमर-दीप जला एक
ज्ञान का, विज्ञान का,
अविरल अध्ययन से
ज्ञानोपयोगी 'विद्यानन्द'
रति रति खोज की
शख गूंजा 'भान' का।
ज्योति ऐसी जागृत हुई
अखण्ड और अटल हुई
तूफाँ और झझावात
से भी जो विजय हुई।
धन्य धन्य विद्यानन्द
मुनि के चरणार्विन्द,
बार बार पूज कर
झूम उठा है 'वसन्त'

मुनिश्री : एक महान् आध्यात्मिक उपलब्धि

श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन, एम० ए०, फिरोजाबाद

मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज बीसवी सदी की एक महान् आध्यात्मिक उपलब्धि हैं। गत पाच-सात सौ वर्षो मे ऐसा प्रभावशाली दिगम्बर जैन साधु अपने देश मे नही हुआ। पिछले एक दशक मे उनका यश चतुर्दिक जैट विमान की गति से फैला है। उनकी धर्म-सभाओ मे तत्व जिज्ञासुओ की भारी भीड जुडती है। लोग बडे मनोयोग से उन्हे सुनते हैं। हजारो की उपस्थिति और 'पिनड्रॉप साइलेस' का अद्भुत मिलन देखकर बडे-बडे सभा-विशारद भी दातो तले उगली दबाते हैं। स्व० डा सम्पूर्णानन्द जी ने जयपुर मे मुनि श्री की व्यवस्थित सभा को देखकर एक बार कहा था कि ऐसी शान्ति तो काग्रेस-अधिवेशनो मे भी नही देखो गई। उनके प्रवचनो मे सर्वधर्म-समभाव पर जोर रहता है। उनको शैली मे एक चुम्बकीय आकर्षण है तथा उनके सम्प्रदायातीत तात्विक विवेचन ने धार्मिक जगत मे एक अभूत-पूर्व क्रान्ति उत्पन्न कर दी है।

मुनि श्री स्वभावत क्रान्तिकारी हैं। स्वाधीनता सग्राम के दिनो मे उन्होने अपनी जन्म-भूमि शेडवाल के एक निकटवर्ती गाव ऐनापुर मे एक वृक्ष पर तिरगा फहरा दिया था। पुलिस अधिकारियो को जैसे ही उन पर शक हुआ, उनके माता-पिता ने उन्हे कुछ दिन अण्डरग्राउण्ड रखने के वाद कित्तूर की शुगर फैक्टरी मे काम करने भेज दिया। माता-पिता की भयजन्य अनिच्छा के कारण उनका उत्साह ठण्डा पड गया। यही से उनकी चित्तवृत्ति राजनीति से हटकर धर्म मे केन्द्रित हो गई। यह अच्छा ही हुआ। यदि राजनीति मे वह आगे बढ गये होते तो आज मिनिस्टर के रूप मे सामने होते। तब ख्याति तो उन्हे शायद अब से भी अधिक मिल गई होती किन्तु उसमे स्थायित्व नही होता। सम्प्रति वह सर्वत्र एक युग-पुरुष के रूप मे समाहृत हैं। सन् १९४५ को दिसम्बर मे जब तपोनिधि आचार्य स्व० श्री महावीर कीर्ति जी महाराज का उधर विहार हुआ तो उन्होने उनसे आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर अपने भवितव्य का सकेत दे दिया था। इस समय उनकी आयु केवल बीस वर्ष की थो। जवानी के प्रारम्भ मे ही ब्रह्मचर्य धारण करना उनके अमित साहस एव दृढ सकल्प का ही प्रतीक है।

मुनि श्री की मातृ-भापा कन्नड है पर वह मराठी और हिन्दी भी धारा प्रवाह एव धडल्ले से बोलते हैं। अपभ्र श, पाली, प्राकृत, सस्कृत एव अग्रेजी को भी वह भली-भाति बोल और समझ लेते हैं। उनके बहुभापाविद् होने का एक सबसे बडा लाभ यह हुआ है कि वह अपनी बात लाखो करोडो तक पहुचा सके हैं। भापा को वह साधन मानते हैं, साध्य नही। उनका कहना है—

यः परात्मा स एवाहं योऽहं परमस्ततः।
अहमेव मयोपास्यो नान्य· कश्चिदिति स्थितिः ॥

"अपनी-अपनी मातृ-भाषा के प्रति व्यक्तियो का आग्रह सहज होता है किन्तु आग्रह को इतनी रूढता तक नही ले जाना चाहिए कि वह वैर कलह और वैमनस्य की भूमि बन जाए। भाषा तो एक वाहन है। लोग अपनी रुचि के वाहनो से यात्रा करते हैं किन्तु गन्तव्य स्टेशन पर पहुंचते ही वे वाहनो को भूलकर घर चले जाते हैं। यही भाषाओ की स्थिति है भावो को व्यक्त करने के उपरान्त भाषाओ की आवश्यकता समाप्त हो जाती है।" कैसा सुलझा हुआ एव विवेकपूर्ण दृष्टिकोण है उनका। यथार्थ मे भाषा एव धर्म को लेकर कही किसी प्रकार की भी कोई ग्रन्थि उनके मन मे नही है। वह सही अर्थो मे एक वीतराग एव निर्ग्रन्थ साधु हैं।

जैन मुनि के रूप मे उनकी चर्या सहज है। कृत्रिमता एव आडम्बर से वह सर्वथा दूर है। अनेक चौको का चक्कर उन्हे नापसन्द है। अन्न के अपव्यय को वह राष्ट्रीय अपराध मानते हैं। लोगो से अपना पद-चुम्बन और प्रशस्ति पाठ कराने की सामन्ती प्रवृत्ति से उन्हे बेहद चिढ है। जोर-जबरदस्ती से दूसरो को व्रत-नियम देते या दिलाते हुए भी उन्हे कभी नही देखा गया। ऐसी प्रतिज्ञाये क्षणजीवी हुआ करती हैं। उन्हे टूटते देर नही लगती। अन्त प्रेरणा से लिया गया व्रत ही जीवन भर पलता है। मुनि श्री अपने मार्मिक उपदेशो से जन-जन की सुप्त अन्त' प्रेरणा को जाग्रत करते हैं। उनके मनमोहक व्यक्तित्व मे कुछ ऐसी विशेषता है कि उनके चरणों मे पहुंचकर प्राणीमात्र का मन निर्मल हो जाता है।

मुनि श्री एक सस्था हैं। कवीन्द्र रवीन्द्र के 'एकला चलो रे' का सूत्र पकडकर उन्होने अकेले ही सास्कृतिक एव साहित्यिक उन्नयन का जितना कार्य किया है, उतना अनेक सस्थाये मिलकर भी नही कर पा रही है। एक मूक साधक की तरह वह अहर्निश साधना-रत है। उनके कृतित्व का मूल्याकन एक पृथक लेख का विषय है। नि सन्देह इस सदी की वह एक महान् उपलब्धि हैं। धन्य हैं हम और हमारी पीढी, जिसे उनके सुखद सान्निध्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

स्वर्ण पुरुष की स्वर्ण जयन्ती पर उनके पुनीत चरणो में हमारे अनन्त प्रणाम।

जो परमात्मा है, वह मै हूँ, जो मै हूँ वही परमात्मा है। मै ही मेरे द्वारा उपासनीय हूँ, अन्य कोई मेरा उपास्य नहीं, यही आत्मस्थिति है।

परम कर्त्तव्य

रचियता– श्री सुलतानसिंह जैन एम० ए०, शामली

आज चहु ओर
दशो दिशाओ में
जब छाया है
अज्ञान का घोर तिमिर,
तब तूने
हे शान्तिदूत !
हे विश्व त्राता !
हे सर्व मार्ग-दर्शक !
अवतरित हो
विश्व-धर्म-प्रेरणा से
सर्वत्र ज्ञान का आलोक प्रसारित किया है।
हे विद्या-आनन्द !
हमे गर्व है
कि तूने
जन-जन के हृदय को
स्व-धर्मोपदेश से
अप्रतिम व्यक्तित्व की मकरन्द से
मधुर वाणी की अमृत-वर्षा से
दिग-दिगन्त मे व्याप्त भ्रान्तियो का
समाज मे प्रचलित कुरोतियो का
जैसी सरल शैली से
परिहार किया है
वैसी सहस्त्रो वर्षों से भी
अन्य प्रबुद्ध वर्ग नही कर सका है।
हे मुनिवर !
तूने अवतरित हो
स्व-अलौकिक बुद्धि-प्रखरता से
युद्ध, हिसा, भय एव प्रपीडन को
भयकर एव वीभत्स दुष्कर्मो को
विश्व की आकुलताओ को
स्व-धर्मोपदेश द्वारा जैसे शमन किया है,
वैसे विश्व का कोई भी योगी
आज तक नही कर सका है।
यही कारण है कि
आज प्रत्येक ग्राम एव नगरवासी
जाति-पाति, ऊँच-नीच, धनी-निर्धन
का भेद-भाव त्यागकर
घर-दर के समस्त कार्यो को छोडकर
आपके कमल-चरणो मे आकर
स्वत ही श्रद्धावश
नतमस्तक हो
अपने को धन्य मानता है।
हे श्रमण सस्कृति के प्रतीक !
आज मैं भी आपकी
स्वर्ण-जयन्ती के पावन पर्व पर
आपके पकज-से चरणो मे
बारम्बार नतमस्तक हो
श्रद्धा के पुष्प अर्पित कर
अपने सौभाग्य का
अपने परम कर्त्तव्य का
निर्वाह करना
परमावश्यक समझता हूं।

तद् ब्रूयात्तत् परान् पच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्।
येनाविद्यामयं रूप त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत्॥

मुनि विद्यानन्द जी : युगदृष्टा

श्री रतन लाल जैन, बिजनौर

भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्त करने के पश्चात ४०० वर्ष तक जैन धर्म भारतवर्ष का मुख्य धर्म रहा। इस युग मे सम्पूर्ण भारतवर्ष मे मगध के सम्राटो का राज्य रहा। महाराज श्रेणिक (बिम्बसार) नन्दिवर्धन, चन्द्रगुप्त तीन धार्मिक सदाचारी प्रजापालक जैन धर्मानुयायी राज्यवशो का साम्राज्य मगध मे रहा। १५० ई० पूर्व से १२०० ई० तक जैन धर्म अन्य भारतीय धर्मो के साथ-साथ फलता फूलता रहा।

मुसलमान बादशाहो का भारत मे राज्य एव मारकाट का युग प्रारम्भ हो जाने से अहिसा सिद्धान्त पर आधारित जैन धर्म का ह्रास बड़ी तेजी से हुआ और जैन समाज बडी हीन दशा को पहुँच गया। अन्य धर्मावलम्बियो ने जैन समाज को आदर की दृष्टि से देखना बन्द कर दिया।

जैन धर्म की प्रगति

भारतवर्ष मे काग्रेस के स्थापित होने व स्वतत्रता आन्दोलन के साथ-साथ जैन धर्म व जैन समाज के उत्थान का युग भा० दि० जैन महासभा के स्थापन से प्रारम्भ होता है। जैकोबी आदि यूरोपीय व अन्य विद्वानो के अनुसधान द्वारा निर्णय कर देने से कि पार्श्वनाथ व महावीर दोनो ऐतिहासिक महापुरुष हुए है और जैन धर्म अति प्राचीन है, इससे जैन धर्म की स्थिति अत्यन्त दृढ व प्राचीन अन्य धर्मावलम्बियो को प्रदर्शित होने लगी। प्रात स्मरणीय गुरु गोपाल दास जी ने मोरेना मे जैन विद्यालय स्थापित व अध्यापन करके प० माणिकचन्द्र व प० देवकी नंदन आदि विद्वान तैयार किये।

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे उत्तरी भारत के आर्य समाजियो ने स्थान-स्थान पर जैन समाज को शास्त्रार्थ का चेलेज दिया जिनके फलस्वरूप कितने ही स्थानो पर शास्त्रार्थ हुए। इन सब मे आर्य समाजियो को परास्त होना पडा। इससे जैन धर्म की धाक अन्य धर्मावलम्बियो पर बैठ गई एव जैन समाज को अपने मौलिक सिद्धान्तो की सत्यता, महत्ता व अपनी शक्ति का भान हुआ।

उधर भा० दि० जैन परिषद ने स्थापित होकर तथा समयानुकूल सुधारक प्रस्तावो को पारित करके जैन समाज की सकीर्णता को हटाया तथा जैन धर्मानुयायियो ने पर्याप्त सख्या में अहिसात्मक स्वतन्त्रता सग्राम मे भाग लेकर जैन समाज को बलवती बनाया। जैन धर्म के प्राण अहिसा सिद्धान्त पर आधारित असहयोग आन्दोलन द्वारा महात्मा गाधी ने स्वतन्त्रता प्राप्त करके अहिसा की अमोघ शक्ति से ससार को चकित कर दिया।

वर्तमान स्थिति

अब जोवन के प्रत्येक क्षेत्र मे जैन समाज मे प्रगति दिखाई देती है। पिछले युग मे भारतवर्ष

मनुष्य को वही बोलना चाहिये उसी के विषय में दूसरों से पृच्छा करनी चाहिए तथा उसी पर परायण (आस्थावान, तत्पर) रहना चाहिये, जिससे अविद्यात्मक रूप को छोड़कर विद्यामय स्वरूप की प्राप्ति हो सके।

आध्यात्मिक ज्ञान प्रसार मे बहुत पिछड गया था और सारहीन क्रिया काड ने धर्म का रूप धारण कर लिया था जो आधुनिक शिक्षित वर्ग को अपील नही करता और जो अमेरिका आदि के वैभव से प्रभावित होकर विदेशी सस्कृति की नकल करने को अहोभाग्य समझने लगा है। पूज्य काजी स्वामी ने आध्यात्मिक ज्ञान प्रसार का बीडा उठा कर सौराष्ट्र मे ही केवल नही वरन सम्पूर्ण भारत मे क्रान्ति मचा दी।

मुनि महाराज की घोषणा

ऐसे प्रगतिशील जैन समाज मे गत १० वर्ष से मुनि १०८ श्री विद्यानन्द जी महाराज ने जैन धर्म को विश्व धर्म घोषित करके व जोरदार प्रचार करके जैन समाज की प्रगति को नया मोड दिया है। जैन धर्म रत्नमयी अनेक सिद्धान्तो से भरा पडा है, इनमे से कुछ उदधृत किये जाते हं—

अहिसा सिद्धांत – (जिसके कार्यान्वित हो जाने पर विश्व शान्ति सम्भव है।)

अनेकान्त या स्याद्वाद — (जिसके भले प्रकार समझने व प्रयोग मे लाने से मनुष्य का हृदय विशाल हो जाता है और वह विधियो के दृष्टि-कोणो को समझकर इनसे भ्रातृवत वर्ताव करता है।)

अपरिग्रह:— (समाज मे विद्यमान सघर्ष को समाप्त करके शान्ति पूर्वक जीवन निर्वाह करने का मार्ग दिखलाता है।)

कर्मवाद — (भली भाति समझने पर ससार चक्र भिन्न-भिन्न योनियो मे जन्म मरण, व्यावहारिक जीवन आदि की समस्याओं का रहस्य समझ मे आ जाता है) जैन धर्म ऐसे अनेक रत्नमयी सिद्धान्तो से परिपूर्ण है। ये सिद्धान्त जैन धर्म को **विश्व धर्म** बनने के योग्य सिद्ध करते हैं।

मुनि महाराज की विशेषताये

व्यक्तित्व. आन्तरिक आनन्द की झलक मुख पर हासमय प्रतिविम्बित रहती है, मन व इन्द्रियो पर पूरा सयम रखने से सदैव साम्य व शान्त दिखलायी देते हैं। काम, क्रोध आदि अन्तरग परि-ग्रह पर पूरा नियन्त्रण रहने से किसी प्रकार की उत्तेजना व्यवहार मे दृष्टिगत नही होती। जैन धर्म मे तपस्वी श्रमण के चारित्र का जैसा वर्णन किया है उनका आचरण बिलकुल उसके अनुकूल है। उनका व्यक्तित्व अत्यन्त मनमोहक व प्रभावशाली है। जो व्यक्ति एक बार भी उनके सम्पर्क मे आया वह उनका हो जाता है।

तीर्थ ——मुनि महाराज चातुर्मास मे जिस स्थान पर निवास करते हैं वह स्थान तीर्थ बन जाता है। आज का शिक्षित युवक वर्ग—जो धर्म के प्रति उदासीन है और पाश्चात्य देशो के वैभव से प्रभा-वित होकर उनकी नकल करने मे अहोभाग्य समझता है—लाखो की सख्या मे उनके प्रवचन सुनने के लिए लालायित रहते तथा प्रवचन सुनकर आत्मकल्याण करते हैं। मुनि महाराज के प्रभाव से धर्म प्रसार व कल्याणकारी सस्या स्थापित हो जाती हैं जैसे इन्दौर मे **'श्री वीर निर्वाण समिति'** जिसमे अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं, मेरठ की **'वीर निर्वाण भारती'** जिसके द्वारा

रागद्वेषादिकल्लोलैरलोल यन्मनोजलम्।
स पश्यत्यात्मनस्तत्त्व तत्तत्व नेतरो जनः॥

तीन विद्वान सम्मानित व पुरस्कृत किये गये हैं एव धार्मिक पुस्तको का प्रकाशन हो रहा है।

विद्वान:—मुनि महाराज सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी गुजराती, अग्रेजी, दक्षिण की कनड़ी, मराठी, आदि अनेक भाषाओ के ज्ञाता, प्रचलित धर्मो के मुख्य मुख्य शास्त्र, कुरान, बाइबिल, वेद, दर्शन आदि के ज्ञाता हैं तथा सांसारिक व्यावहारिक ज्ञान से भी ओतप्रोत हैं। अत: उनका उपदेश समयोपयोगी होता है।

विचारक:— विभिन्न धर्मो के आगम व अन्य ग्रन्थो मे निहित विषयो पर चिन्तन व मनन करके हस की भाति दूध मे से सार की खोज करके जनता के समक्ष रखते हैं।

वक्ता: — प्रभावशाली वक्ता है, उनकी सभा मे नाममात्र भी शोरगुल नही होता। इनका प्रवचन सरल हृदयग्राही होता है। किसी धर्म पर आक्षेप नही करते तथा विभिन्न धर्मो का समन्वय करते हैं। समय के बडे पाबन्द हैं, ठीक समय पर इनका प्रवचन प्रारम्भ हो जाता है।

जैन समाज का ही केवल नही वरन् सम्पूर्ण भारत व जगत का अहोभाग्य है कि भगवान महावीर का २५०० वा निर्वाण दिवस आगामी दीपावली पर आ रहा है जो दीपावली १९७४ से दीपावली १९७५ तक बडे समारोह पूर्वक मनाया जायेगा। इसको बहुत उत्साह से मनाने के लिए भारत सरकार विशेषकर जैन समाज की सभी सम्प्रदाये मिलकर व अलग-अलग तैयारियां कर रही हैं तथा वर्तमान जगत के प्रसिद्ध नगर न्यूयार्क मे जैन मदिर व धर्म प्रसार का केन्द्र स्थापित करने की योजना बनाई गई है। मुनि महाराज जी भी इस महोत्सव को सफल बनाने मे सलग्न हैं।

मैं अपनी श्रद्धा के सुमन मुनि महाराज के चरणो मे अर्पित करते हुए उनके चिरायु होने की कामना करता हूं। मेरी भावना है कि मुनि महाराज इसी जीवन मे जैन धर्म को विश्वधर्म के रूप मे परिणत करने मे सफल हो।

जिसका मनरूपी जल राग और द्वेषरूप तरंग-मालाओं से चंचल नहीं है, वही आत्मतत्त्व को देखता है, उसे अन्य सामान्य जन नहीं देख पाता।

तब और अब

पं० बाहुबली पार्श्वनाथ उपाध्ये, होसूर (बेलगाव)

१९४४ साल की बात है। चातुर्मास समाप्त हो गया था। मगशिर महीने का शुक्ल अष्टमी का दिन था। सुबह ८ बजे मदिर मे पूजन के लिये गया तो मदिर मे देखा और आश्चर्य मे डूब गया। तेजस्वी, परमशात, विशालभाल प्रदेश, स्वाध्याय मे लवलीन, सयम की साक्षात् मूर्ति को देखा। मस्तक अपने आप नम्र हुआ। आप थे क्षु पार्श्वकीर्तिवर्णी, आज के विश्वधर्म प्रेरक पू श्रमण मुनि विद्यानद जी। उस समय आपकी उम्र लगभग १८ या १९ होगी। हाथ मे था रत्नकरण्ड-श्रावकाचार। इच्छामि के बाद कुछ वार्तालाप हुआ। उस वक्त आपके व्यक्तिमत्व का जो परिणाम हुआ उससे मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। होसूर गाव मे (बेलगाव के पास ही) कुछ दिन रहे, बाद मे अन्यत्र चले गये। धीरे-धीरे सत्सगति बढती गयी।

सन् १९६० बेलगाव मे चातुर्मास हुआ। यह कर्नाटक राज्य का अतिम सीमावर्ती जिला है। यह एक ऐसा जिला है यहा की भूमि ने चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शातिसागर महाराज, विश्ववद्य आ कुथुसागर महाराज, व्याख्यान केसरी आ पायसागर महाराज आ नेमिसागर महाराज, १०८ श्री धर्मसागर मुनि, ९३ साल की आयु मे सल्लेखना लेने वाले १०८ श्री विमल सागर मुनि और आजकल के विश्वधर्म प्रेरक पू श्रमण मुनि विद्यानद जैसे तपस्वी और धर्म प्रभावक मुनियो को जन्म दिया है। बेलगाव का चातुर्मास अविस्मरणीय रहा है। विशेषत अजैन जनता अत्यत प्रभावित हुई। वाणी मे माधुर्य आपका जन्मजात गुण है। यहा की जैन अजैन जनता प्रवचन सुनकर चुप नही बैठी। पालकी मे बैठाकर आपका अलौकिक सम्मान किया। ऐसा चातुर्मास यहा अब तक नही हुआ।

यहा के शैव विद्यार्थी बोर्डिंग के शैवमतानुयायी स्वामी जी ने अपने बोर्डिग के लगभग तीन सौ विद्यार्थियो के सामने कन्नड भाषा मे आपका प्रवचन रखा। दो घटो तक धारावाहिक और उद्बोधक प्रवचन सुनकर स्वामी जी, उपस्थित जनता और विद्यार्थी सब गद्गद हो उठे। स्नातक प्रौढ और सुबुद्ध थे। उनमे से एक बी ए के छात्र ने अपने वक्तव्य मे कहा—"हम भारतीय इतिहास मे महान् पुरुष हुए ऐसे सुनते हैं। लेकिन मैने आज महापुरुष कैसे होते हैं यह प्रत्यक्ष देखा" बोर्डिंग के अधिष्ठाता स्वामी जी ने कहा—"केवल एक ही बार आपकी अमृतवाणी सुनकर हमारे कान अतृप्त रहे, दुबारा सुनाने की कृपा करे।" अत मे वही स्वामी जी ने कहा 'विद्यार्थियों के ऊपर कैसे सस्कार करना चाहिये जिससे वे देश धर्म राष्ट्र और अपना कल्याण कर सके इस बारे मे हम दसो साल सोच रहे थे लेकिन आपने दो घटो मे अपने अमृतमय वाणी से यह काम पूरा कर दिया है।"

आत्मदेहान्तरज्ञान जनिताह्लाद निर्वृत ।
तपसहा दुष्कर घोरं भुञ्जानोऽपि न खिद्यते ॥

१९६० के बाद आपका अमूर्त प्रियदर्शनम् १९६८ बडौत चातुर्मास मे हुआ। आप दिगम्बर मुनि बन चुके थे। हजारो को भीड अस्खलित, हिन्दी में प्रवचन, मंत्रमुग्ध भाविक जनता यह सब देखकर मन में विचार आया तब और अब जमीन और आसमान इतना अन्तर बढ गया है। उत्पत्ति स्थान में छोटी होकर बहने वाली गंगा आगे बढते बढते विशाल बनकर आखिर अमर्याद, गभीर सागर को विराट रूप मे एकरूप हो गयी।

अयं निज. परोवेत्ति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

'जे-व्यवहार कूं सर्वथा असत्यार्थ कहै है ते तौ सर्व व्यवहार के लोप करने वाले तीव्र मिथ्यात्व के उदय तैं गाढ़े मिथ्यादृष्टि है—जिनमत तै प्रतिकूल है, तिनिकी संगति ही स्व—पर की घातक है ऐसा जाननां।'

—सर्वार्थसिद्धि वचनिका
पं० जयचंद छाबड़ा
प्रथम अध्याय पृ. २१५-२१७

आत्मा और शरीर के भिन्न होने के मर्म-बोध से उत्पन्न आल्हाद का सुख जिसे प्राप्त हो गया है, उसे तपश्चर्या से होने वाले क्लेश से कभी खेद नहीं होता।
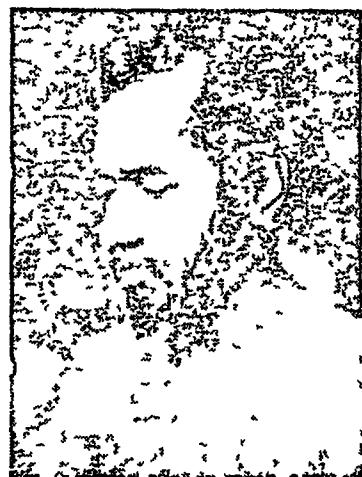
अभिनन्दन

मेरठ में दर्शन मिले, प्राप्त हुआ आनन्द,
महामनस्वी, तपस्वी, मुनि श्री विद्यानन्द।
मुनि श्री विद्यानंद, जैन-जग के रखवारे,
जीवे उतने वर्ष, गगन में जितने तारे।
इन्द्रिय विजयी, त्यागी, साधु, सरस्वती नन्दन,
मुनि चरणों मे 'काका' का वन्दन-अभिनन्दन।

——काका हाथरसी

आत्मविभ्रमज दुःखमात्मज्ञानात् प्रशाम्यति।
नायतास्तत्र निर्वान्ति कृत्वापि परमं तपः॥

TRADITION OF JAINA SAINTS

**Dr. Vilas Adinath Sangave, Professor of Sociology,
Rajaram College, Kolhapur.**

The glorious tradition of Digambara Jaina Saints remained uninterrupted right from the ancient times upto the advent of the Muslim rule in India. As a result of the Muslim domination of India the Digambara Jaina Saints, and especially the Nirgranthas, i. e, the naked ascetics, found it very difficult to observe strictly their rules of conduct and to move freely for the propagation of religion in different parts of India. There were severe handicaps also for the Shravakas i. e. the lay followers of Jainism, in the peaceful observance of their religious practices and ceremonies. As a consequence the age-old institution of Digambara Nirgrantha Saints fell into disuse and was practically extinct in Northern and some other parts of India. This sad plight for the Digambara Jainas continued for many centuries and in fact serious doubts were expressed about the possibility of reviving the institution of the Digambara Nirgrantha Saints on the pattern of their glorious and useful tradition in ancient times.

Luckily this unique tradition of the Jainas was effectively revived by Acharya Shantisagar Maharaj (1873-1955 A. D) when he assumed the Nirgrantha Diksha in 1920 A. D. This event has proved a turning point in the history of the Jaina Saints in the modern period. Acharya Shantisagar Maharaj, with his Sangha of Sadhus and Arjikas, was the first Nirgrantha Muni to tour Northern India after a break of many centuries. By visiting sacred Jaina places in different parts of India he established the right of the Digambar Nirgrantha ascetics to move freely in India and especially through the territories of the former Muslim States in India. By no means this was an easy task. After reviving the tradition of Nirgrantha Munis, he launched a vigorous movement to uproot the observance of wrong beliefs and practices from the Jainas. He largely succeeded in this stupendous task also. He incessantly strived for the protection of Jaina religion and for the spread of Jaina culture by establishing "Jinavani Jirnoddharaka Sangha" and other institutions. He was the very embodiment of Jaina way of life as he both lived and died strictly according to the injunctions laid down in Jaina scriptures. Thus *A*charya Shantisagar Maharaj did epoch-making work by ushering in a new era in the life of the Jainas in the modern period.

This epoch-making work of *A*charya Shantisagar Maharaj was further continued and strengthened by *A*charya Samantabhadra Maharaj, *A*charyaratna Deshbhusan Maharaj and Munishri Vidyanand Maharaj.

आत्मा के प्रति भ्रान्ति दोष से उत्पन्न दुःख आत्मज्ञान से शान्त हो जाता है; किन्तु आत्मज्ञान को असयत या अयत्नशील जन नहीं प्राप्त कर सकते, न ही वे निर्वाण-लाभ करते है। परम तप करने पर भी उन्हें सफलता नहीं मिलती

Acharya Samantabhadra Maharaj (born 28-12-1890 A. D.) added a new and significant dimension to the right faith in Jainism kindled in the hearts of the Jainas by Acharya Shantisagar Maharaj He made the faith in religion more firm and lasting by giving it a basis of religious education in the sacred and peaceful atmosphere of an Ashrama or Gurukul i. e. a—residential school. In this field he did a pioneering work by establishing Shri Mahavir Brahmacharyashrama(Gurukul)at Karanja (District Akola) in 1918 A. D. and Shri Bahubali Brahmacharyashrama (Gurukul) at Bahubali, near Kumbhoj (District Kolhapur) in 1934 A. D. In these and other nine such Gurukulas started by him later on in different parts of India He effected a fine synthesis between the religious and the liberal and technical education. These Gurukulas have sufficiently proved their utility by providing free residential and educational facilities to a larger number of Jaina students and by making available a band of capable and devoted religious and social workers to the Jaina community. Acharya Samantabhadra Maharaj has also shown a rare foresight in transforming the small hill-area of Bahubali into a great sacred place or Kshetra by encouraging to erect the superb and huge marble statue of Bhagwan Bahubali and the correct replicas of the Siddha Kshetras the Samavasharan, the Jambu Dvipa, etc. Thus by making Bahubali a unique place of religious and, educational activities Acharya Samantabhadra has laid the foundations for a religious centre which will, in future, serve the needs of the Jainas in the Deccan where the density of Jaina population, especially in rural areas, is highest in India.

Acharyaratna Deshbhushan Maharaj (born-28-11 -1905 A. D.) has rendered distinctive services to make the institution of Nirgrantha ascetics, revived by Acharya Shantisagar Maharaj, more oriented towards the Shravakas. He entered the Nirgrantha order at the early age of 19 only and from that time he began to undertake extensive religious tours to popularise the tents of Jainism. He was the first Nirgrantha ascetic in recent centuries to visit Calcutta and the interior parts of Bengal. In his stern endeavour to make the Jainas more religiousminded through personal contacts he traversed on foot more than one lac miles in the different parts of India and especially in Northern India. He encouraged the Jainas all over India to erect huge statues; to build new temples and to protect the places of pilgrimage. Further, as a part of his campaign to popularise Jainism, he wrote more than 60 books and in this task he gave preference to the work of translating the original sacred books in Prakrit, Sanskrit and Kannad into Hindi, Marathi and Gujarati. Moreover, he encouraged the Jaina social workers all over India to start educational institutions for the benefit of the general public. Thus due to these

---

शरीरकंचुकेनात्म संवृतो ज्ञानविग्रहः ।
नात्मानं बुध्यते तस्माद् भ्रमत्यतिचिर भवे

are being accepted and put into practice by the Jainas of all sects and subsects. This is a stupendous work of planned social change among the Jainas and to make it effective as early as possible he has been able to enlist the willing, devoted and active support of learned scholars and young constructive workers. The golden opportunity in bringing this desired social change has been given by the nation-wide celebration of Bhagwan Mahavir 2500th Nirvana Mahotsava through the year 13th November 1974 to 14th November 1975 and Muni Shri Vidyanand has been completely engrossed in planning on modern lines various programmes connected with these celebrations. Thus, Muni Shri Vidyanand has ushered in a new era which will have a lasting effect on generations to come.

सजग प्रहरी

—मिश्रीलाल जैन, एडवोकेट गुना

लोक-मंगल के सजग प्रहरी
श्रमण संस्कृति के नये इतिहास।
विश्व के सन्त्रस्त मानव को
तुम नयी आशा नये विश्वास॥

युग सन्त युगो तक गूंजेगे
तव अमिय बोल औ शाश्वत स्वर।
जिनवाणी का मगल प्रदीप
आलोक बिखेरेगा घर-घर॥

युग सन्त तुम्हारी वाणी पर
है सरस्वती, हे शाश्वत स्वर।
हे ज्ञानसूर्य! है कोटि नमन
दर्शन कर देते प्राण मुखर॥

गौरः स्थूलः कृशो वाहमित्यंगेनाविशेषयन्।
आत्मानं धारयेन्नित्यं केवलं ज्ञप्तिविग्रहम्॥
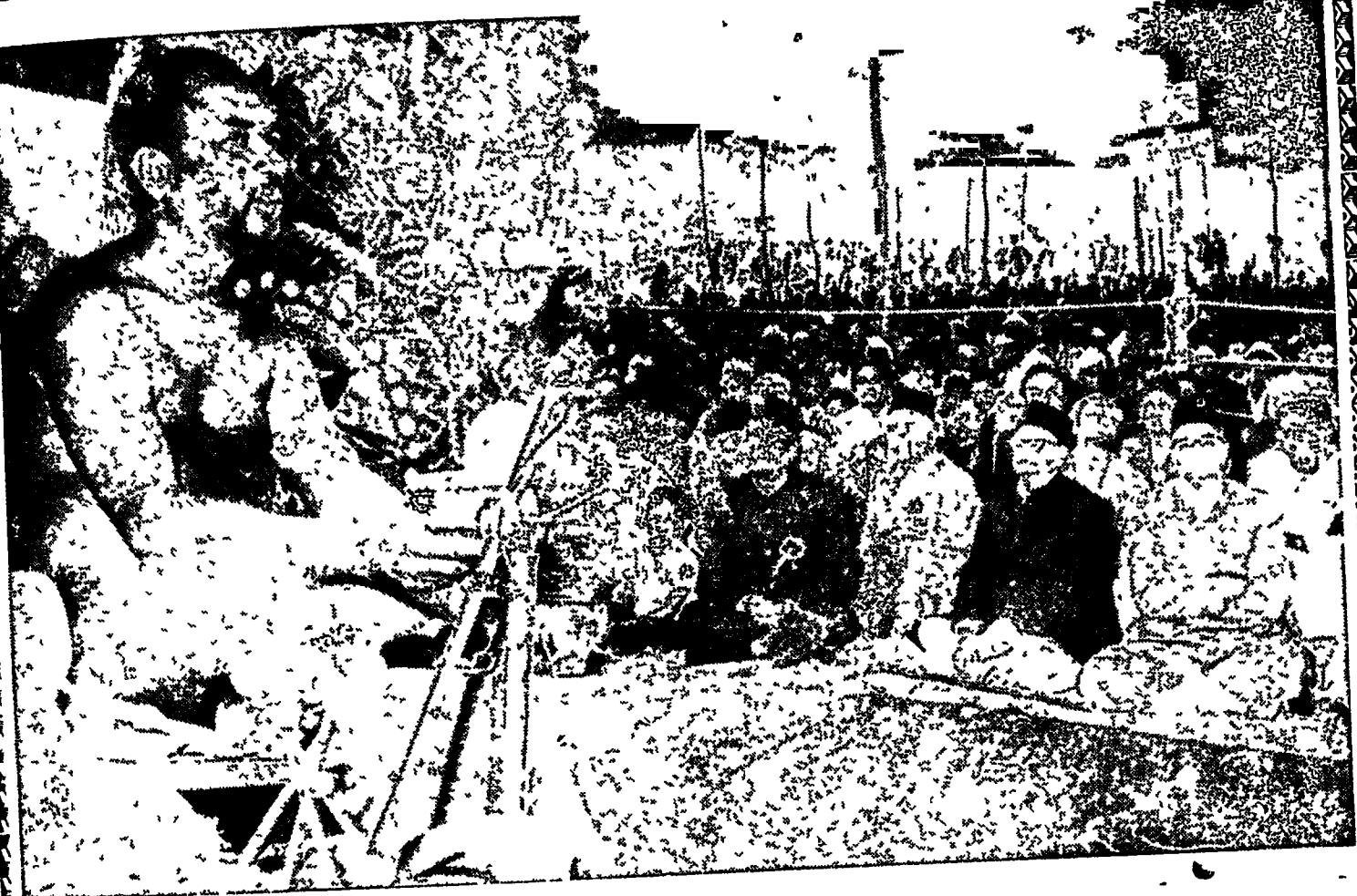
मुनि विद्यानन्द जी की प्रवचन सभा

मुनि विद्यानन्द जी की

५० वीं वर्षगांठ पर

शुभकामनाओं सहित

युग द्रष्टा, युग सन्त, तपोनिधि,

मुनि विद्यानन्द जी

—कल्याण कुमार जैन, 'शशि'

बढता जाता आत्म पंथ पर, मुनि जीवन निष्काम
गति ही गति दर्शित होती है, दिखता नही विराम
छोड रहे है गहन छाप, पद यात्रा के आयाम
युग की इस महानतम निधि को, शतशत बार प्रणाम
स्वयम् प्राप्त कर बांट रहे, अब जग को परमानन्द।
युग द्रष्टा, युग सन्त, तपोनिधि, जय मुनि विद्यानन्द।

आध्यात्मिक चारित्र शिरोमणि, सम्यक दृष्टि-निकेत
युग की समदर्शी तृष्णा से, अक्षरशः अभिप्रेत
वर्तमान को प्राण दे रहे, भूत भविष्य-समेत
जैन धर्म का निष्कलंक ध्वज, फहराते समवेत
बिखर रहा सर्वत्र, आप्त-उपदेशों का मकरन्द।
युग द्रष्टा, युग पुरुष, तपोनिधि जय मुनि विद्यानन्द।

अपना पक्ष सिद्ध करने में कही न तोड मरोड
व्याख्यानों मे बिखर रही, आत्मिक निधियां बेजोड
ढूंढ रहा है विकल विश्व, जीवन का वाञ्छित मोड़
पगडडी से पा जाते हैं, श्रोता तत्व-निचोड
आत्म ज्ञान का द्वार खुला है, द्वन्द रहित निर्द्वन्द।
युग द्रष्टा, युग सन्त, तपोनिधि जय मुनि विद्यानन्द।

विद्या सागर में नगण्य है, विद्या का उन्माद
यहा वाद का समाधान है, व्यर्थ न वाद-विवाद
सब मर्यादाश्रित है, कोई मुक्त नही अपवाद
निर्विवाद मिल रहा पर, सबको आत्म प्रसाद
यहां मार्ग दर्शन पाते हैं भूले भटके वृन्द।
युग द्रष्टा युग सन्त तपोनिधि जय मुनि विद्यानन्द।

मै गौर वर्ण हूँ, स्थूल अथवा कृशांग हूँ इत्यादि विधि से आत्मा के साथ उपचार न करता हुआ उसे केवल ज्ञान स्वरूप मात्र जाने।

सृष्टि जब विनाश के दरवाजे पर पहुचकर सर्वनाश की ओर अग्रसर हो जाती है तभी हम देखते हैं कि कोई न कोई महापुरुष आकर उस डगमगाती नौका को अनायास ही किनारे लगा जाता है। आपत्ति के महासमुद्र मे डूबने को समुद्यत असख्य प्राणियो को अकारण सहृदय भावना से प्रेरित होकर ये महापुरुष ज्ञानगगा मे अवगाहन कराकर ससार के पार पहुचाकर दुस्तर कष्टो से सदैव के लिए छुटकारा दिला देते हैं।

महापुरुषों की परम्परा में मुनि विद्यानंद जी

अब से अढाई हजार वर्ष पूर्व विश्व वन्दनीय, अहिसा के अवतार, देवाधिदेव, ऐतिहासिक महापुरुष, १००८ भगवान महावीर स्वामी जी ने इस पावन धरा को पवित्र एव मगलमय किया था। वर्तमान मे उन्ही महापुरुषो की शृखला मे विश्वधर्म प्रेरक, युग प्रवर्तक, धर्म के अद्‌भुत प्रणेता, कल्पतरु, नवयुग सृष्टा, महान आध्यात्मिक सत १०८ मुनि विद्यानद जी महाराज साक्षात विद्यमान हैं और इस धरा को मगलमय कर रहे हैं।

अलौकिक व्यक्तित्व के धनी मुनि विद्यानंद जी

आपका व्यक्तित्व अलौकिक, प्रखर व तेजवान होने से आपने आज के रूढिग्रस्त समाज मे नई चेतना व नई गति प्रदान की है। आपका व्यक्तित्व इतना आकर्षक व सम्मोहक है कि जो भी व्यक्ति एक बार आपके सम्पर्क मे आ जाता है वह आपके प्रेम से अभिभूत हो जाता है। मुनि श्री मे समन्वय की प्रखर निष्ठा है। आप विरोधियो के विरोध का उत्तर भी समन्वय व शान्ति से देते हैं। जैन सम्प्रदायो के सभी हिस्सो मे आप समन्वय के लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं।

जैन समाज क्या सभी सम्प्रदायो मे व्याप्त अविद्या, रूढि, सम्प्रदायवाद आदि और भी इनसे पनपने वाली कुप्रथाओ को दूर करने मे सदा कटिबद्ध रहते हैं।

मुनि श्री की प्रवचन शैली—

आपके मगलमय प्रवचनो की वाग्धारा अत्यत रोचक, सरल, समन्वयवादी, साम्प्रदायिकता से रहित, पुरातन नही, और न किसी कुरूढि, कुप्रथावाली है बल्कि सभी धर्मो के एक्य व समन्वय का

महापुरुषों की परम्परा में भगवान महावीर के बाद मुनि विद्यानन्द जी

—प० सरमन लाल जैन 'दिवाकर' शास्त्री

प्रतीक है। आपकी प्रवचन शैली उदात्त एव व्यापक होने से जैनेतर जनता के लिए प्रेरक सामग्री प्राप्त होती है।

मणिनूपुरो के समान कानो को रसायन सी लगने वाली आपकी धर्मामृतवाणी से जन समुदाय का मन आप अपनी ओर आकृष्ट करने मे सिद्ध हो जाते हैं। आपकी सन्निधिमात्र से समस्त दुख प्रपञ्च हट जाते हैं और चारो ओर का वातावरण शान्त और मगलमय हो जाता है।

न जानान्ति शरीराणि सुखदु.खान्यबुद्धय.।
निग्रहानुग्रहधिय तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥

महाराज श्री तीर्थधाम के प्रतीक—

आप जहां भी विहार करते हैं वहा अहिसा, प्रेम, एक्य, तप, त्याग, एव समन्वय की मलय समीर प्रवाहित होने लगती है। आप जहां जाते हैं वहा लगता है एक तीर्थराज स्वय आ गया है। आपकी धर्म सभा को देखकर तीर्थकरो के समवसरण की बात साक्षात् साकार नजर आती है। आपकी दिव्यवाणी द्वारा धर्मामृत की वर्षा से असख्य प्राणी सुख शान्ति को प्राप्त होते ह।

आपकी नई प्रेरणा से गांव-गाव, नगर-नगर, के जन-जन पुलकित, उल्लसित, एवं धर्म की पावन अनुभूति से अनुप्रेरित हो जाते हैं। आपस के झगडे मिट जाते हैं, द्वेष निर्मूल हो जाते हैं, मिलन एव एकता के नये क्षितिज खुल जाते हैं, प्रेम के अभिनव अरुणोदय से वातावरण ज्योतिर्मय हो उठता है।

मुनि श्री नवयुग सृष्टा——

आप विश्वधर्म के प्रबल प्रेरक हैं आप रूढिवादिता के प्रति विद्रोही, परिवर्तन शीलता व प्रगतिशीलता के जवरदस्त समर्थक, प्रतिष्ठापक व प्रेरक है। रूढिग्रस्त, सकीर्ण धार्मिक प्रवृत्ति के खडनकर्त्ता, सर्व, धर्म समन्वय के संयोजनकर्त्ता, दूरदर्शी उद्दाम व उज्ज्वल भविष्य के निर्माता हैं।

करुणा सागर मुनि विद्यानंद जी—

मुनि श्री प्रतिक्षण, प्रतिपल मानव कल्याण की भावना से ओत-प्रोत रहते हैं। आपके विचारों एव सान्निध्य मे ऊच नोच, जात-पात का भेद नही। हरिजनो के प्रति आप मे प्रगाढ़ ममत्व भाव विद्यमान है। आपने १६७० मे श्रीनगर (गढ़वाल) हिमालय मे चातुर्मास के समय एक हरिजन भाई को वहा के मन्दिर के द्वार पर द्वारपाल रखवाया। आप सभी धर्मो एव आयतनो का आदर करते हैं अभी ४ वर्ष पूर्व आपने उत्तराखंड की धर्म यात्रा की। सभी सनातन स्थलो पर पहुंचे व वहां पर धर्म प्रवचन किये। वद्रीनाथ धाम तक की यात्रा कर चुके हैं।

अन्त मे ऐसे महापुरुष लोकोपकारी प्रातः स्मरणीय युग भगवन्त के चरण कमलो मे कोटि कोटि नमन करता हूं और अगाध श्रद्धा रूपी सुमनो द्वारा आपकी ५० वी जन्म जयन्ती पर श्रद्धाञ्जलियां सादर समर्पित कर रहा हूं।

बुद्धिविहीन लोग 'शरीर ही सुख-दुःखों के आश्रय हैं,' यह नहीं जानते। आश्चर्य है, वे फिर भी शरीर में ही निग्रह तथा अनुग्रह की भावना करते हैं।

मानव को मानवता की तुला पर गुरुतर होने के लिए साधना की सम्पन्नता सदैव ही अपेक्षित रही है। साधना पथ कण्टकाकीर्ण होते हुए भी साधक के सत्य-शील-शम-दम-व्रत-सयम ब्रह्मचर्य-अपरिग्रह-अहिसा-अस्तेय आदि के सबल से पुष्पाच्छादित हो जाता है, जिससे उफनती सुवास समाज को सद्पथ पर चलने का आह्वान

विश्वधर्म प्रणेता मुनिश्री विद्यानन्द जी

—डा० शोभनाथ पाठक मेघनगर

करती हुई, सवारती निखाती व आकुल अतस को जुडाती हुई पथ को प्रशस्त करती है, काटे फूल बन जाते हैं, दु ख सुख मे परिवर्तित हो जाता है, कुम्हलाया मुख विहँस उठता है हर अतस उछाह, आह्लाद के अतिरेक मे निहाल हो जाता है, बस, समाज को तथ्यानुभूति व परख कराने वाला वही मानव महामानव की श्रेणी से समलकृत हो जन-जन का आराध्य बन हृदय मदिर मे प्रतिष्ठित हो जाता है। मानवता की गरिमा की यही तो पराकाष्ठा है।

इस समष्टि का साकार रूप है 'मुनि विद्यानन्द' जिसकी गरिमा को आंकना लेखनी से सम्भव नही। जन-जन के कल्याण के लिए जिन्होंने अपना सर्वस्व होम दिया, यहा तक कि 'दिगम्बर' शब्द भी उनके सम्मुख अनुपमेय बन जाता है ऐसी महान विभूति का आविर्भाव तो दीर्घावधि से पुण्य करते बाट जोहते जन-जीवन को उबारने के लिए ही होता है जिस की प्रतीक्षा जनता पलक पांवडे बिछा कर करती रहती है।

अच्छा तो आइये मुनि श्री विद्यानन्द के ५० वें जयन्ती पर्व पर मै अपनी आस्था का उफान उनके चरणो मे अर्पित कर ततसबधी सस्मरण सुनाता हूँ।

मुनि श्री का अविन्तकावास जन-जन के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। सर्व धर्म समन्वय, मानवता का कल्याण, रूढिवादिता से ग्रसी पीढी को सद्ज्ञान, सत्य-अहिसा ब्रह्मचर्य अपरिग्रह अस्तेय की परख का उद्बोधन, विश्व धर्म की जय से प्रारम्भ करने वाले प्रवचन की धूम जहा आस-पास के नगरो व उज्जैन मे सबको मोह रही थी वही समाचार पत्र भी बखानते नही अघा रहे थे।

उज्जयिनी मुझे भी जाने का अवसर मिला क्योकि मैं उस विश्वविद्यालय (विक्रम विश्वविद्यालय) का छात्र था। विश्वविद्यालय के ही एक हमारे शुभेच्छु प्राध्यापक डा. हरीन्द्र भूषण जी से मेरी चर्चा मुनि श्री के विषय मे हुई। मुनि जी

स्वबुद्धया यावद् गृह्णीयात् कायवाक्चेतसां त्रयम्।
ससारस्तावदेतेषा भेदाभ्यासे तु निर्वृतिः॥

के दर्शन की जिज्ञासा दीर्घावधि से तो थी ही किन्तु यह प्रसग दैवी देन ही कहे कि उसी समय एक और सज्जन आ गये, और हम मुनि जी के दर्शनार्थ चल पडे।

मुनि श्री सभवत उस समय विश्राम कर रहे थे अथवा अध्ययन मे व्यस्त थे मैं नही कह सकता किन्तु वे कक्ष मे थे। ज्योहि उन्होने सुना कि कोई आया है तुरन्त बाहर आ गये और पास मे ही एक लकडी के पाटले पर बैठ गये।

देश के अधिकतर भागों मे विद्वानो, सन्तो मनीषियो से मैं मिला था, दर्शन किया था। (क्योकि किशोरावस्था से ही मेरा झुकाव सन्त महात्माओ की ओर ही रहा और इस समय देश के उच्चकोटि के महात्माओ से मिल चुका हूँ,) किन्तु दिगम्बर मुनि के दर्शन का यह प्रथम अवसर था।

भव्य ललाट, मृदु-मुस्कान विद्वता शब्द-२ से टपकती थी, सुगठित स्वर्ण सा तप का निखारा हुआ शरीर काति बिखेर रहा था ऐसे मुनि द्वारा प्रेम, आदर व आत्मीयता के शब्दो को पाकर मैं निहाल हो गया। ऐसी निश्छल आत्मीयता भरी अभिव्यक्ति शायद मेरे सम्मुख पूर्व मे नही उभरी थी, जिसकी असीम आनन्दानुभूति आज मैं कर रहा था।

मैंने सुना था कि मुनि विद्यानन्द बडे विशाल हृदय के हैं। आज प्रत्यक्ष इस तथ्य को परख मैं किंकर्तव्यविमूढ़ सा उन्हे निहारता ही रहा। मेरे जैसा एक नवयुवक, इतने बडे मुनि के ससर्ग मे भला आजाय, यह असभव सा ही लग रहा था किन्तु वह क्षण, अविस्मरणीय सा आज भी एक सिहरन सी पैदा कर मुझे विह्वल बना देता है। मुझे महावीर व हरिकेशी की घटना का स्मरण हो रहा है। ह्रदय मे भावो का ज्वार सा उमड़ रहा है। इस प्रवाह मे लेखनी थम सी जाती है क्या लिखूं कुछ समझ नही पड़ता······मुनि श्री की महानता का वह दृश्य मन मे हिलोरे पैदा कर रहा है जहां उन्होने मुझे प्रबध की प्रेरणा दी। विनय विद्या का भूषण है—यह उक्ति मुनि श्री से समलकृत होती है। यह शब्द मैं बड़ी गम्भीरता से सोचकर लिख रहा हूँ क्योकि मैंने देश के अनेक क्षेत्रो मे भ्रमण किया है व लोगो से मिला हूँ।

दूसरी बार मुनि श्री के दर्शन का सौभाग्य मुझे मेरठ मे मिला। अपना अमूल्य समय देकर भी आपने घन्टो मुझे ज्ञानामृत प्रदान किया, यही नही वरन मेरे महावीर शोध प्रबन्ध के विषय मार्ग दर्शक प्रेरक मुनिवर की महानता उभरते अकुरो पर अमृत उडेल देती है। इसी अनुभूति के साथ मैं अपनी आस्था चरणो मे अर्पित करते हुए दीर्घायु की प्रभु से प्रार्थना करता हूँ। विद्या के साक्षात स्वरूप, विद्वानो के पारखी, प्रेरक, प्रणेता, आश्रयदाता व विद्या नाम को समलकृत करने वाले विद्यानन्द जी हैं। आस्था का उफान जो थामे नही थमा, अंतस से छलक रहा है उसी की एक बूँद:—

यह जीवात्मा जब तक काय, वाक् और चित्त इन तीनों को 'स्व' (आत्मा) बुद्धि से स्वीकारता रहेगा, तब तक संसार में परिश्रम करता रहेगा। इनमें भेदवृत्ति का अभ्यास ही मोक्ष है।

यथा नामः तथा गुण की गरिमा से समलकृत।
'विद्या' थाती विद्यानन्द विशाल विश्वहित प्रमुदित ॥
दिव्य, दिगम्बर वेश 'वीर' मन्देश विश्व निर्माता।
जन्म-जयन्ती पर गुण गाते अतस नही अघाता ॥

विद्या वारिधि से विद्या का स्रोत असख्य उफनकर।
तृषित हृदय है सतत जुड़ाता जन मे ज्ञान निखरकर ॥
अर्द्धशती पर अभिनदन है, अर्पित नमन हमारा।
भौतिकता मे भटके जन का मुनिवर बने सहारा ॥

सत्य-शील-शम-दम-वृत सम्बल से जो सृष्टि सवारे।
भारत माता के सपूत से जागे भाग्य हमारे ॥
मुनि श्री विद्यानन्द अतुल अवधूत ज्ञान के दाता।
समवशरण मे जिनके जाकर प्राणी बहु सुख पाता ॥

'विश्व धर्म' के जय निनाद से मुनि जब कथा सुनाते।
होता हृदय निहाल स्नेह-सुख आक नही हम पाते ॥
सतत समन्वय शाति, अहिसा, से पुलकित, हो प्राणी।
अखिल विश्व बन्धुत्व भाव उफनाती मुनि की वाणी ॥

बुद्धिजीवियो के वरदाता, धर्म-कर्म उन्नायक।
आकुल जन के अभय देवता, जन जन के सुख दायक ॥
ऐसी दिव्य विभूति प्राप्त कर हम असीम सुख पाते।
अन्तस मे उभरे भावो का श्रद्धा सुमन चढाते ॥

यह पचासवां वर्ष तिमिर मे मगल दीप जलाये।
'वीर' महोत्सव के अवसर पर अतुलित ज्ञान लुटाये ॥
बहुत बहुत आशा उनसे, प्रभु दीर्घायु बनाये।
बिहँस, पुलक आह्लादित हो, शतश हम शीश नवाये ॥

परत्राहमति· स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसशयम्।
स्वस्मिन्नह मतिश्च्युत्वा परस्मान् मुच्यते बुध ॥

इतिहास के पृष्ठो का शृगार युगो से होता रहा है। इस वीर-प्रसू भारतभूमि के सुरम्य उपवन को अनेको नर-प्रसूनो ने अपने कीर्ति-परिमल द्वारा सुरभित किया है। इतिहास के पृष्ठो पर किसी ने अपने गाढे लहू से त्याग की गाथा लिखी। किसी ने अद्भुत कीर्ति-स्मारक बनाकर कीर्ति को स्थायी बनाने का प्रयत्न किया। किसी ने बूंद-बूंद की तरह सचय किया और लोक-कल्याण के लिये मुक्त हाथ से लुटा दिया। भारत की उर्वरा भूमि मे लोक-कल्याण के लिये समर्पित होने वालो की अविच्छिन्न परम्परा है। युगसन्त मुनि विद्यानन्द जी इस परम्परा के सेतु है। जैन दर्शन का स्याद्वाद उनकी जीवनचर्या मे मुखरित हो साकार हो उठा है। उनका एक चरण आत्म-कल्याण के लिये बढता है, दूसरा लोकमगल के लिये। बाह्य मे उनके चरण लोकमंगल के लिये बढ रहे हैं, अनवरत पदयात्रा कर रहे हैं। भीतर ही भीतर जन्ममरण की यात्रा की समाप्ति हेतु सतत् अभ्यास चल रहा है। मुक्ति के महान् गन्तव्य के यात्री को लोकमगल की डगर से चलना ही पडता है। श्रमण सस्कृति का इतिहास साक्षी है कि आदि तीर्थंकर ऋषभदेव ने इस पवित्र भूमि पर विचरण किया। देश के आचार-विचारो को सांस्कृतिक रूप प्रदान करने के लिये अनवरत पदयात्रा की। विश्व की डगर पर प्राणिमात्र के लिये आदर्श-सुमन बिखेरे। अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर की ऋजुकूला से मध्यम पावा तक केवलज्ञान से निर्वाण पर्यन्त ३० वर्ष की दीर्घ यात्रा आत्मज्ञान की उपलब्धि के पश्चात् लोक-मगल की यात्रा ही थी।

अनात्मार्थं विना रागै शास्ता शास्ति सतोहितम्।
ध्वनन् शिल्पीकरस्पर्शान्मुरज. किमपेक्षते ॥

तीर्थंकर बिना किसी राग के दूसरो को हित का उपदेश देते हैं। शिल्पी के करस्पर्श से ध्वनि उत्पन्न करने वाला मृदग क्या कुछ अपेक्षा रखता है ?

दिव्य पुरुष: दिव्य यात्रा

मिश्री लाल जैन, एडवोकेट, गुना

तीर्थंकरो की भांति उनके पथानुयायी वीतराग भावना से लोकमगल करते है। लोकमगल का आदर्श आत्मा की निर्मलता का प्रतीक है। विश्व एक परिवार है इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। श्रमण सस्कृति के प्राण अहिसा की साकारता है। मुनि विद्यानन्द आत्मज्ञान की अनुपम निधि है। लोक-मगल के आदर्श हैं। भारतीय सस्कृति के टूटते हुये सस्कारो को जोडने की औषधि हैं। भौतिक-वादी प्रवृत्तियो मे कुण्ठित युग के लिये आध्यात्मिक मार्ग के प्रणेता हैं। जीवन-पर्यन्त यात्रा करने वाले यायावर हैं। जहां भी जाते हैं उनके ज्ञान, साधना और लोक-कल्याण की सुकीर्ति उनसे पहिले पहुंच जाती है पर कीर्ति उनका किञ्चित् भी लक्ष्य नही है। उसकी ओर उनकी दृष्टि नही। युगसन्त स्वय कहते हैं—

स्व से च्युत हुआ तथा पर मे स्व-बुद्धि रखने वाला, निःसंदेह अपने आपको बन्धनग्रस्त करता है; परन्तु कोई बुध स्व में अहंमति रखता हुआ तथा पर से च्युत हुआ मुक्त हो जाता है।

'कीर्ति नामक कन्या सदैव से कुमारी है। दुर्जन पुरुष कीर्ति को वरण करना चाहता है कीर्ति उससे दूर भागती है क्योकि वह साधु पुरुष कीर्ति से दूर भागता है, कीर्ति चिर कुवारी है।'

श्रमण-सस्कृति मे मुनि-चर्या सुलभ नही है। वह महाव्रती का जीवन है। सर्वसावद्यविरत, परहितनिरत, सर्वस्व त्यागी, परम-विरागी, मोहममताजयी, कामविजयी, तपस्त्याग सयमादर्श, विश्ववद्य आदि विशेषण उनके स्वरूप के वास्तविक अलकरण हैं। मुनि विद्यानन्द जी दिगम्बर श्रमण-चर्या के आदर्श हैं। उनका दिगम्बरत्व सहज है। शताब्दियो के पश्चात् एक दिव्य आत्मा जगत् मे आई है। इस दिव्यात्मा का मूल उद्देश्य जन्म-मृत्यु के अनादि-बन्धनो को तोडना है। मुक्ति के महान् उद्देश्य को प्राप्त करना है किन्तु आत्मा मे ज्यो-ज्यो आध्यात्मिक शक्ति का विकास होता है त्यो-त्यो वह व्यक्ति व्यक्तिगत अनुभूतियो से उठकर समष्टि का हो जाता है। युग सन्त विद्यानन्द जी श्रमण सस्कृति के हैं, भारत के हैं, सम्पूर्ण विश्व के हैं। वास्तव मे वे मानव-मात्र की धरोहर हैं।

युगसन्त का मगल-विहार देश के कोटि-कोटि मानवो को धार्मिक, आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यो का पथ-प्रदर्शन कर रहा है। उनकी पीयूष-वाणी देश मे व्याप्त आध्यात्मिक जडता को तोडने की क्षमता रखती है। श्रमण सस्कृति के आराध्य श्रमण के रूप मे वे पच-परमेष्ठियो मे से एक हैं, किन्तु देशभक्ति और राष्ट्रीयता भी यदि किसी को सीखनी हो तो मुनि विद्यानन्द जी के चरणो मे बैठकर सीखे। उनके एक सन्देश से वास्तविकता स्पष्ट हो जाती है।

सविधान भारतीयो की स्वतत्रता का स्वस्ति-वाचन है। स्वतन्त्रता सर्वोत्तम निधि है। ससार के समस्त वैभव मिलकर भी स्वतन्त्रता के साथ तुलना नही कर सकते।

'जीवितात्तु पराधीनाज्जीवाना मरण वरम्।'
'पराधीन रहकर जीने से तो मृत्यु श्रेष्ठ है।'

प्रात स्मरणीय मुनिश्री की वाणी मे अद्भुत आकर्षण है। युवक युवतियां बालवृन्द उनकी सभा मे शान्त, मन्त्रमुग्ध होकर प्रवचन सुनते हैं। महानगर दिल्ली, मेरठ, जयपुर, इन्दौर की सभाओ मे श्रोताओ की सख्या ७५ हजार तक हो जाती है। उनकी वाणी मे अद्वितीय आकर्षण है। उनकी वाणी मे से सूक्तिया और सन्देश झरते हैं। प्रवचनो की भाषा सरल और स्वाभाविक है। जैन दर्शन के गूढतम रहस्यो को अनावृत करने की प्रवचनो मे क्षमता है। प्रवचनो की भाषा जितनी सरल है लेखन की भाषा उतनी ही प्राञ्जल और सस्कृतनिष्ठ है। अलकारो से सज्जित, रमणीय पदावली से भूषित है, जिसमे गद्यगीत का आनन्द मिलता है। मुनिश्री के प्रवचन पावन सन्देश हैं। मुनिश्री की सहनन शक्ति अद्भुत है। दिगम्बर वेश मे हिमालय की शीत-कम्पित दुर्गम पहाडियो मे पदयात्रा कर मुनिश्री ने आदि तीर्थकर ऋषभदेव के विहार स्थल का मार्ग मुनिजनो को प्रशस्त किया है। मुनिश्री दिव्य पुरुष हैं उनकी यात्रा दिव्य है। वे मुक्ति के महान् गन्तव्य के यात्री हैं, शाश्वत सुख के अन्वेषी हैं। ★

यत् पश्यामीन्द्रियैस्तन् मे नास्ति यन्नियतेन्द्रियः।
अन्त पश्यामि सानन्द तदस्तु ज्योतिरुत्तमम्॥

मुनि विद्यानन्द जी की
५० वीं जन्म जयन्ती

पर

हार्दिक अभिनन्दन

सुभाष जैन

संचालक

शकुन प्रकाशन

३६२५, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

फोन : २७१८१८
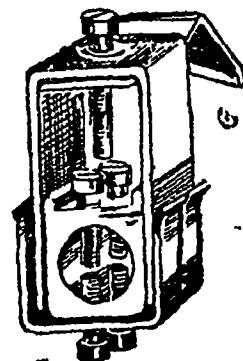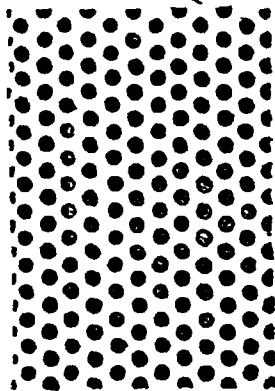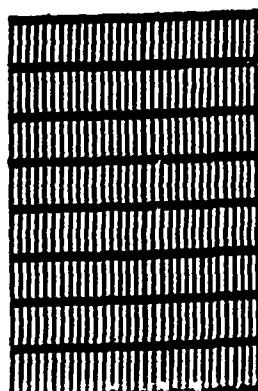
संस्कृति के सूर्य को भी रश्मियाँ देकर जगाता

मिश्री लाल जैन

युग तक
करती प्रतीक्षा है धरा,
तब जन्म लेता,
पल्लवित होता सुमन
जिसकी सुरभि से
महकती है ये धरा।
ज्ञान दीपो को
स्नेह का दान देता
सस्कृति के सूर्य को भी
रश्मिया देकर जगाता
सृजक हाथो से विश्व मे
सत्य के विरवे लगाता
मनुजता कही कालिमा को
ओढ चादर सो न जाये
सस्कृति को, अहिसा की
मधु प्रभातो सुनाना
कोटि-कोटि, स्वरो का निनाद गूँजा
अणु से भयभोत और सत्रस्त युग के
भाग्य का
श्रमण विद्यानन्द ही केवल विधाता

मै इन्द्रियों से जो देख रहा हूँ, वह मेरा (स्व), नहीं है किन्तु इन्द्रियों को वश में रखकर अन्तःकरण में जिस प्रकाश का [illegible] मैं हूँ।

एक घटना, एक संस्मरण

डा० कृष्णचन्द्र शर्मा, एम० ए०, पी० एच-डी०, मत्री, सरस्वती-परिषद्, मेरठ

सरस्वती-परिषद (कृष्णादेवी शीतल प्रसाद जैन ट्रस्ट) मेरठ द्वारा प्रकाशित कुरु-जनपद सदर्भ-ग्रथ 'मयराष्ट्र-मानम का मैंने सम्पादन किया था। उसी की प्रति सेठ शीतल प्रसाद जी ने प्रात स्मरणीय मुनिवर श्री विद्यानन्द जी के श्री चरणो मे अर्पित की। उस ग्रन्थ को देख जन-कल्याणरत सतप्रवर ने अति सतोष प्रकट किया तथा उनको मुझे सेवा मे उपस्थित करने का आदेश किया। यह मेरा सौभाग्य था।

इसके पूर्व दो बार मैं मुनि जी के दर्शन कर चुका था तथा उनके ज्ञानोपदेश से प्रभावित था। इस बार ज्ञान वारिधि मुनि श्री के निकट होने का मुझे अवसर मिला था और मैं अपनी लघुता मे कुछ ऐसा अनुभव कर रहा था, जैसे किसी महासिंधु के तट पर खडा कोई बौना विस्मयग्रस्त हो। तभी उन्होंने अपने गभीर घोष मे प्रोत्साहन के कुछ शब्द कहे और मुझे लगा कि मैं अब समीपस्थ-कूल से अतलात ज्ञानवारि मे निमग्न था।

मुनिवर्य लोकहित-भावना का विस्तार कर रहे थे और मेरी मति मे मानव जीवन के चरम-फल का उल्लास बीज बन कर समा रहा था। स्निग्ध, सरल वाणी का अमृत प्राणो मे घुलता जाता था तथा मैं स्वय को संज्ञाहीन अनुभव करता था। ऐसी विभोर दशा कभी पहले मैं प्राप्त न कर सका था और न इस भाति के अतीन्द्रिय सुख का ही मुझे कोई बोध था। हा, मुनि पद का पावन प्रसाद प्राप्त कर उन क्षणो मे ससीम असीम का अन्तर लुप्त हो रहा था। लगा जैसे —

'गगन चढई रज पवन प्रसगा'

वह अनुभव मेरे हृदय की बहुमूल्य निधि है।

इसके बाद मै और भी कई बार सज्ञाहीन लौह की भाति मुनिपारस के प्रभाव क्षेत्र मे गया, तथा प्रति बार मेरी दृष्टि के समक्ष ज्ञान-विज्ञान के अनन्त लोक खुलते गए। मुनि श्री की अनन्त ज्ञानराशि का अनुमान कर पाना मेरे लिए कठिन है, परन्तु इतना अवश्य कहूगा कि ऐसा वैविध्यपूर्ण ज्ञान-कोष मेरे अनुभव क्या अनुमान मे भी न था। तथा जिस सरलता और उदारता से उसकी रत्न-राशि वह अपने उपदेशो मे लुटाते हैं, उसे देखकर तो मेरी स्मृति मे फलभार से झुके उस महातरु का दृश्य ही उभरता है, जो जन-हितार्थ अपनी शाखायें झुका दिव्य-फलदान के लिए सदैव तत्पर होता है।

मेरी हृदय-पटी पर पूज्य मुनि विद्यानन्द जी का यही दिव्य-चित्र अकित है। मैं श्रद्धासहित उनको बारम्बार प्रणति-निवेदन करता हूँ।

तथैव भावयेद्देहाद् व्यावृत्यात्मानमात्मनि।
यथा न पुनरात्मान देहे स्वप्नेऽपि योजयेत्॥

शत-शत वन्दन

डा० जयकिशनप्रसाद, खण्डेलवाल, आगरा

परमपूज्य मुनि श्री विद्यानद जी महाराज का सान्निध्य सर्वप्रथम मुझे १९६५ मे उनके आगरा मे मगल विहार के शुभ अवसर पर प्राप्त हुआ। तब से निरन्तर मुझे उनका वात्सल्य प्राप्त होता रहा है। इससे पूर्व मेरा जीवन दिशाहीन था। मेरे हृदय ने उन्हे सद्गुण के रूप मे स्वीकार किया और मेरा जीवन क्रम ही बदल गया। उन्होने मेरी धर्म एव अध्यात्म के प्रति भावना को दृढ आस्था मे बदल दिया। सौभाग्य से मुझे उनके सान्निध्य मे रहने का शुभ अवसर प्रत्येक वर्ष ग्रीष्मावकाश मे प्राप्त होता रहा है। मुझे ऐसा अनुभव होता है जैसे मेरी आत्मशक्ति विकसित हो जाती है और फिर वर्ष भर कार्य करने का अदम्य उत्साह और शक्ति प्राप्त होती है। आपत्तियो एव कठिनाइयो से जूझने का एक अपूर्व उत्साह प्राप्त होता है।

गुणीजनों के प्रति स्नेह—

प्रथम दिन से अद्यावधि मुनि श्री की गुणीजनो के प्रति स्नेह की वृत्ति मेरे लिए असीम श्रद्धा का विषय रही है। जिसमे तनिक भी गुण है, वह उनके स्नेह का पात्र वन गया, चाहे वह लेखक हो, सगीतज्ञ हो, चित्रकार हो, मूर्तिकार हो, मुद्रक हो या प्रकाशक हो। यही कारण है कि गुणीजन भ्रमर की भांति उनकी सुगन्ध से आकर्षित होते रहे है। जहा भी उनका मंगल-विहार होता रहा है, गुणीजन निरन्तर उनके सम्पर्क मे आते रहे हैं। जो एक बार आया, वह वार-वार आता रहा। अनेक महान् कवियो एव साहित्यकारो के वे प्रेरणा स्रोत बने है और उन्होने इस सम्बन्ध मे अपने निश्छल उद्गार व्यक्त करते हुए मुनि श्री के चरणो मे विनत होकर उसे स्वीकार भी किया है। गुणीजनो के प्रति मुनिश्री का सहज स्नेह रहा है। गुणी जन भी उनके सान्निध्य मे हृदय की वार्ता सुनते रहे है।

शेडवाल से दिल्ली

मुनिश्री जी की पवित्र भव्यात्मा ने यह शरीर शेडवाल ग्राम, जिला वेलगाम, कर्नाटक मेसूर मे प्राप्त किया। उनका बाल्यकाल का नाम सुरेन्द्र उपाध्याय था। दक्षिण मे उपाध्याय को उपाध्ये कहते हैं। इनके पिता श्री कालप्पा उपाध्ये स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी के स्नातक रहे हैं। मुनिश्री अपने बाल्यकाल से ही तेजस्वी थे। उनका अध्ययन स्वाध्याय से परिपूर्ण रहा है। बाल्यकाल से ही वे असाधारण प्रतिभा के धनी रहे ह। उनके गुरू जी श्री मागले जी गत-वर्ष मेरठ पधारे थे। उनसे पता चला कि वे वचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के एवं दृढ़ मन शक्ति वाले रहे। मुनिश्री किशोरावस्था मे देश प्रेम से

देह से पृथक् मानकर आत्मा को आत्मा में ही उस प्रकार भावित करे कि फिर स्वप्न में भी देह में आत्मयोग न हो।

ओत-प्रोत होकर राष्ट्रीय आन्दोलन मे भी एक कर्मठ किन्तु मूक कार्यकर्ता रहे। पूजा-अर्चन, स्तुति स्तोत्र आदि मे वे तल्लीन हो जाते थे। सगीत की अच्छी शिक्षा प्राप्त करके इस दिशा मे उनकी गति प्रगति को प्राप्त करती रही। आज जो हम उनका 'पारस प्यारा' सुनकर मुग्ध हो जाते है और हमारी मन-वीणा के तार झंकृत हो उठते हे, उसके पीछे मुनिश्री की बाल्यकाल की सगीत साधना है।

शेडवाल मे आज से पचास वर्ष पूर्व एक महान् आत्मा ने पुरुष पर्याय ग्रहण किया और उत्तर भारत मे ज्ञान-ज्योति जगाते हुए, मगल-विहार करते हुए वे पुन दिल्लो पहुच गए हैं। दिल्ली को ही उनकी मुनि दीक्षा (१९६३) देखने का गौरव प्राप्त है और वही २२ अप्रेल ७४ को उनका ५१ वां जन्म दिन मनाया जा रहा है। एक दशक पूर्व जिन क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति जी (मुनिश्रो का क्षुल्लक अवस्था का नाम) ने मुनि दीक्षा ग्रहण करके विद्यानन्द मुनि नाम प्राप्त किया था, वे ही आज दिल्ली की नगरी मे पुनः चातुर्मास कर रहे हैं। इस दशक मे उन्होने उत्तर-भारत मे महती धर्म प्रभावना की है। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा आदि प्रदेशो मे उनका मगल-विहार हुआ और लाखो की सख्या मे लोगो ने उनके प्रवचन सुने, प्रभावित हुए, धर्ममार्ग पर स्थित हुए, अन्धकार से प्रकाश की ओर अग्रसर हुए।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

मुनिश्री का जीवन मानव-मिलन का महान् प्रेरक एव केन्द्र-बिन्दु रहा है। उनकी अलौकिक प्रतिभा से बडे-बडे विद्वान् उनके समक्ष नत मस्तक होते रहे हैं। उनकी चरण-वन्दना करके हमारा हृदय-कमल खिल उठता है, निर्मल परि-णति को प्राप्त होता है और उनसे प्राप्त ज्ञानामृत से हम अमृतत्व को प्राप्त करने की दिशा मे अग्रसर होते हैं। भौतिक ज्ञान की शिक्षा देने के लिए आज देश मे अनेक विश्व विद्यालय खुले हुए हैं किन्तु अध्यात्म की प्रभावी शिक्षा देने वाले चारित्र्य शिरोमणि मुनिश्री विद्यानन्द जी एक चलते फिरते विश्वविद्यालय हैं। उनका स्वाध्याय-तप अद्‌भुत है। उन्होने लगभग पचास हजार ग्रन्थो का भलीभाति अध्ययन किया है। वह अध्ययन ज्ञान रूप मे आज भी उनको बौद्धिक प्रखरता मे झलक रहा है और दुनिया को चकित कर रहा है। जिस प्रकार नश्वर शरीर को जाने बिना हम इसमे विद्यमान चेतन आत्मा को नहीं जान सकते, उसी प्रकार भौतिक ज्ञान और अध्यात्म का समन्वय भी आवश्यक है। यह समन्वय मुनिश्री मे मिलता है। उन्हे जहा एक ओर मशीनरी जैसे भौतिक पदार्थो का सूक्ष्म ज्ञान है, वही उन्होने त्रैलोक्य मूल्य आत्मा का भी साक्षात्कार किया है और ऐसा करने की प्रेरणा दी है। यही कारण है कि तीर्थंकर महावीर की परम्परा मे श्रमण सस्कृति का प्रसार करते हुए वे जन-जन की श्रद्धा के भाजन बने हुए हैं। उनका वात्सल्य अप्रतिम है तो भारत की धर्म-प्राण जनता का उनके प्रति श्रद्धा भी अविचल है। चाहे राजस्थान हो या मध्यप्रदेश चाहे उत्तर-

अपुण्यमवतै. पुण्य व्रतैर्मोक्षस्तयोर्व्यय.।
अव्रतानीव मोक्षार्थी व्रतान्यपि ततस्त्यजेत् ॥

प्रदेश हो या हरियाणा जहा भी मुनिश्री गए, जन-जन की श्रद्धा उमड़कर उनके चरणो पर न्यौछावर होती रही। हमे तीर्थकरो के युग का पुनरावर्तन दिखाई पड रहा है। वही समवशरण, वही अमृतमय उपदेश और वही वात्सल्य।

वात्सल्य मूर्ति —

मुनिश्री वात्सल्य की सजीव मूर्ति हैं। उनका हृदय वात्सल्य से सराबोर है और जो भी उनका सान्निध्य प्राप्त करता है, उसमे डुबकी लगाकर अपना जीवन धन्य बनाता है। तपोमूर्ति मुनिश्री ने अध्यात्म के क्षेत्र मे महान् प्रगति की है। उनकी तपस्या महान् है। उन्होने अपना उद्धार तो किया ही किन्तु वात्सल्य मूर्ति होने के कारण वे लोक-कल्याण मे प्रवृत्त हुए। सच्चा कल्याण तो अध्यात्म मे हो है। शरीर से जन्म से मृत्यु तक अमगल ही है। एकमात्र मंगल इसमे स्थित चैतन्य ज्ञानस्वरूप आत्मा है जिसका साक्षात्कार हम ज्ञानराधना के द्वारा कर सकते है। 'अभीक्षणन्तु मुहुर्मुहः' यही मुनिश्री जी की साधना है जिसकी आधार भूमि है सद्विचार और सदाचार। वात्सल्य भाव से प्रेरित होकर मुनिश्री अपने अमृतमय उपदेश जनता को सुनाते रहे हैं। उनकी दिव्यवाणी से बहुतो ने मगल को प्राप्त किया है और करेंगे।

महावीर का सन्देश —

भगवान महावीर बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि एव कुशल थे। उनका अधिकाश समय चिन्तन मनन मे बीतता था। ससार के प्राणियो को दुखी देखकर वे उन्हे सुखी बनाने के लिये साधना मे प्रवृत हुए, साधु जीवन मे प्रवेश किया। माता की ममता और पिता का प्यार भी उन्हे अपने मार्ग से विचलित न कर सका। केवल ज्ञान प्राप्त करके उन्होने ससार के प्राणियो को दुख का कारण और सुख प्राप्ति का मार्ग बताया। मुनिश्री विद्यानन्द जी ने भी पिछले पच्चीस वर्ष के स्वाध्याय तप के द्वारा जो सत्यान्वेषण किया है, वह उनकी तपपूत वाणी से प्रसारित होकर जन-जन के मानस को पवित्र कर रहा है। वे महावीर के सन्देश को आज पुन इस आकुल ससार को प्रदान कर रहे है। आज जब चारो ओर अशान्ति आकुलता, शोषण, भ्रष्टाचार, दुराचार, अविश्वास एव कलह से सकुल मानव भटक रहा है, तब अपूर्व आध्यात्मिक शान्ति का दिव्य सन्देश लेकर मुनिश्री हमारे सौभाग्य को बढा रहे है। हमे महावीर का मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले जाने वाला सन्देश सुना रहे हैं। तीर्थंकर महावीर का २५००वा महापरि निर्वाण महोत्सव समस्त विश्व मे मनाया जा रहा है। ऐसे महत्वपूर्ण अवसर पर मुनिश्री का भारत के हृदय दिल्ली मे चातुर्मास करना बहुत ही बड़ा मगल है। उनके चातुर्मास से महोत्सव की गति को प्रगति तो मिलेगी ही, साथ ही विश्व-मानव को एक दिव्य सन्देश प्राप्त होगा और वह उनमे जीवन के सर्वोच्च शिखर के दर्शन करके परमानन्द प्राप्त करेगा।

विश्व धर्म के प्रेरक —

मुनिश्री जी के साथ मुझे हिमालय की यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे विश्व धर्म के

अव्रतों से अपुण्य तथा व्रतों से पुण्य-प्राप्ति होती है। पुण्य-अपुण्य अथच-व्रत-अव्रत इन दोनों का व्यय (त्याग) मोक्ष है, अतः मोक्षाभिलाषी को अव्रतों के समान ही व्रतों का भी परित्याग कर देना चाहिए।

प्रेरक हैं और हिमगिरि के उत्तुग शिखर पर बैठकर उन्होने विश्व-धर्म की जो कल्पना की है, वह आज के युग के लिए बहुत बडे सतोष एव आनन्द की विधायक बन सकती है। वे मुमुक्षु हैं किन्तु लोक-कल्याण की महती भावना से सयुक्त होने के कारण मानव-कल्याण मे प्रवृत्त हैं। तम और ज्योति, सत्य और अनृत के सघप मे एक बार जो मार्ग उन्होने स्वीकार किया, उस पर दृढता से पैर रखकर हम उन्हे निरन्तर आगे बढते हुए देखते हैं। उन्होने अपने मन को अखण्ड ब्रह्मचर्य की आच मे तपाया है तो अपनी आत्मा की ज्ञानगगा की अविरल धारा से प्रक्षालित करके उसके द्वारा प्राणी मात्र को पवित्र किया है। वे परमानन्द के द्वार मे प्रविष्ट हुए हैं और वहा हमे भी प्रवेश करने की प्रेरणा प्रदान कर रहे हैं।

मुनिश्री ने मेरे मानस चक्षु से लिए दिव्य दृश्य उपस्थित किये हैं। मेरे जीवन मे जो कुछ भी सद् है, वह उन्ही का है। मेरी साहित्य साधना उनके आशीर्वाद से प्रगतिशील बनी है और मुझे उनसे जीवन के उद्देश्य की झलक मिली है। मेरी सदैव यही कामना है कि उनके दिखाए मार्ग पर आगे बढकर जीवन सार्थक कर सकूँ। मुनिश्री के सम्बन्ध मे लिखना तो बहुत चाहता हू किन्तु पहले मैं उस योग्य तो बनू कि एक महापुरुष का आकलन कर सकूँ। मुनिश्री के ५१ वे जन्म दिवस पर मै श्रद्धा-वनत होकर उनके प्रति हार्दिक श्रद्धा व्यक्त करता हू।

शृण्वन्नप्यन्यत. काम वदन्नपि लेवरकात्।
नात्मान भावयेद्भिन्न यावत्तावन्न मोक्षभाक्॥

मुनि विद्यानन्द जी
शतायु हों
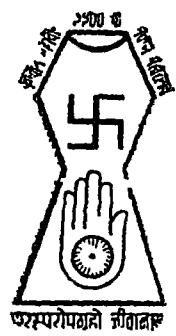
समाचार पत्र हाथ मे था और एक सम्वाद ने मुझे पकड लिया। मेरठ मे उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री बहुगुणा के सम्मान मे और अध्यक्षता मे हुई सभा का विवरण था। सम्वाद मे आगे जाकर सरकार की अर्थ नीतियो की समीक्षा ही नही मानो भर्त्सना तक पढने को मिली। शब्द निर्भीक थे और विचार आधुनिक। व्यापारिक वर्ग को सराहा गया था और दोष अधिक अधिकारी वर्ग का बताने का वक्ता ने साहस किया था। अनुमान हुआ कि ये शब्द किसी विरोधी पक्ष के नेता की ओर से आये होगे। यद्यपि मुख्यमन्त्री की उपस्थिति मे विरोधी राजनेता भी शब्दो के ऊपरी शिष्टाचार मे बात को कुछ थोडा बहुत घुमा दिया करते हैं, किन्तु विस्मय हुआ पाकर के मुनिश्री विद्यानन्द जी की वह वाणी थी और भरी सभा मे उन्होने यह भाषण किया था।

विद्यानन्द जी जैन मुनि है। लेकिन उनकी सभाये हजारो-हजार की होती हैं। समस्त जनता स्तब्ध मुग्ध रह जाती है। जैन-अजैन का कोई अन्तर वहा नही रहता। उनका व्याख्यान एक साथ इतना तात्विक और तात्कालिक होता है। धर्म के गहरे प्रश्नो मे उलझकर वह मनुष्य, समाज और देश की व्यवहार की समस्याओ से दूर नही चले जाते। अत. वह सदा सर्वप्रिय और सर्व सुलभ बने रहते हैं। सकीर्णता उन्हे छू नही गई और सहानुभूति उनकी विस्तृत है। उनका आचार, उनकी मुद्रा, उनकी वृत्ति निष्कलक जैन महाव्रती की है, फिर भी अमुक सम्प्रदाय का कहकर उनके प्रभाव को टालना किसी के लिए शक्य नही है। दिगम्बर उनकी मुद्रा है लेकिन इस सम्बन्ध मे वह इतने निर्व्याज, निश्शक और सहज हैं कि असमजस का भाव किसी के लिए सम्भव नही रह जाता। निर्ग्रन्थ इस मुद्रा की उपादेयता के सम्बन्ध मे सामाजिकता की ओर से जो वाद अकसर चला करता है वह उनकी उपस्थिति मे उपज ही नही हो पाता।

युगत्राता मुनि श्री विद्यानन्द

श्री जैनेन्द्र कुमार जैन, दिल्ली

अभी मैंने उनके दर्शन किये थे। कृपा पूर्वक उन्होने याद किया और अवसर था चार विद्वानों को सम्मान का। मुनिश्री की यह विशेषता है। गुणियो पर उनकी निगाह रहती है। खोज-खोज कर उन्हे आविष्कृत करने, उनकी सेवाओ को पुरस्कृत करने और उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढाने की ओर सदैव उनका ध्यान रहता है। हमारे समाज मे पैसे का प्रवाह अविकतर प्रदर्शन की ओर है। गुणीजनों का व्यक्तित्व अवर्णनीय सा बना रह जाता है। इस प्रकार हमारी सामाजिकता उथली और धर्म विमुख बनने लगती है।

दूसरों के पर्याप्त उद्बोधन पर तथा स्वयं उस विषय में पर्याप्त चर्चा करने पर भी जब तक कोई आत्मा को परद्रव्यों से भिन्न नहीं जान लेता, तब तक वह मोक्षभागी नहीं होता।

नैतिकता से वह उल्टी चल पडती है। मुनि विद्यानन्द जी ने उस प्रवाह को फेरने का बडा काम किया है। पुरस्कारो की एक माला ही समक्ष आई है और निरतर नये-नये मनके उसमें जुड रहे हैं। दस्एक व्यक्तियो को इस प्रकार ढाई-ढाई हजार की धन राशि पहुंचाई जा सकी है। हाल मे दिल्ली मे फिर दो विद्वानो का समायोजन हो रहा है। साहित्यकारो और रचनाओ का इस प्रकार मान बढा है और धर्म के स्थाई मूल्यो की रक्षा हुई है।

मुनि विद्यानन्द सतत् कर्मशील हैं। उनकी निष्ठा दूसरो को छू जाती है। युवको को जगाकर उन्हे धर्म-तत् पर बना देने की उनमे अद्भुत क्षमता है। किसी प्रकार का आडम्बर उनके आस पास नही देखा जाता। उनकी अन्तरात्मा मे धर्म चैतन्य की स्फूर्ति निरतर उमगी रहती है। उनका सा कर्मठ व्यक्तित्व इधर अध्यात्म पुरुषो मे कम ही देखने को मिला है। अथक और अनवरत वह सृजनशील हैं और प्रकाण्ड उनका पाण्डित्य है। जहां जाते हैं वहा इसीलिए विद्वानो का समूह जुड जाता और युवक वर्ग प्रेरणा से भर आता है।

मुनिश्री विद्यानन्द जी एक तपोमय विभूति हैं। दिगम्बर जैन अथवा जैन मात्र के लिये नही, प्रत्युत भारतीय परम्परा और सभ्यता के लिये। अब तक हुई उनकी सेवा महान् है, कृतित्व अविस्मर्णीय है। उससे भी कही अधिक आगामी सम्भावनाए उनमे केन्द्रित हैं। महावीर निर्वाण की इस २५वीं शताब्दी के अवसर पर बनी महासमिति द्वारा क्या होता है यह देखना है। पर एक काम जो सरकार द्वारा न हुआ है, न हो सकेगा, मुनिश्री जैसे सन्तो के योग द्वारा ही सम्भवनीय है। समाज अभी बिखरा है, उसमे ऐक्य नही फूट है। पृथकता मे बँटकर उसकी शक्तिया आपस मे कट जाती हैं और धर्म को तेजस्वी नहीं बना पाती। अपरिग्रह पर सग्रह का बोल-बाला चलता ही जाता है और धर्म पर धन छाया रहता है। भारत धर्म प्राण देश है। आर्थिक दृष्टि से उसे आज अविकसित ही मानना पडता है। अधिक से अधिक विकासमान देशो मे गणना कर लिजिये। परन्तु उस दिशा मे भारत के भाग्य का भविष्य नही है। स्वय विकास पाये हुए देश उधर से अघा रहे हैं और वहा प्रतिक्रिया शुरू हो चुकी है। भारत भूलेगा अगर उस ओर बढेगा। त्राण मुनिश्री जैसी विभूतियो के हाथ है जो आत्म-जागरण का मार्ग बता रहे और जगा रहे हैं।

मैं उनके श्री चरणो मे प्रणाम निवेदन करता हूँ।

न तदस्तीन्द्रियार्थेषु यत् क्षेमंकरमात्मनः।
तथापि रमते बालस्तत्रैवाज्ञानभावनात्॥

शिवपुरी में पूज्य मुनि विद्यानंद जी

प्रेषक श्री नेमिचन्द्र गोंद वाले

हिमालय से विहार कर इन्दौर की ओर आते हुये पूज्य मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज ने शिवपुरी विश्राम किया। नवीन महावीर जिनालय, मानस्तंभ का बारीकी से अवलोकन किया और देशी पाषाण मे निर्मित होने से सराहना की। दिनांक १-६-१९७१ को यहा हुये मुनि श्री के प्रवचन का अश हम प्रेषित कर रहे हैं।

"आप कहते हैं मकान मेरा है अमुक तमुक... आचार्य कहते हैं कि भले आदमी! तुम आते समय क्या लेते आये? यह शरीर ले आये हड्डी-चमड़े का और जाते समय क्या ले जा रहे हो? बोले लाये हैं वह भी छोडे चले जा रहे हैं। ले जाने की तो कोई बात ही नही है। फिर बीच मे आप यह जो शरीर आपने दूध पिलाया, घी पिलाया, मालिश करवाई, साबुन-सोडा नहलाया, नाना विधि कपडे पहनाये, गहने पहनाये, औषधि उपचार कराया, नाना उपचार कराये, किसके लिये? शरीर के लिये।

जब इतने उपचार सेवा परिश्रम करने के बाद भी यह शरीर धोखा दे देवे, वह शरीर ही जब तुम्हारा नही है तो अन्य पिता माता, भाई-बधु, मकान, दुकान, देश आदि तुम्हारे हो कैसे सकते हैं? जमीन जायदाद, कार ये सब तुम्हारे हो कैसे सकते हैं। जब शरीर ही तुम्हारा नही है, और शरीर के लिये खानपान, औषधि उपचार इतना करते रहे, उसका हिसाब ही गिनती नही है, और रातरजन उस शरीर के लिये रचना शुरु है, और आत्मा के लिये क्या रचना कर ली? परमात्मा को क्या समझ बैठा है? कोई कोशिश नही करते और बोलते हैं कि हम पन्ने पलट जाये और क्षण मे हमें पता चल जाये। और कोई धूप मे बारिष मे पैसा कमाने के लिये, ससार चलाने के लिये चौबीस घण्टे, जो अशास्वत है उसी के लिये करते हैं। इसीलिये आचार्य कहते हैं—जो शास्वत है उसे हमने छोड दिया और जो अशास्वत है उसने हमे छोड दिया, न उधर के रहे और न इधर के। यह हालत और यह परिस्थिति हमारी हो गई तो इसलिये हमे ऐसे तत्वज्ञान का अवलोकन करना चाहिये जिससे आत्मा के अन्दर शान्त रस, प्रशांत रस की प्राप्ति हो।

शृगार रस आदि में रात रजन डूबे हुये हैं जीव और उसके लिये तो कोई बहुत बडी विद्या और शिक्षा देने की जरूरत नही है। परन्तु वह शातरस और प्रशातरस है आत्मा मे जो निर्मलता की प्राप्ति हो उसे शिक्षा की बहुत आवश्यकता है। देखिये आप! पहाडो मे जगलो मे, काटे के पेड, किसी ने बागड़ नही लगाया, खाद नही दिया, पानी नही दिया और वहां उग के आ रहे हैं और अगूर की खेती, चावल इत्यादि गेहूँ की

वह वस्तु, जो आत्मा के लिए क्षेमकर हो सके, इन्द्रियों के विषयभूत रूप, शब्द, रस, गन्ध इत्यादि में नहीं है। तथापि बाल (अज्ञानी) अविद्वान्, अ-तत्ववित् अपनी अज्ञता से उसी में रमण करता रहता है।

खेती वहा बागड लगाया, रक्षक रखे। इधर गाय घुस गयी, उधर बकरा घुस गया, आम का पेड खा गया अगूर खा गया सब खा गया। तो अच्छाइयो के लिये पुरुषार्थ की आवश्यकता है। जब पहाड पर चढते हैं तो पुरुषार्थ, उतरते हैं तो ज्यादा जरूरत नही है। मकान बनाने के पीछे ज्यादा पुरुषार्थ की जरूरत है, गिराने के लिये ज्यादा पुरुषार्थ को जरूरत नही है। इसलिये निर्माण जो है, निर्माण का मतलब अपनी आत्मा के उत्थान के लिये जो पुरुपार्थ और प्रयत्न है उसके लिये बहुत प्रयत्न को जरूरत है, और हम एक क्षण के लिये भी अपने आत्मा के बारे मे समय निकालकर सोच लेते हैं तो वास्तविक हो हमे एक आनन्द की अनुभूति हो जाती है।

आध्यात्मिक तत्वज्ञान एक आध्यात्मिक नन्दन बन है। जैसे अनेक फूलो के बगीचे मे जाकर बैठकर आप आनन्द लेते हैं तो आध्यात्मिक तत्वज्ञान के अन्दर जब आनन्द की रुचि लग जाये तो आप तीन लोक को भूल जाये। परन्तु समय का २४ घन्टे हैं, २४ घण्टे के अन्दर १२ घन्टे दिन के और १२ घन्टे रात के। और १०० साल उम्र भी है तो ५० साल सोने मे चले गये और ५० साल बचे बालपन मे, बचपन मे, खेलकूद मे, पढाई मे उसके बाद शादी इसका उसाविर उसका उसाविर और उसके बीच मे मौत कब आयेगी इसकी कोई गारटी नही तो आप बताये कि अपने के लिये क्या सोचा ? मशीन को मनुष्य ने बना दिया, पर अपने आपको नही बनाया, जिसने अपने आपको बनाया वह महान है। आप एक किलो लोहा ले आइये, उसकी सुई बनाइये बाजार मे बेच आइये चार पैसे मिल जायेगे। लोहे पर थोडा-सा सस्कार—ताला बना दीजिये और चार पैसे ज्यादा मिल जायेगे। और उसकी घडी बना दीजिये सौ-दो सौ रुपये मिल जायेगे। उसी लोहे पर जैसे ज्यादा सस्कार करने से ज्यादा से ज्यादा मूल्यवान हो जाये। इसी प्रकार जब आत्मा पर सस्कार करते हैं तो यहा आत्मा महात्मा और परमात्मा बनने मे समर्थ हो जाये।"

'वरिस सहस्सेण पुरा जं कम्मं हणइ तेण काएण।
ते संपइ वरिसेण हु बिज्जरयइ हीण—संहणणे॥'

—भाव सग्रह [देव सेन] १३१

—पहिले मुनिगण जिन कर्मों को हजार वर्ष पर्यन्त तप करके क्षय करते थे, उन्ही कर्मो को हीन-सहनन वाले (स्थविरकल्पी मुनि) एक वर्ष मे क्षय करते है।

अज्ञापित न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा।
मूढात्मानस्ततस्तेषां वृथा मे ज्ञापनश्रमः॥

मुनि श्री विद्यानन्द जी ने अपने पहले चातुर्मास के समय पुरुषोत्तम दास टंडन हिन्दी भवन मे आयोजित एक सभा मे भाग लिया। प्रेमीजी उनका स्वागत कर रहे हैं।

माणा-गाव की ओर जाते हुए

दिल्ली मे मुनि सुशील कुमार जी तथा मुनि महेन्द्र कुमार जी से तीर्थंकर महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव सम्बन्धी योजनाओं पर विचार विमर्श करते हुए
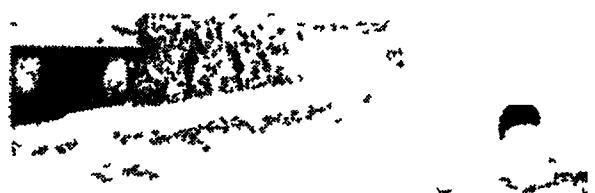
श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर

★

★

दिल्ली मे आचार्य तुलसी अभिनन्दन समारोह मे

उज्जैन मे पं० सत्यंधर कुमार सेठी के सा
संग्रहालय मे

मुनि श्री रोटरी क्लब मेरठ मे

ग्वालियर के प्रसिद्ध किले मे मूर्तियों का निरीक्षण करते हुए साथ में वीर के सम्पादक श्री राजेन्द्र कुमार जैन खडे हैं।

जयपुर चातुर्मास मे मुनि विद्यानन्द जी प्रवचन करते हुए। [illegible]

जयपुर चातुर्मास में प्रवचन सभा के अन्दर राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्द जी भाषण करते हुए।

श्रानगर के मन्दिर जी मे

ज्ञान सूर्य के ज्योति-पुंज

कु० सुषमा प्रेमी

ज्ञान-सूर्य के ज्योति- पुँज हे ! तुमसे ज्योतित सब ससार।
मेरा नमन करो स्वीकार॥

शैशव से ही मिला आपको, 'सरस्वती' मा का वरदान।
बचपन के 'सुरेन्द्र' की 'कीर्ति', बनी जगत मे नव दिनमान।
अष्टादश की अल्पायु मे, तोड मोह के बन्दनवार।
पाया योगी का व्यवहार, मेरा नमन करो स्वीकार॥

कैसा यह महान त्यागी है, अचरज मे सब पडे रह गए।
मुनि धर्म की दीक्षा ले जब, तुम परिग्रह से दूर हो गए।
पिच्छी और कमण्डलु कर मे, मुख पर तेज हृदय मे प्यार।
करने लगे ज्ञान विस्तार, मेरा नमन करो स्वीकार॥

कितनी समता एक व्यक्ति मे, इसकी तुम साकार कल्पना।
कितनी ममता एक हृदय मे, इसकी तुम जीवन्त कल्पना।
वाणी की शक्ति का सम्बल और आत्मा की हुंकार।
पाया जन-मन पर अधिकार, मेरा नमन करो स्वीकार॥

"प्राणी मात्र से प्रेम-भाव रख, जिओ और जीने दो सबको।
एक ईश के अश सभी जब, समझो निज सा ही तुम सबको।"
ऐसे सुन विचार क्षण-प्रतिक्षण, जन के सवर गये आचार।
लो प्रणाम ये बारम्बार, मेरा नमन करो स्वीकार॥

जो मूढ़ात्मा है, आत्ममूढ़ है उन्हे ज्ञापन किये विना (बताये विना) आत्मविषय का ज्ञान (स्वतः) नहीं होता।

Shri Vidyanand Muni Maharaj

28th January was a very memorable day for me It is on this day that I had the privilege of meeting Shri Vidyanand Muni Maharaj for the first time at Meerut City where I had not known a single soul. It was a day that shall carry its sweet and ennobling nostalgia for me till the end of my life.

There is an unusual attribute in Muni Vidyanandji The moment I met him I had a feeling that it was ordained that I should meet this great and noble soul whom I had known from the past. His gentle and sweet meaningful smile disarms misgivings at once and the same wave length of a rapport is immediately established Never for a moment I felt that I was meeting him for the first time This is an inner feeling that a man feels very occasionally and could never forget

An erudite scholar himself Shri Vidyanand Muniji understands the inner impulses of a research worker, his difficulties and his mission. Himself a research scholar he lives in the midst of books and has a remarkably alert and receptive mind without losing the critical attitude an indispensable attribute of a research scholar In the course of a short discussion I found how very helpful he is for encouragement of further research. He just gives a hint, smiles and lapses into silence. That is what I had found in my Guru Dr. Sir Jadunath Sarkar the erudite and the doyen of Historians in India who had spent about sixty years in historical research working not less than ten hours a day and had combined it with his Professorial work.

In connection with the great 2500th Nirvan of the Tirthankar Bhagwan Mahavir Vardhaman the Muniji has taken upon himself a great task...he has been going round and sponsoring Trusts for writing books on Jainism and giving awards to scholars. At a time when scholarship is at a low premium and the authors are exploited by all concerned and the State has not been able to do much this idea of the Muniji shows a deep appreciation of the problem. He has already sponsored such Trusts in Indore, Meerut and other places and will go on with the work. May he live long and spread the message of Jainism and ignite hearts to offer their scholarship for a revival of the great creed.

P. C. Roy Chaudhry,

New Delhi

नयत्यात्मानमात्मैव जन्मनिर्वाणमेव वा
गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थतः ॥

A Universal Teacher

A. N. UPADHYE
MYSORE

Words are inadequate to express the manifold dimensions which Muni Shri Vidyanandji has developed as a Nirgrantha Monk. He speaks in universal language; and what he preaches is for the socio-spiritual benefit of one and all. I am often reminded of the spirit of the author of Kural in the messages of Muni Shri Vidyanandji. May his spiritual heights inspire us to be worthy sons of Bharatavarsa which has given birth to such saints as are embodiments of the ideal practice of Ahimsa, Aparigraha and Anekanta at a time when we are celebrating the 2500th Nirvana year of Bhagawan Mahavira.

अपना आत्मा ही अपने को जन्म और निर्वाण मे ले जाने वाला है इस विचारसे आत्मा ही [illegible] आत्मा का अन्य कोई [illegible] है।

महर्षि विद्यानन्द महाराज से वर्ष वर्द्धनोत्सव के उपलक्ष्य मे वीर का विशेषाक निकल रहा है, यह स्तुत्य विचार है, क्योकि समाज मे गुणग्राहकता व कृतज्ञता का अश जिस प्रमाण मे वृद्धिगत होगा उस प्रमाण मे समाज स्वास्थ्य बढता जायेगा, समाज मे गुणी व गुणो को अभिवृद्धि से ही समाज की शोभा भी बढती रहेगी। जैन धर्म व समाज का उद्योत करने मे श्री विद्यानन्द महाराज ने बहुत बडा योगदान दिया है, इसमे कोई सदेह की बात नही है।

जैन सतो के द्वारा जेन सस्कृति की रक्षा मे बहुत बडा योगदान हुआ है, अपने बहुमूल्य तपश्चर्या के जीवन से कुछ समय लोक कल्याण के लिए उन्होने नही निकाला होता तो आज हम लोग बहुत बढे अधेरे मे ही रहते। हमे विनाश के गर्त की ओर जाना पडता, परन्तु हमारे पूर्व महर्षियो ने समाज का उद्धार किया, उसका मार्ग दर्शन किया एव उसे अध पतन से बचाया।

उसी परम्परा मे महर्षि विद्यानन्द भी हुए। १०वी शती मे जो विद्यानन्द स्वामी हुए उन्होने भी जैन धर्म के प्रभाव के लिए चिरस्मरणीय कार्य किये, बहुत बडे उद्ग्रन्थो का निर्माण किया, लोक को जैन धर्म के प्रति आकर्षित किया। तत्वार्थश्लोकवार्तिकालकार, आप्तपरोक्षा आदि न्यायदर्शन के ग्रन्थ उन्ही की अमूल्य देन हैं। महर्षि विद्यानन्द स्वय ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न हुए थे, जैनेतर ब्राह्मण थे, परन्तु जैनधर्म की महत्ता से आकृष्ट हुए थे। परन्तु आज के श्री विद्यानन्द मुनि जैन ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न होकर जैन धर्म की महती-प्रभावना कर रहे हैं। उनके द्वारा जैन धर्म का यथेष्ट उद्योत हो रहा है। हजारो क्या लाखो लोग जैन साधु सम्प्रदाय की उच्चता बखान कर रहे हैं। जैन साधु जीवन से प्रभावित हुए हैं यह उन्ही की देन है।

महर्षि विद्यानन्द महाराज

श्री वर्द्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री, शोलापुर-२

पूज्य श्री का जन्म दणिण भारत मे स्थित कर्नाटक प्रात के छोटे से कस्बे मे हुआ। बाल्यकाल से हो विरक्ति भाव थे और समाज सेवा मे सदैव सलग्न रहते थे। माता पिता ने प्रयत्न किया कि इस बालक सुरेन्द्र को लौकिक भोगो से बद्ध करे परन्तु सरेन्द्र ने अपने सुरेन्द्रत्व का वास्तविक अर्थ मे त्याग करने की तत्परता ही नही दिखाई, परन्तु अपनी ही परिणति मे मग्न रहे। ससार की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करते हुए वे आत्मकल्याण की ओर अग्रसर हुए। घर पर रहने से घर के बधन से माता पिता या परिवार के लोग बाधेगे इस कारण सुरेन्द्र ने दीक्षा लेने का निश्चय किया। क्षुल्लक दीक्षा लेकर पार्श्वकीर्ति बन गये एव समाज व धर्म के कार्यों को करते हुए आपकी कीर्ति चारो ओर फैलने लगी। कीर्ति पार्श्व मे आकर बैठने लगी तो भी इनकी दृष्टि उस ओर नही थी। इतने मे चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शातिसागर महाराज को दूर-

यद्बोधयितुमिच्छामि तन्नाह यदह पुन।
ग्राह्य तदपि नान्यस्य तत्किमन्यस्य बोधये॥

दृष्टि इस कर्तव्यदक्ष क्षुल्लक की ओर गई। उन्होने इनकी रीति नीति, नय विनय, चारित्र सयम एव सबसे अधिक कर्तव्य चातुर्य को देखकर शेडवाल मे सस्थापित आचार्य शांतिसागर अनाथ छात्राश्रम के कार्य को आपके कधो पर डाला। उसकी सुव्यवस्था के लिए निर्देश किया। गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर कई वर्षो तक शेडवाल आश्रम की सुव्यवस्था के कार्य मे लग गये। सस्था की समुन्नति ध्रुवनिधि की वृद्धि, विद्यार्थियो मे शील व नियम बद्धता की समृद्धि, छात्रालय मे धार्मिक सस्कृति की अभिवृद्धि आदि कर शेडवाल मे अपूर्व शिक्षण प्रचार का कार्य किया। आपकी व्यवस्था से सस्था के ट्रस्टी व सचालक मडल आदि प्रसन्न व निश्चित रहे परन्तु विरक्त व विमुक्त चितन के लिए यह भी बधन ही प्रतीत हुआ। उन्होने इसका भी त्याग किया। धर्म प्रभावना करते हुए यत्र-तत्र विहार करते रहे। कुछ दिन हुमच मठ मे भी रहकर मठ की सुव्यवस्था व सुसचालन मे योगदान दिया। उनको भावी मठाधोश बनाने की भी चर्चा रही, कदाचित् अभी तक रहते तो मठाधीश भी बन जाते, परन्तु प्रकृति को यह इष्ट नही था। इस प्रभावक व्यक्ति को किसी सीमित बधन मे डालना उसे अभीष्ट नही था। हजारो लाखो व असंख्य लोगो का कल्याण जिस व्यक्ति से होने की सभावना हो उसे एक सीमित परिधि मे बांध रखना, सोमित प्रात के लिए उससे उपकृत करना उसे सम्मत नही होगा। अत: आज आपके द्वारा विशाल भारत को लाभ मिल रहा है जन कल्याण की विशाल सीमा को भी आप आक्रमण कर रहे हैं आपके द्वारा असख्य जीवो का उद्धार हो रहा है।

दिल्ली भारत की राजधानी—आचार्य रत्न देशभूषण महाराज प्रभावक आचार्य, दिल्ली व उत्तर प्रदेश मे थे। क्षुल्लक पार्श्वकीर्ति वर्णी ने भी आचार्य देशभूषण महाराज से निर्ग्रन्थ दीक्षा लेने का विचार किया, दीक्षा के लिए योग्य उत्तम दिन व नक्षत्र देखा गया। बहुत वैभव के साथ जलूस निकाला गया। पार्श्वकीर्ति वर्णी का यह अतिम रूप है इसके बाद यह रूप देखने को नही मिलेगा, इस विचार से दिल्ली जैन समाज ने यथेष्ठ वैभव के साथ आपका दीक्षा पूर्व जलूस निकाला। वह राजवैभव पूर्ण या दिल्ली के इतिहास मे वह न भूतो न भविष्यति ही था। दीक्षा के बाद गुरुवर्य की आज्ञा पाकर स्वतत्र विहार किया।

विशिष्ट व्यक्तित्व, असाधारण प्रभाव, जन-मन का तवस्पर्शी ज्ञान, समयोचित सदर्भ का परिज्ञान आदि के द्वारा शीघ्र ही चमक उठे। प्रभावक प्रवचन, अभीक्षण ज्ञानोपयोग, सर्व धर्मो का ततस्पर्शी अध्ययन यह आपकी विशेषता है। आपके प्रवचनो मे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, वेदिक, अवैदिक, आर्यसमाजी, दिगम्बर, श्वेताम्बर आदि भेदो को भुलाकर हजारो को उपस्थिति, यह उल्लेखनीय घटना है। तीर्थंकरो के समवशरण मे जैसा भास होता है

आत्मा तो ज्ञेय है, स्वयंवेद्य है, ज्ञाप्य नहीं; अतः आत्मा के विषय में जो कुछ मैं बताना चाहता हूं वह मैं नहीं हूं और जो अहं (पदवाच्य आत्मा) है, वह स्व' होने से अन्य द्वारा ग्राह्य नहीं, अतः दूसरों को क्या बताउं ?

कि ये हमारी भाषा मे ही उपदेश देते हैं, सर्व भाषा विदो को वहा पर विषय का ज्ञान होता है, उसी प्रकार यहा भी सर्वधर्मावलम्बियो को अपने ही धर्म का प्रतिपादन हो रहा हो, ऐसा प्रतिभासित होता है। अत्यन्त शात वातावरण मे लोग श्रवण पथ कर लेते हैं विषय को। आपका प्रभाव दिगत व्यापी है। जैन मुनियो मे जो अनेक भेद हैं उनमे आपका मनोज्ञ व श्रुत-पारण साधु के रूप मे उल्लेख किया जा सकता है। आपके द्वारा धर्म की महती प्रभावना हो रही है। जैन धर्म के तत्वो से, उसके अनुयायी साधु मार्ग से लोग परिचित हो रहे हैं, एव निकट सपर्क मे आ रहे हैं। आपको दिग्विजय पताका इसी प्रकार लहराती रहे, एव आपके द्वारा इसी प्रकार धर्म का उद्योत होता रहे यह हमारी हार्दिक कामना है।

विद्वानो के सम्बन्ध मे आपको अभिमान है, इसलिए विद्या मे आनन्द मानने वाले आपका नाम सार्थक है। आपके वर्ष बर्द्धनोत्सव प्रसग मे यह श्रद्धाजलि है।

दृढात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मनः ।
मित्रादिभिर्वियोग च बिभेति मरणाद्भृशम् ॥

वन्दन करते हैं

(श्री शान्ति स्वरूप 'कुसुम', बड़ौत)

'वीर' के सम्पादक श्रीमान् राजेन्द्र बाबू का पत्र मिला लिखा है 'वीर' एक गरीब पत्र है और श्रद्धा के वशीभूत होकर ही हम मुनिश्री विद्यानन्द विशेषाक निकाल रहे है। वर्ना तो । लेख अवश्य भेजे। 'वीर' मे उसके लिये स्थान रिजर्व रहेगा" आदि। पत्र पढकर मै दुखी हो गया और रोष भी मुझे कम नही आया। अरबो पति जैन समाज के 'अखिल भारतीय परिषद' का मुख-पत्र है 'वीर'। उस पत्र के सम्पादक को यह लिखने को विवश होना पडा कि—'वीर' एक गरीब पत्र है। उनके इस वाक्य मे हमारी सामाजिक कगालियत की नग्न तस्वीर सामने आ गयी। इसमे हमारे हृदय और आत्मा की दरिद्रता प्रतिबिम्बित है। अरबो की सम्पत्ति का मालिक होने से ही कोई समाज ऐश्वर्यशाली नही कहा जा सकता। उस सम्पत्ति का प्रकाश उस समाज के सर्वांग मे दिखायी पडे, तभी तो उसे हम वैभवशाली कह सकते हैं। श्री राजेन्द्र बाबू का उपरोक्त वाक्य तो एक दरिद्र और कगाल समाज की तस्वीर पेश करता है।

त्रिलोक और त्रिकाल की सर्व सम्पदा के स्वामी महावीर की सन्तान कगाल कैसे हो सकती है ? लेकिन वह है, यह तो उपरोक्त कथन की साक्षी से प्रमाणित है। स्पष्ट है कि हम महावीर के ऐश्वर्य के उत्तराधिकारी नही, उसके द्रोही हैं। इसी कारण हम उससे प्रकाशित न हो सके। ऐश्वर्य तो ईश्वर की विभूति होता है। ईश्वर कौन ? वही जिसे जैन द्रष्टाओ ने महासत्ता कहा है। वस्तु और व्यक्ति मात्र उस महासत्ता के अग हैं, उसकी सन्तान हैं, उसका वैभव हैं। उस महासत्ता का जो सत् है, उसे हम 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्व' कहते हैं। वही ईश्वर है। अर्थात् वस्तु और व्यक्ति मात्र के भीतर जो अनन्त सम्भावना की सामर्थ्य है, जो उपादान है, वही ईश्वर है।

मुनिश्री द्वारा उपदिष्ट विश्वधर्म और हमारा उत्तरदायित्व

श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, बम्बई

हर व्यक्ति और वस्तु के भीतर यह ईश्वर सतत परिणमनशील है और उसमे अनन्त सम्भावी ऐश्वर्य को प्रकट करता रहता है। लेकिन बुद्धिमान मनुष्य जाति के कुछ बलवान लोग जब स्वार्थ और अहकार से प्रमत्त हो जाते हैं, तो वे अन्य वस्तुओ और व्यक्तियो की इस स्वभावगत सत्ता पर बलात्कारपूर्वक अधिकार कर लेते हैं, और उसके स्वतन्त्र ऐश्वर्य का अपहरण कर लेते हैं। यही से सबल द्वारा निर्बल के शोषण की हिसक परम्परा का सूत्रपात होता है। इसी बिन्दु से सृष्टि और समाज मे असत्य, हिंसा, चोरी,

ग्रामोऽरण्यमिति द्वेधा निवासोऽनात्मदर्शिनाम्।
दृष्टात्मनां निवासस्तु विविक्तात्मैव निश्चलः ॥

परिग्रह और व्यभिचार के महापापो का आरम्भ होता है।

हमारा आज का जैन समाज और विश्व-समाज भी इसी महापाप पर आधारित है। कुछ बलात्कारियो ने वस्तुओ और व्यक्तियो के स्वभाव-गत स्वतन्त्र ऐश्वर्य और अधिकार का अपहरण कर लिया है। उन्हे अपने निजी सुख-भोग का दास बना लिया है। मुट्ठीभर लोग सत्ता-सम्पत्ति-शाली होकर महासत्ता के ऐश्वय का बलात् उप-भोग कर रहे हैं और शेष मानवता कगालियत और दासत्व का जीवन बिता रही है। इसी कारण ससार मे युद्ध-विग्रह हैं, वर्ग-विग्रह हैं, गरीबी है, मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण और अनाचार है। परिग्रह को जिनेश्वरो ने महापाप कहा है, यानी उसे सारे पापो का मूल बताया है और भारत मे उस परिग्रह के सबसे बडे पापी हम जैन लोग हैं।

पिछले दिनो आचार्य तुलसीके 'मर्यादा महोत्सव' के अवसर पर राष्ट्र-कवि दिनकर ने इस प्रकार के उद्गार बहुत स्पष्ट व्यक्त किये थे। उन्होने कहा था—'भगवान महावीर का धर्म अपरिग्रह का धर्म है, किन्तु वह उन लोगो के बीच जा फसा है जो घोर परिग्रही हैं। तो परिग्रही लोग महावीर की पूजा करते रहे, सदियां बीत गयी। जैन धर्म की आग पर राख पड़ती गयी।' ' भारत के मूर्धन्य राष्ट्र-कवि दिनकर का हम पर यह आरोप है। इसका क्या उत्तर है हमारे पास? उत्तर तो नही है, पर लज्जा से मूक होकर हमारा माथा झुक जाना चाहिये। और यदि अब भी हमारे भीतर जैनत्व का कुछ सत्व शेष हो तो हमे अपने ऊपर आये इस कलक का निवारण करना चाहिये। न करेंगे तो समय आ गया है कि महाकाल स्वयम् इस महापाप का घटस्फोट करेगा। सत्ता स्वयम् अपने ऊपर सहस्राब्दियो से हो रहे इस बलात्कार और अत्याचार के दुश्चक्र को तोडकर उलट देगी।

श्री राजेन्द्र बाबू ने 'वीर' पत्र की 'गरीबी' को स्वीकार करके हमारे समाज की दरिद्रता का अनायास ही पर्दाफाश कर दिया है। विश्व मान-वता की अपार सम्पत्ति का अपहरण करके अरबो-पति होना, ऐश्वर्य का सूचक नही, कगालियत और दरिद्रता का सूचक है। ऐश्वर्य वह कि जिसकी कल्पवृक्ष छाया तले सब सुखी हो, समृद्धि-मान हो, धनवान हो। जिसमे सभी को अपनी उपादानगत स्वतत्र सम्पत्ति का उपभोग करके, पूर्ण आत्मोन्नति करने की सुविधा और साधन सुलभ हो सके।

'तीर्थकर' के सम्पादक डॉ० नेमीचन्द जैन गत तीन-चार वर्षो से 'तीर्थकर' नियमित निका-लने की निदारुण तपस्या कर रहे हैं। स्वयम् अकेले अपनी स्वल्प आय के बल पर, एक पत्रिका का बहुभक्षी हाथी वे चला रहे हैं। आज यह एक सर्व-स्वीकृत तथ्य है कि 'तीर्थकर' पूरे जैनो के इतिहास मे एक अपूर्व और सर्वोत्कृष्ट पत्रिका है। उसकी प्रशसा और जय जयकार तो सभी करते हैं, पर उसका भार-वहन करने को अकेला

ग्राम और वन यह द्विविध निवास अनात्म द्रष्टाओं के लिए है। आत्मदर्शियों का निश्चल निवास तो उनका अपना एकान्त आत्मा ही है।

एक व्यक्ति रात-दिन पिस रहा है। जैन समाज इसे अपना सामाजिक कर्तव्य और दायित्व नही मानता कि 'तीर्थंकर' की आर्थिक बुनियाद अटूट हो जाये, और वह कायम रहकर उत्तरोत्तर उन्नत होता हुआ जिनेश्वरी सस्कृति की सेवा कर सके। वह हमारी सामाजिक चिन्ता का विषय नही, वह अकेले नेमिचन्द जैन की चिन्ता है, उनका अपना निजी सघर्ष है। उसकी आजीवन सदस्यता ग्रहण करके, या बेहद आजीजियाँ करवाकर, उसमे अपने उद्योग व्यापार का एकाध विज्ञापन देकर ही, हम अपने कर्तव्य की पूर्णाहुति समझ लेते हैं।

क्या इस वस्तु-स्थिति के चलते हम अपने को समाज कह सकते हैं? यह समाज नही, पारस्परिक स्वार्थों के समझौतो का सगठन है। समाज वही कहा जा सकता है, जो अपने हर सदस्य के अस्तित्व, जीवन और सद्प्रवृति के प्रति उत्तरदायी हो। जो समाज अपने हर अग के प्रति उत्तरदायी नही, जो शासन अपनी हर प्रजा के प्रति उत्तरदायी नही, वह समाज नही— वह शासन नही, वह महज मुट्ठीभर सत्ता-सम्पत्ति-स्वामियो द्वारा शेष मानवता के शोषण का षड्यन्त्र है।

पूज्यपाद गुरुदेव विद्यानन्द स्वामी ने इसी अधर्म का मूलोच्छेद करने के लिये हमे विश्वधर्म का पाठ पढाया है। विश्वधर्म वह, जो विश्व के प्राणि मात्र और वस्तु मात्र का स्व-धर्म है। ऐसा धर्म जिसकी छत्रछाया मे, सारे प्राणि, मनुष्य और उनकी उपभोग्य वस्तु-सम्पदा अपने स्व-भाव मे परिणमन कर सके, स्वतन्त्र रह सके और निर्बाध रूप से विकास करते हुए चरमोत्कर्ष पर पहुच सके। सत्य, अहिसा, अचौर्य, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य के आचरण द्वारा ही वह विश्वधर्म जीवन मे फलीभूत और चरितार्थ हो सकता है। परिग्रह ही वह भूलभूत महापाप है, जिसमे असत्य, हिसा, चोरो और व्यभिचार गर्भित भाव से मौजूद हैं। उस परिग्रह के परा कोटि के अपराधियो की मूर्धन्य श्रेणि मे जैन समाज भी प्रतिष्ठित है। क्या हमे अपनी इस नग्न असलियत का भान कभी होता है? नही होता, यह तो जाहिर ही है क्योकि हमारी आखो पर अहकार-ममकार और दुर्वृण स्वार्थ की पट्टिया बधी हुई हैं। लाखो-करोडो मानवो को निर्धन, कगाल, निर्दलित रख कर ही कुछ लोग, करोडो की सम्पत्ति के मालिक और उपभोक्ता हो कर रह सकते हैं। निरन्तर मानुष हिंसा के बिना, सम्पत्ति का सचय सम्भव नही। ऐसी चक्रवृद्धि मानुष-हिमा के पीढो-दर पीढी अपराधी रह कर, हम अपने को अहिसक कहते हैं? इससे बडा झूठ और आत्म-बचना और क्या हो सकती है?

पूज्य मुनिश्री ने जो हमे 'विश्वधर्म' का सन्देश दिया है, उसका स्पष्ट अर्थ यही है कि हम अपने भीतर बद्धमूल इस महापाप को पहचाने, उससे अपने को मुक्त करे और विश्व-तत्व की स्वभावगत स्वतत्र सत्ता के आधार पर, सर्वोदयी नूतन समाज-रचना करने की दिशा मे हम जैनी

आत्मानमन्तरे दृष्टवा दृष्ट्वा देहादिक बहिः।
तयोरन्तर विज्ञानादभ्यासादच्युतो भवेत्॥

लोग पहल करे।' तीर्थंकर या सद्गुरु का काम है, केवल अणिशुद्ध सत्य को प्रकाशित करना, उसका प्रवचन करना और उसके द्वारा प्राणिमात्र के मुक्ति-मार्ग का निर्देशन करना। वे सदा तत्वार्थ को दिशा-सकेत की भापा मे कहते हैं। अपने द्वारा उपदिष्ट विश्व-तत्व या विश्वधर्म के मूर्तिकरण की ब्योरेवार योजना प्रस्तुत करना उनका काम नही। मुनिश्री ने हमे विश्वधर्म का महामत्र प्रदान किया है। यह एक बीज-मंत्र है। इसके मूल भावार्थ और व्याप्ति को हमे स्वयम् समझ कर, उनके इस धर्म-शासन के आलोक मे, पहले हमे स्वयम् अपनी स्थिति की जाच-पडताल करनी होगी, फिर यह देखना होगा कि हमारी अपनी विकृति के कारण किस प्रकार सारा विश्व और समाज विकृत, सत्य-च्युत और पथ-भ्रष्ट हो गया है और तब सब से पहले अपने पाप का पश्चाताप और प्रतिक्रमण करना होगा। आत्म-शुद्धि करनी होगी। यही तो सामायिक की प्राथमिक भूमिका है। इस प्रतिक्रमण के द्वारा पहले अपनी स्थिति को सत्यनिष्ठ अहिंसक और अपरिग्रही बनाकर ही, सारे जगत् और समाज मे हम अहिंसक, शोषण-मुक्त विश्वधम की स्थापना कर सकते हैं।

लेकिन हुआ यह है कि मुनिश्री द्वारा उपदिष्ट इस 'विश्वधर्म' को भी हमने, 'अहिंसा परमो धर्म' की तरह मात्र एक निर्जीव नारा वना लिया है। राजनीतिक पार्टी के न्यस्त-स्वार्थी झडे और नारे की तरह ही इसे हमने अपने स्थापित स्वार्थी प्रतिष्ठान और प्रभुता की प्रतिरक्षा का एक हथियार वना लिया है। सदियों से हम पच-अणुव्रत और पच महाव्रत की केवल निष्प्राण मूर्ति-पूजा करते रहे हैं। हमारे जीवन से उनका कोई सम्बन्ध नही। केवल कुछ गिने चुने बाह्य श्रावकाचारो और श्रमणाचारो के निर्जीव रूढि-पालन मे ही हमने अणुव्रतो और महाव्रतो की पूर्णाहुति समझ रक्खी है। पानी छानकर पोने और रात्रि-भोजन त्याग को ही हमने अहिंसकता का अचूक प्रमाण मान लिया है। 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' का उच्चार करते-करते हमे सदियां वीत गई। पर अपने नित्य के जीवन मे हम 'परस्परोपग्रह स्वार्थानाम्' को ही बेखटक और निश्चिन्त भाव से जी रहे हैं। हमारे अणुव्रतो और महाव्रतो ने हमारे जीवनो को नही वदला, कोई सर्वकल्याणी क्रान्ति उनसे पृथ्वी पर प्रतिफलित न हुई।

अव मुनिश्री ने जब हमे 'विश्वधर्म' का उपदेश मौलिक और नूतन भापा मे दिया है, तो हम उसे भी विना समझे-बूझे निष्प्राण नारे की तरह रट रहे हैं। उसे भी हमने विश्व-कल्याण का जीवन्त आचार-मार्ग वनाने के वजाय, मात्र अपने स्वार्थ-कल्याण का कवच वना लिया है। सारी दुनियां को अनेकान्त, सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य का दिगन्तभेदी उपदेश सुनाने मे हमारे समान सूरमा दूसरा कोई नही। अनेकान्त, अहिंसा और अपरिग्रह की गर्जना हमसे अधिक उच्च स्वर मे ससार के किसी अन्य धर्म-सम्प्रदाय के लोग नही करते। इन कल्याण-मन्त्रो का मानो हमने ठेका ले रक्खा है। पर यह कैसा दयनीय और हास्यास्पद व्यग है कि एकान्त कट्टरवादिता, हिंसा और

अन्तःकरण में आत्मा को तथा बाहर देहादि को देखकर उन दोनों के भेद-विज्ञान का अभ्यास करने से यह जीवात्मा (शुद्ध होकर) अच्युत (अक्षय मोक्षरूप) हो जाता है।

परिग्रह का हमसे बडा अपराधी अन्य कोई धर्म-समाज ससार मे नही। हम जैन धर्म के अतिरिक्त अन्य सारे धर्मो के देव, शास्त्र और गुरू को मिथ्या दृष्टि कहते थकते नही। पानी छानकर पीने, हरी सब्जी का त्याग-नियम या दिवा-भोजन मे हम सूक्ष्म जीवो की रूढ दया पालने का प्रदर्शन भले ही करते हो, पर हमारे हृदय करोडो शोषित पीडित मानवो के दु ख-दैन्य को देखकर जरा भी नही पसीजते। पुण्य-पाप और कर्म-सिद्धान्त की न्यस्त-स्वार्थी मिथ्या व्याख्याये करके, उनकी ओट हम अपने सम्पत्ति-सचय के महापाप परिग्रह का बराबर ही आत्म-समर्थन करते जा रहे हैं।

असह्य है यह विडम्बना, यह विद्रूप। बहतर होगा, हम चुप हो जाये। अनेकान्त, अहिंसा, अपरिग्रह की उच्च स्वर मे नारा-बुलन्दी करने से हम बाज आये। विश्व-धर्म के आलोक-स्तम्भ विश्व-पुरुष भगवान महावीर की ढाई हजार वी निर्वाण-जयन्ती के उपलक्ष्य मे, उनके सर्वोदयी कल्याण-मन्त्र 'अनेकान्त-अहिसा-अपरिग्रह' की निरर्थक नारे-बुलदी करके हमने आकाश को बहरा कर दिया है। किन्तु करने के नाम पर केवल इतना ही है कि अखिल जेन परिषद् का मुख-पत्र 'वीर' इस धूंआधार के बीच भी गरीब है, असमर्थ है। 'तोर्थंकर' को बनाये रखने की कोशिश मे डा० नेमीचन्द की हड्डी-पसलो एक हो गई है। लेकिन निर्वाण जयन्ती के प्रदर्शनो, समारोहो, स्मारको, पिष्टपेशित, स्मारक-ग्रन्थो के प्रकाशन आदि के लिये लाखो की योजनाये बन रही हैं। आत्म-ज्ञान की उद्बोधक कैवल्य-सरस्वती मे हमे कोई रस नही, हमारी दिलचस्पी का एकमात्र केन्द्र है—आत्म-प्रदर्शन, प्रतिष्ठा- प्रतिष्ठान का दृष्टिकरण और यशोगान। हमे शायद पता नही, क्योकि हम कुए के मेढक हैं, पर बाहर दुनिया हमारे उच्चार और आचार के बीच जो भयकर खन्दक है, उसका मजाक उडा रही है, उस पर व्यग का अट्टहास कर रही है।

यदि हम सच्चे अर्थ मे भगवान महावोर, सद्गुरू विद्यानन्द स्वामी और जिनवाणी को सन्तान हैं, उनके आराधक हें, तो हमारे युग-तीर्थ के प्रवर्तक, विश्व-परित्राता महावीर के इस विश्व व्यापी निर्वाणोत्सव के अवसर पर, उनके प्रति अपनी सचाई को ज्वलन्त आचरण द्वारा प्रमाणित करना होगा। आज हमारा देश ज्वालामुखी पर बैठा हुआ है। किसी भी क्षण ऐसो हिंसक क्रान्ति का विस्फोट हो सकता है, कि जो धर्म के मूलायतनो तक को जमीदोज कर सकता है। उसके फलस्वरूप यदि हमारे देश मे साम्यवाद जैसी कोई आत्म द्रोही और धर्मद्रोही तानाशाही व्यवस्था आ जाये, तो उसके एक मात्र अपराधी और उत्तरदायी होगे, हमारे देश के स्वेच्छाचारी सत्ताधीश और सम्पत्ति-स्वामो। कोटि-कोटि प्रजा जब आज जीवन-साधनो की दुर्लभता और भयकर महगाइयो के राक्षसो जबडे मे पडी कराह रही है, हर एक मनुष्य जब दूसरे का अविश्वासी, बैरी और शोपक हो गया है, तब भी जो लोग लाच-रिश्वत और काला बाजार करके भी अपनी

देहान्तरगलेर्बीजं देहेऽस्मिन्नात्मभावना।
बीजं विदेह निष्पत्तेरात्मन्येवात्म भावना॥

व्यक्तिगत सम्पत्ति को बेहिचक गुणानुगुणित करने मे निघृण और निर्मम हृदय से डूबे है, क्या वही लोग फौलादी पजे से चलने वाले साम्यवाद को इस देश मे आमन्त्रित नहीं कर रहे ? पू जीवाद से बडा साम्यवाद का और कोई मित्र नही। तानाशाही साम्यवाद से बडा धर्म का कोई शत्रु नही। निष्कर्ष मे हाथ आता है कि पूंजीवाद से बड़ा धर्म का कोई हत्यारा नही।

यदि हम मुनिश्री के 'विश्व धर्म' के प्रति अणु मात्र भी सच्चे है, यदि हमें भगवान महावीर से किंचित भी हार्दिक प्रेम है, तो उन त्रैलोक्येश्वर प्रभु के इस सार्वभौमिक निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य मे हमे अहिंसक और अपरिग्रही क्रान्ति का कोई ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित करना चाहिये। उसका एक सचोट, मूर्त रूप यह हो सकता है कि हमारे चारो जैन सघो के सम्पत्ति-स्वामी अपने सच्चे बैंक-बेलैंस और अपनी चालू आय का पचास प्रतिशत, भारत की गरीबी, शोषण और अभाव से पिस रही प्रजा के सर्वांगीण अभ्युदय के लिये दान कर दे। भारी रिश्वते देकर शासन को भ्रष्ट करने और काले बाजारी पैसे के सचय का त्याग कर दे। यह एक बुनियादी, ठोस और खरी कसौटी है-हमारे जैनत्व की, हमारे अहिंसा और अपरिग्रह पर आधारित विश्व धर्म की। इस पर यदि हम सच्चे नही उतरते, तो हमारे अहिंसा, अपरिग्रह और विश्वधर्म के नारे झूठी बकवास हैं। इस आचारहीन निरर्थक नारे-बुलदी के द्वारा हम विश्वधर्म, जैनधर्म, भगवान महावीर, और विश्वधर्म के मन्त्रोपदेष्टा श्रीगुरू विद्यानन्द स्वामी की अवमानना करते हैं, उन्हे प्रवचित करते हैं।

यही एक मात्र तरीका है, जिससे महावीर के अनुयायी हम जैन लोग, अपने अहिंसकता के दावे को सत्य सिद्ध कर सकते हैं। ऐसी पहल यदि आज जैन समाज के धनाधिपति करते हैं, तो महावीर एक बार फिर से जीवन्त होकर धरती पर चलते दिखायी पडेगे और उनका अहिंसक धर्म-शासन मानव-जाति के इतिहास मे एक अपूर्व और परम कल्याण क्रान्ति लाने के लिये अमर हो जायेगा।

[इस लेखक मे प्रस्तुत सारे मन्तव्यो और वक्तव्यो का पूरा उत्तरदायित्व लेखक पर है, सम्पादक पर नही।—ले०]

एक शरीर से दूसरे शरीरों को धारण करने का मूल कारण इस देह में आत्मभावना करना है। इसी प्रकार देह-मुक्त होने का मूल बीज आत्मा में ही आत्मभावना है।

श्री १०८ पूज्य मुनि विद्यानन्द जी की धर्मवत्सलता को देखते हुए पण्डित प्रवर आशाधर जी का यह कहना सर्वथा सगत व सामयिक प्रतीत होता है—

जिनधर्म जगद्बन्धुमनुबद्धमपत्यवत् ।
यतीन् जनयितु यस्येत् तथोत्कर्षयितु गुणै ॥
सागारधर्ममृत २–७१

अर्थात् जिस प्रकार वश को परम्परा को चालू रखने के लिये सुयोग्य सन्तान के उत्पन्न करने का प्रयत्न करना आवश्यक होता है उसी प्रकार लोककल्याणकारी जैन धर्म की परम्परा को चलाने के लिये साधुओ के उत्पन्न करने का प्रयत्न करना आवश्यक है। साधुओ के होते हुए भी यदि वे गुणो से उत्कृष्ट प्रतोत नही होते हैं तो उन्हे गुणो से उत्कृष्ट करने का प्रयत्न भी अनिवार्य होता है।

यह आवश्यक इसलिये है कि धर्म की परम्परा मुनिजन के आश्रय से ही चल सकती है श्रावको के आश्रय से नही। इसका कारण यह है कि श्रावक जन सदा कौटुम्बिक अनेक चिन्ताओ से ग्रस्त रहते हैं। परन्तु मुनिजन उन कौटुम्बिक चिन्ताओ से सर्वथा मुक्त हो जाते है। इतना ही नही, वे तो अपने शरीर की ओर से भी निर्ममत्व रहते हैं शरीर की स्थिति के लिये भोजन अनिवार्य है पर वे उसे भी विधि के अनुरूप मधुकर वृत्ति से (सा ध ६–१७)—भ्रमर के समान पुष्प स्थानीय गृहस्थो को कष्ट न पहुंचाते हुए, भिक्षावृत्ति से ग्रहण किया करते हैं। उनका परावलम्बन बहुत कुछ छूट जाता है।

हम प० आशाधर जी की उक्त सद्भावना को मुनि विद्यानन्द जी मे चरितार्थ देखते हैं। उनका अधिकाश समय स्वाध्याय पुस्तक लेखन व धर्मोपदेश मे बीत रहा है। वे जिनवाणी के अनन्य उपासक हैं। उनके अन्त करण मे धर्म प्रचार की लगन है, प्रवचन उनके प्रभावक होते हैं, हजारो श्रोता उनके भाषणो को मत्रमुग्ध के समान शान्ति से सुनते हैं। जहा उनका चातुर्मास होता है वहा का धार्मिक वातावरण उत्साहपूर्ण बन जाता है। उनके सकेत मात्र से ऐसे महत्वपूर्ण आयोजन होते रहते हैं, जिनके आश्रय से धम व साहित्य का प्रचार उत्तरोत्तर वृद्धिगत हो रहा है। इन्दौर व मेरठ के चातुर्मासो मे क्रम से वीर निर्वाण ग्रन्थ प्रकाशन समिति और वीर निर्वाण भारती नामक सस्थाये स्थापित हुई हैं, जिनके द्वारा उत्तम साहित्य प्रकाशित होने के साथ ही विद्वानो को पुरस्कृत भी किया जा रहा है।

जिनवाणी के सच्चे उपासक

प० बालचन्द्र जैन शास्त्री, दिल्ली

**अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः ।
त्यजेत्तान्यपि सप्राप्य परमं पदमात्मनः ॥**

मुनिश्री के द्वारा लिखी गई पुस्तको मे 'तीर्थंकर वर्धमान' एक महत्वपूर्ण कृति है। उसमे भगवान् महावीर के जीवन वृत्त पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। महावीर की जन्म कुण्डली व ईस्वी सन् के अनुसार कल्याणको की तिथिया आदि कुछ नवीन विशेषताये हैं।

भगवान् महावीर के २५०० वे निर्वाण महोत्सव के लिये जो अनेक आयोजन हो रहे हैं उनमे आपकी प्रेरणा बहुत कुछ कार्य कर रही है। जैन शासन के ध्वज के निर्णय मे आपकी अत्यधिक सहायता रही है।

भगवान् महावीर के आप यथार्थ अनुयायी हैं। आपका धार्मिक क्षेत्र व्यापक है। विश्व धर्म के रूप मे आप जैन धर्म के प्रबल प्रचारक है। आचार्य समन्तभद्र ने भगवान् महावीर के शासन को समस्त आपत्तियो का निरसन करने वाला सर्वोदयतीर्थ कहा है (युक्त्यनुशासन ६२)। ऐसे लोकोपकारी सत के प्रति श्रद्धा से मस्तक स्वयमेव झुक जाता है।

आत्मार्थी प्रथम अव्रतों का परित्याग करे तथा व्रतों में परिनिष्ठा रखे। तदनन्तर परम आत्मपद को प्राप्त कर उन व्रतों को भी छोड़ दे।

वीतराग क्यों कहा जाता है ?

कवि ज्ञानचन्द्र जैन, हलवाई खाना, भिण्ड (म प्र)

हे वीतराग, हे वीतराग, हे वीतराग।

है राग जिन्हो का बीत गया और मोह न जिनको छलता है।
जिनने अपने को पहचाना, उनको ही यह पद मिलता है।
नही भेष देख के भेप धरो, यह भेष स्वय ही बनता है।
नही रूप देख के रूप धरो, यह रूप स्वय ही ढलता है ॥

हाथी घोडा और धन दौलत सब धरती पर रह जाता है।
तू कौन कहा से आया है, किससे क्या तेरा नाता है ?
इस राग द्वेष और मोह जाल मे क्यो निज को भटकाता है।
जब लाद चलेगा बन्जारा सब ठाठ पडा रह जाता है ॥

पूछो 'वर्णी" की वाणी से श्रावक कुल कैसे मिलता है।
जिनने अपने को .....

घर के राजा बनने थे और बन के राजा बन जाते हैं।
क्या मुनि वशिष्ठ से पण्डित ज्ञानी (ज्ञानी) न कहलाते है।
देव क्या दानव कर्मो ने नही किसी को छोडा है,
अब भी निज को पहचाना तो जीवन कितना थोडा है ॥

जो होना है सो निश्चित है, टाले न किसी के टलता है।
जिनने अपने को

खोलो मन के उर कपाट यह जैन धर्म एक ताली है।
अब भी न बाजी जीत सका तो दाव गया तेरा खाली है।
महका न पुष्प बनकर जीवन तू कैसा इसका माली है।
कथनी मे अगर फर्क हैगा तो करनी तेरी काली है।

होगा जब तक न पुण्य प्रबल भाग्य न सुमन बन खिलता है।
जिनने अपने को पहचाना, उनको ही यह पद मिलता है ॥

आरम्भे तापकान् प्राप्तावतृप्ति प्रतिपादकान्।
अन्ते सुदुस्त्यजान् कामान् काम कः सेवते सुधीः ॥

मौलिक व्यक्तित्व का अनुपम रहस्य

(पं० कालीचरण पौराणिक, मेरठ)

दुलर्भं त्रयी ऐतत भगवतकृपाग्रहेतुकम ।
मनुष्यत्व मुमुक्षत्वमहापुरुषस्यसम्माश्रेय ॥

ग्राद्य शकराचार्य की यह ग्रमृतवाणी भाव उदरेक का जीवन मे मूल स्रोत बनो रहने से भारत के मूर्धन्य सतो का दर्शन कराने मे खरी उतरी। साथ ही इसी के फलस्वरूप ब्रह्मीभूत श्री शकराचार्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज का सान्निध्य प्राप्त कराने मे भी सार्थक हुई। यही नही "विनुसतसग विवेक न होई" के नाते १०८ फलाहरि बाबा की विशेष कृपा भी दास पर पिछले ४० वर्षो से बनी रही। उन्होने जहां एक ग्रोर श्री रामभक्ति पटक गुरुमत्र दिया वहां दूसरी ग्रोर त्यागमय जीवन विताने पर भी बल दिया। दोनो महात्माग्रो की छत्रछाया मे जीवन न केवल समुन्नत ही हुग्रा ग्रपितु साधनामय जीवन बन गया—स्वाध्याय व सतसग मे रुचि तथा निरन्तर साधू सेवा निस्सन्देह इन दोनो महात्माग्रो का कृपा प्रसाद ही है।

पिछले ५० वर्षो से शास्त्र ग्रध्ययन, जपहोम, कर्मकाण्ड, उपासना जोवन के ग्रग तो बन गये किन्तु विद्वानो मे फैला हुग्रा भ्रम खलता रहा—उत्कट ग्रभिलाषा यही रही कि ग्राधुनिक विचार-धाराग्रो के सम्बन्ध मे भारतीय ढग का स्पष्टी-करण किसी न किसी संत की वाणी से मिल ही जाय तो मार्ग दर्शन हो ग्रौर साथ ही साथ जन-हित मे कार्य करने की क्षमता भी बढे।

सौभाग्य से जीवन की सध्या वेला मे लेखक को एक ऐसे जैन सत के दर्शन हुये कि जिन्होने ग्रपने भाषणो, लेखो तथा उपदेशो के माध्यम से ग्राज के युग मे फैली हुई सभी भ्रान्तियो का निराकरण ही नही कर दिया ग्रपितु जीवन के प्रति दृष्टिकोण को ही बदल दिया ग्रौर कभी-कभी तो मैं यह भी सोचता हूं कि यदि मुनि महाराज से मेरी भेट १५ वर्ष पूर्व हो गई होती तो साधना को नया मोड ही मिल जाता। श्री राम भक्ति का स्रोत, साहित्य व स्वाध्याय की रेखाये, नारी का समाज मे स्थान, साधुता की परख, ग्रादर्श चरित्र के मापदण्ड, मुक्ति व मोक्ष का स्पष्टीकरण तथा भारतीय सस्कृति व सभ्यता का भव्य रूप क्या हो सकता है?

इस सब पर मुनि जो के बिचार बडे प्रभावक एव मौलिक हैं।

साधुता का परिचय—जिसके समीप बैठते ही ग्रात्मा मे शान्ति-भर जाय उसी को साधु कहा जा सकता है—साधु के सामिप्य से ही उच्चश्यता, पवित्रता तथा ग्रात्मोन्नति की भावनाग्रो का उदय होता है—साधु की वाणी से निकले हुए शब्द ग्रात्मा तक पहुंच जाने ही चाहिये—साधू सतसंग

ग्रारम्भ मे जो सन्ताप उत्पन्न करने वाले है, प्राप्त होने पर जिनसे तृप्ति नहीं होती तथा ग्रन्त में जिन्हें, त्याग [illegible] उन भोगोपभोगों को कौन बुद्धिमान सेवन करना चाहेगा?

का फल है कि साधू व्यक्ति को उसके सच्चे स्वरूप का बोध करादे—साधू की सगति करने से व्रत, तप, त्याग व सयम मे रुचि होनी स्वभाविक है—साधू का उपदेश हो 'राग को त्याग दो' भक्ति को अनुराग लो, साधु सुलभ हैं साधुता दुलर्भ है। धर्म कथाओ के सुनाने वालो को अपने निजी जीवन के गुणो मे विकास करते रहना अनिवार्य है, केवल विद्वत्ता ही काम नही आती है—मुनि महाराज की घोषणा है कि समथ व सक्षम वक्ता उसी को कहा जायगा जिसकी वाणी को श्रोता स्तब्ध होकर सुनते थे। लोक प्रबोधकारी भाषणो को हो महाराज श्री उपदेश के योग्य मानते हैं। मुझे लिखने मे सकोच नही है कि चरित्र के विषय मे मुनिजी बहुत जागरूक रहने पर बल देते रहते हैं। उनका यही कथन रहता है कि मनोनिग्रह की भूमि पर ही त्याग की प्रतिष्ठा हो सकती है—चरित्र बिना ज्ञान और दर्शन का रथचक्र आगे नही बढ सकता है। मानव चरित्र को महाराज श्री सुगन्धि का भण्डार तथा सुन्दरता का आगार मानते हैं—चरित्र के उल्लघन को मुनिराज सबसे बडा अपराध मानने के साथ साथ मनुष्य की सबसे बडी सम्पत्ति भी समझते हैं।

अत सक्षेप मे मुनि जी के उपदेशों को ही अपने व्यवहार दर्शन मे उतारने से लेखक एक प्रबुद्ध मानव ही नही बना है अपितु मौन साधक भी बन गया है-क्या ही अच्छा होता कि मेरी भेट मुनिश्री से अब से कही १५ वर्ष पूर्व हो गई होती तब तो मै जीवन मे सचमुच उपकृत हो जाता।

यज्जीवस्योपकाराय तद् दे हस्यापकारकम्।
यद्देहस्योपकाराय तज्जीवस्यापकारकम्॥

गत ६–७ वर्षो मे ६–७ बार तीन स्थानो पर मुनिश्री के दर्शन करने का सुअवसर मिला, दिल्ली मे, श्री महावीर जी मे और मेरठ मे। परोक्ष मे मेरे विद्यार्थियों ने भी मेरी ओर आपका ध्यान आकृष्ट किया जिसके फलस्वरूप मुझे आपके आशीर्वाद मिलते रहे, उपहार स्वरूप उद्‌बोधक पुस्तके भी मिलती रही। एक बार घडी का एक चित्र मिला जो समय के मूल्य का निर्देशक था। ये अवसर मेरे लिए कर्तव्यबोध के अवसर हैं, पथ-निर्देशक इसीलिए अमूल्य। जब भी मैं आपसे मिला आपने अपनी स्वाभाविक मनमोहक प्रसन्न मुख-मुद्रा से मुझे प्रसादमयी मन स्थिति मे ला दिया। कई बार मेरठ मे तो आपने मानो मेरे सिर पर अपना वरद हस्त ही रख दिया। तीन चार बार मिलने का समय दिया। उच्चस्तरीय अध्ययन अनुसन्धान सस्थान (इसका प्रधान कार्यालय जयपुर मे है) की गति-विधि का परिचय प्राप्त किया। उसकी योजनाओ से सन्तुष्ट होकर उनकी सफलता के लिए आशीर्वाद दिया। आपने कहा कि हमे कार्य करते रहना चाहिए। अच्छे कार्यो मे कठिनाइया आती ही रहती हैं। वे भी समय रहते दूर हो जाएगी। यह है आपकी महानता, प्रोत्साहन की अपूर्व विधि। आपकी बात से मुझे ऐसा लगा कि ज्ञान के क्षेत्र मे काम करने वाले लोगो की कठिनाइयो से आप निकटता से परिचित हैं। उनसे आपकी गहरी सहानुभूति है जब भी मै आपसे मिला मैंने आपको अध्ययन मे, किसी ज्ञान सम्बन्धी चर्चा मे या विद्वानो को ज्ञान-मार्ग मे रत रखने के उपायो की चिन्ता में व्यस्त पाया। समय का आप बहुत ध्यान रखते हैं। जिस कार्य के लिए आपने जो और जितना समय निश्चित किया है उसी और उतने ही समय मे आप उस कार्य को सम्पन्न कर लेते है।

दर्शन, ज्ञान और चारित्र्य तीनो के सम्यक्त्व को साकारता प्रदान करने वाले मुनिश्री अपने

मुनिवर श्री विद्यानन्द जी

प्रेरक संस्मरण

(प्रो० प्रवीण चन्द्र जैन जयपुर)

तप पूत पावन व्यक्तित्व के साथ इन दिनो तीर्थंकर भगवान महावीर के लोककल्याणकारी जीवन को जन जन तक पहुंचा देने की दिशा मे जुटे हुए हैं। निष्ठा के अनुरूप साधन स्वतः जुडते जा रहे हैं। अनेक कलाकार और विद्वान आपके विचार और भावना को चित्रित और शब्दित करने मे अपने जीवन की सफलता मान रहे हैं। लक्ष्यो के अनुसार काम होते जा रहे हैं।

भगवान महावीर द्वारा प्रचारित और प्रसारित जैनधर्म सकीर्ण धर्म नही है, वह तो विश्व धर्म है,

जो पदार्थ जीव के लिए उपकारक है, वे देह के लिए अपकारक हैं तथा जो-जो देह के लिए उपकारक हैं; वे जीव के लिए अपकारक हैं।

विश्वके कल्याणके लिए है, यह बात आपके प्रत्येक प्रवचन से, प्रत्येक लेख से और प्रत्येक चर्चा से ध्वनित होती है। शाश्वत जीवन मूल्यो से सम्पन्न विश्वधर्म के महान आदर्शो की प्रतिष्ठा मे अपनी तपोमण्डित रागद्वेष विहीन साधनाओ के साथ लगे हुए ये महामानव निश्चय ही समाज को लोकमूढता एव साम्प्रदायिक सकीर्णताओं के जाल से मुक्त कराके उसे लोक कल्याणकारो दिशा मे प्रगतिशील कर सकेंगे। जो भी उनके पास आयेगे तामसिकता से हटकर सात्विकता की ओर बढेगे। अशुभ से शुभ की ओर, और फिर शुद्ध की ओर।

ऐसे मुनिवर को, महामानव को उनकी ५० वी जन्म-जयन्ती के शुभ अवसर पर मैं अपनी श्रद्धापूर्ण नमस्कारांजलि अर्पित करता हूं और कामना करता हू कि, उनकी ऐसी अनेक जयन्तिया सांसारिकता-दिग्ध मानव के पथ को प्रशस्त और आलोकित करने मे सहायक हो।

बध्यते मुच्यते जीवः सममो निर्ममः क्रमात् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन निर्ममत्वं विचिन्तयेत् ॥

आज से करीब ८ वर्ष पूर्व प्रथमबार जब मैंने जैन बाल आश्रम दरियागज दिल्लो मे उस तेज पुज महात्मा के दर्शन किये तो एक अलौकिक आनन्द मे मन निमग्न हो गया। ये अवस्था पता नही कब तक रहती यदि कुछ शब्द मेरे ध्यान को न तोडते……

'कहा कार्य करते हो?'

'आकाशवाणी मे।'

'क्या वहा से जैन धर्म सम्बन्धो भजनो का प्रसारण नही हो सकता ?'

इस शब्द ने मस्तिष्क को झझोड दिया, शरीर मे बिजली सी कोधी। जो कभी सोचा भी नही था वह प्रश्न इस महात्मा ने सरलता से कर दिया। देश को वाणी, आकाशवाणी मे ऐसा क्यो नही हो सकता। किन्तु उत्तर देने का साहस न हुआ, कुछ सोचकर मैं बोला

'यदि महाराजश्रो का आशीर्वाद रहा तो अवश्य ऐसा होगा'

इस जरा से साक्षात्कार ने सजीवनी का सा असर किया तथा उसी दिन से दैन दिन यही चिन्ता रही कि कैसे महाराज जी की आज्ञा पूरी की जाए।

होनहार बलवान होती है। आकाशवाणो के चीफ प्रो० आचार्य बृहस्पति जी जब महाराज जी के दर्शनो को गये तो सौभाग्य से मैं भी वही था। आकाशवाणो से भजनो के प्रसारण की चर्चा चल पडी। आचार्य बृहस्पति का सुझाव था कि यदि ऐसी किसी सस्था का गठन हो जो जैन भजनो को सग्रह करके रिकार्डिग करा दे तो प्रसारण की सुविधा हो सकती है।

डूबते को तिनके का सहारा काफो होता है। उसी दिन से मुनिश्री का आशीर्वाद प्राप्त कर 'श्रमण जैन भजन प्रचारक सघ' की स्थापना हुई। हमारे काफी भजन सग्रहीत हो गये थे रिकार्डिग भी आकाशवाणी मे भेज दी गयी थी। किन्तु मुझे और मेरे साथियो को ऐसा लगा कि

एक संस्मरण

(श्री सतीश जैन दिल्ली)

कार्य तीव्र गति से नही चल रहा, इसलिये हम लोगो मे निराशा और खिन्नता सी आ गई।

सघ के साथी मुनिश्रो से यात्रा के दौरान मिले और यह बताया कि कार्य शैथिल्य आ गया है। मुनिश्री ने कहा—

'कौन कहता है कि ये शिथिलता है'

क्या कभी व्यापार मे घाटा आने से व्यापारी व्यापार बन्द कर देता है। क्या फैक्टरी मे आग लगने से फैक्टरी बन्द हो जाती है। बहुत अच्छा कार्य चल रहा है चलाते रहो, मैं पूर्ण सन्तुष्ट हूँ। ये शब्द नही थे : अमृत वाणी थी। निराशा फट गई, आलस भाग गया। आशा जागी, उत्साह खडा हो गया और आज जो जैन भजन आकाशवाणी से आप सुनते हैं मुनिश्री की प्रेरणा का

ममत्वशील जीव बन्धन को प्राप्त होता है तथा ममता रहित मुक्त हो जाता है; अतः सम्पूर्ण प्रयत्न से निर्ममत्व का ही चिन्तन रखना चाहिए।

ही प्रसाद है। 'श्रमण जैन भजन प्रचारक सघ' का नही। इसमे मुनिश्री की आशावादिता का प्रत्यक्ष दर्शन होता है।

एक फ्रेंच महिला कालेट मादाम भारतीय सस्कृति पर पी-एच० डी० का विषय चुनने के लिये मुनिश्री के दर्शन करने आयी, और बोली

'मैं धर्म आदि मे विश्वास नही करती धर्म को माना कैसे जाय ?'

'धर्म मानने की चीज नही है यह तो आत्मा से ज्ञेय है' उत्तर मिला।

'कैसे ?' महिला का प्रश्न था

'यदि कोई आपके सिर पर डण्डा मारे तो कैसा लगेगा ?'

'बुरा'

'और यदि दूसरा उस पर मरहम पट्टी करे तो कैसा ?'

'अच्छा'

बस तो जो अच्छा लगे वह धर्म और जो बुरा लगे वह अधर्म।

धर्म की इतनी सरल व्याख्या सुनकर वह महिला इतनी प्रभावित हुई कि उन्होने अपना पी-एच० डी० का विषय जैन दर्शन से सम्बद्ध ही चुना।

अब तक हम पढते आये थे जब-जब ससार मे अज्ञानान्धकार बढता है, ज्ञान का ह्रास होता है, धर्म का विनाश होता है, अधर्म का उत्थान होता है तब तक दिव्य शक्ति ससार के लोगो को मार्ग दर्शन एव धर्म की प्रतिष्ठा के लिये इस विश्व मे अवतरित होती आई है, किन्तु आज प्रत्यक्ष इसका अनुभव हुआ। आज से ५० वर्ष पूर्व दक्षिण भारत मे महाराष्ट्र प्रदेश स्थित शेडवाल ग्राम मे एक अलौकिक बालक का जन्म हुआ। छोटी सी आयु मे ही देशभक्ति की भावना से पूर्ण अपने प्रान्त मे तानाशाही ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध पेड पर तिरगा झण्डा फहराने वाले यही मुनि श्री थे। गाधी जी के आदर्शो को पूरी तरह निर्वाह करने वाले सत्य अहिंसा पर चलने वाले यही महापुरुष थे किन्तु राजनीति को मथ कर और उसका परित्याग कर आचार्य शान्ति सागर जी के प्रभाव के कारण राजनीति मे क्रांति लाने वाले व्यक्ति धार्मिक क्रान्ति का अग्रदूत बन गया। जो जैन युवक धर्म से विमुख होते जा रहे थे धार्मिक श्रद्धा को खोते जा रहे थे वे युवक इस महापुरुष की वाणी से मन्त्र मुग्ध से जैन धर्म मे खिचे चले आये। आज मुनिश्री का ही प्रताप है कि वूढा धर्म काया कल्प करके जवान होकर अगडाई लेकर उठ खडा हुआ है।

महाराज जी के अनेक क्रातिकारी कार्यो मे से केवल एक सस्मरण देकर इस प्रसग को पूरा कर रहा हूँ। २५०० वर्षो से जैन मुनियो ने जिस की कल्पना भी न की थी वह थी श्री बद्री विशाल की यात्रा। धन्य है जैन समाज, जिन पर इस दिव्य ज्योति का प्रकाश अनवरत अवतरित होता रहता है। जो भारत मे अखडता के पोषक हैं, धार्मिक एकता के प्रतिपादक हैं, रूढिवादिता के नाशक और क्रान्ति के समर्थक मुनि श्री को शतशत बार प्रणाम।

न मे मृत्युः कुतो भीतिर्न मे व्याधिः कुतो व्यथा।
नाह बालो न वृद्धोऽहं न युवैतानि पुदगले॥

मानवता के प्रहरी मुनिश्री विद्यानन्द जी

पं० सत्यंधर कुमार सेठी, उज्जैन
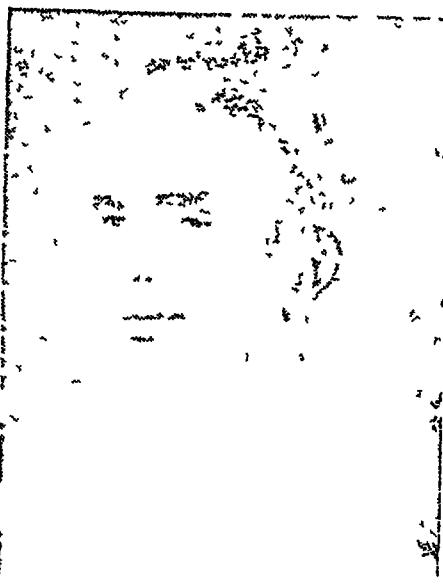
मैं वर्षो से इस खोज मे था कि दि० जैन समाज मे कभी ऐसे महान सन्त का उदय हो जिनके हृदय मे विशालता विचारो मे उदारता और समीष्ठीकरण की भावनाये जागृत हो। इस बोसवी सदी मे मैं कई सन्नो के चरणो मे बैठा उनके प्रवचनो को सुनने का मुझे अवसर मिला लेकिन उनके विचारो से और व्यवहारो से मुझे सतोष नही हुआ। सन्त जीवन बहुत ऊचा जीवन होता है। इस जीवन के अन्दर सकीर्णता, पथ और जाति भेद को स्थान नही होता। संत सबका होता है और विश्व का हर प्राणी सन्त का परिवार होता है। ऐसे सत कही किसी भी प्रकार के मत-भेद मे नही उलझते और न उलझने की सोचते। उनका लक्ष्य सिर्फ विश्व के प्राणी मात्र के उत्थान और विकास के लिए होता है और वे इसी के लिए अपना समस्त जीवन अर्पण कर देते हैं। वे धर्म को किसी दीवार मे नही बाधना चाहते क्योकि धर्म किसी पथ विशेष का नही होता। धर्म मानवता देता है और उसके द्वारा जोवन का निर्माण होता है। जीवन आगे बढता है और वह अन्त मे महानता दे देता है।

मै एक बार जयपुर मे श्रद्धेय प० चैनसुखदास जी के चरणो मे पहुंचा। उन्होने मुझे कहा—मेरे विचारो मे श्री विद्यानन्द जी सही रूप से मुनि हैं और इनके द्वारा जैन धर्म और उसके सिद्धान्तों का प्रचार व प्रसार होना सभव है। तुम भी इनके दर्शन करो। श्रद्धेय पडित जी का आदेश था। अत दि० जैन सम्मेलन मे भाग लेने सहारनपुर जा पहुंचा और अपनी पत्नी के साथ बड़ी उमग के साथ मैंने इन महान सत के प्रथम दर्शन किये और सभास्थल मे बैठकर उनके विचारो को सुना। मैंने मुनि श्री से एकान्त मे भी चर्चा की। उस चर्चा मे अधिकतर चर्चा सत जीवन की थी। उनसे मुझे आभास मिला कि वे इस सकीर्ण दायरे से अपने आपको बचाना चाहते है और विश्व को धर्म के सम्बन्ध मे नई प्रेरणा देना चाहते हैं। उसी समय मैंने श्री देवकुमार सिह जो कासलीवाल इन्दौर से निवेदन किया कि यदि

जब आत्मा की मृत्यु नहीं, तब मृत्यु-भय कैसा ? जब आत्मा को व्याधि नहीं, तब आत्मव्यथा कैसी ? आत्मा बालक नहीं, वृद्ध नहीं, युवा नहीं। ये सब तो पुद्गल की पर्याय है।

परम पूज्य मुनिराज विद्यानन्द जी का पदार्पण मालव प्रान्त मे हो जाये तो उस प्रदेश का बडा भला हो सकता है। हमारे भाग्य से महाराज श्री के चरण मालव प्रदेश मे पडे। मालव के जन जन ने महाराज श्री के चरणो मे श्रद्धा के सुमन अर्पण किये। आपके प्रवचनो से इन्दौर मे ही नही किंतु मालव के समस्त प्रदेश मे हलचल सी मच गयी और हर वर्ग यह कहने लगा कि यही एक ऐसा सत है जो विश्व के लिए नई विचारधाराये और नया चिंतवन देता है। महाराज श्री ने जिस दिन भगवान रामचन्द्र के ऊपर प्रवचन दिया और अट्ठारह रामायणो का उदाहरण देकर उनके जीवन पर विविध रूप से प्रकाश डाला उसको सुनकर बडे बडे विद्वान आश्चर्य करने लगे।

तत्पश्चात मुनि जी का पदार्पण उज्जैन जैसे ऐतिहासिक स्थल पर हुआ। वहा मुझे दो महीने तक महाराज श्री के सान्निध्य मे रहने का अवसर मिला और मैंने उन्हे बहुत निकट से देखा और मैंने यही निर्णय लिया कि मुनि श्री विद्यानन्द जी जैन समाज के लिए एक अवतारी सन्त हैं। वे आज के युग मे युगानुसार विचार धारण कर विश्व को मानवता का सदेश दे सकते हैं। जब से मुनि श्री विद्यानन्द जी का उदय इस रूप मे हुआ है तबसे भारतीय लोगो के हृदय मे जैन धर्म के प्रति अनन्त श्रद्धा पैदा हुई है। आज २५०० वा निर्वाण महोत्सव को मनाने के लिए समस्त भूमण्डल पर आन्दोलन है। लेकिन अगर उसका सही रूप मे प्रेरक हैं तो महाराज श्री विद्यानन्द जी हैं जिनकी अपूर्व सूझ-बूझ से आज यह महोत्सव सही रूप मे मनाया जायेगा।

महाराज श्री वास्तव मे इस युग की महान विभूति हैं। सही रूप मे वे मानवता के प्रहरी हैं और अपूर्व नैतिकता के प्रचारक हैं। आप मे वे आत्मीय भावनाये हैं जिनसे मानव सही रूप से जागृत होता है और अपने जीवन का निर्माण करता है। महाराज श्री रूढिवाद के घोर विरोधी परम्पराओ मे परिवर्तन लाने मे अग्रणी महान क्रान्तिकारी विचार धारा के सत हैं। आपके जीवन मे श्रद्धा, दृढता और कर्मठता कूट-कूट कर भरी है। मैंने कई सन्तो के दर्शन किये हैं लेकिन यही एक ऐसे सन्त मुझे देखने को मिले जिनके जीवन का एक-एक क्षण मौलिक है। पठन अध्ययन और मनन ही जिनका जीवन है। मैं तो यह मानता हूँ कि भगवान समन्तभद्र के बाद यही एक ऐसे सन्त हुए हैं जो विश्व के कोने कोने मे जैन धर्म का अभूतपूर्व प्रचार करने के लिए व सदेश देने के लिए कृत सकल्प हैं।

ऐसे महान सन्त के चरणो मे इस पुनीत अवसर पर किन शब्दो मे आदराजलि अर्पित करूं यह मेरी समझ मे नही आता, मैं तो चाहता हूँ कि यह महान सन्त अमरजीवी बनकर इस महान शासन का प्रभावक बनकर विश्व को मानवता का सदेश देते हुए अमर बने।

कर्म कर्महिताबन्धि जीवो जीवहितस्पृहः।
स्वस्वप्रभावभूयस्त्वे स्वार्थं को वा न वाञ्छति ॥

जैन-धर्म मे मुनि या साधु की गणना पच परमेष्ठी मे की जाती है, इसीलिए वे प्रत्येक के लिए पूज्य एव स्तुत्य माने गये हैं। मुनि या सच्चे गुरु का स्वरूप–विश्लेपण करते हुए आचार्य समन्तभद्र कहते हैं :—

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रह ।
ज्ञानध्यानतपोरक्त स्तपस्वी स प्रशस्यते ॥

विषय निरीह, निष्परिग्रह और निरारम्भ होने के अतिरिक्त ज्ञान, ध्यान और तप साधना मे जो निरन्तर रत रहता है वही सच्चा तपस्वी या साधु होता है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि सच्चे साधु या गुरु का अन्य गुणो से पूर्ण होते हुए ज्ञान और तप की साधना मे निरन्तर लगे रहना परम आवश्यक है। ज्ञान-साधना उनका नित्य कर्म है। इस दृष्टि से एक ओर हम अकपनाचार्य-सघ के श्रुतसागर और दूसरी ओर वर्तमान दिगम्बर मुनियो पर दृष्टिपात करते हैं, तो हमे अपेक्षाकृत निराश होना पडता है। क्योकि मुनिधर्म के सभी अगो की पूर्णता होने पर भी ज्ञान-विशेष की, जो जन-साधारण को न केवल आकर्षित करने के लिए, वरन् जनहित की दृष्टि से मार्ग-दर्शन के लिए भी परम आवश्यक है, कमी देखकर निराशा सी होने लगती है। यही कारण है कि व्यक्तिगत रूपमे वेश की दृष्टि से पूजा भाव और श्रद्धा होते हुए भी आज के मुनिवर्ग मे मेरी आस्था और निष्ठा को आघात पहुंचता रहा है। किन्तु मुनिश्री विद्यानन्द जी के व्यक्तित्व के प्रभाव से यह धारणा छिन्न भिन्न होकर रही। यह कैसे हुआ ? उसी घटना को संस्मरण रूपमें निश्छल भाव से प्रकट कर देना मैं अपना पावन कर्तव्य समझता हूँ।

घटना उन दिनो की है जबकि आज से लगभग तीन वर्ष पूर्व जैन धर्मशाला, मेरठ में दिगम्बर जैन परिषद की कार्य-समिति की बैठक मे सम्मिलित होने के लिए मैं गया था, वहीं मुनिश्री विद्यानन्द जी के दर्शन करने और प्रवचन

श्री १०८ मुनि विद्यानन्द जी और उनका व्यक्तित्व

लेखक–डा० कुन्दन लाल जैन शास्त्री, बरेली

सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। प्रथम प्रवचन मे ही मेरी भ्रान्त धारणा मे प्रारम्भिक परिवर्तन प्रारम्भ हुआ। किन्तु जब यह घोषणा सुनी कि मुनिश्री दूसरे दिन रामनवमी के अवसर पर भगवान राम के सम्बन्ध मे अपना प्रवचन करेंगे, मन कुछ अधीर और उद्विग्न होने लगा। क्योकि उससे पूर्व कभी किसी जैन मुनि ने ऐसा आयोजन नही किया था। किसी प्रकार दूसरे दिन जब भगवान राम के सम्बन्ध मे मुनिश्री का प्रवचन सुना तो हृदय पूज्यश्री के प्रति आस्था और श्रद्धा मे आकण्ठ आमग्न होकर उनके श्री चरणों मे नतमस्तक हो गया।

कर्म कर्मों का हित करेंगे तथा जीव जीव-हित की इच्छा रखेगा। जिसका अधिक प्रभाव होगा, वह अपने हित में उसका निर्धारण करेगा। कौन है जो स्वार्थ (स्व-प्रयोजन) नहीं चाहता ?

इसके पश्चात सहारनपुर मे भी अनेक गभीर और जटिल विषयो पर सरल प्रवचन सुनकर तो श्रद्धा उत्तरोत्तर द्विगुणित होती गई। पुन श्री अतिशय क्षेत्र महावीर जी मे 'अनेकान्त' जैसे गम्भीर विषयो पर मुनि श्री का सरल विश्लेषण सुना।

सयोग की बात, कि आगरा विश्वविद्यालय सम्बन्धी कार्य समाप्त करके जब अलीगढ पहुंचा तो वहा भी मुनिश्री के दर्शनो का सौभाग्य प्राप्त हो गया। वहा एक प्रवचन-श्रवण की घटना निश्चय ही अभूतपूर्व थी। प्रवचन था 'लेश्या' जैसे मनोवैज्ञानिक विषय पर। ऐसे गहन, जटिल और मनोवैज्ञानिक विषय को सरल भाषा-शैली मे और वह भी सक्षिप्त समय मे वैज्ञानिक ढग से स्पष्ट करते देख द्विगुणित होती हुई श्रद्धा अटूट हो गई। इतना ही नही, वहाँ के मेरे अन्य जैनेतर मित्र प्रोफेसर भी उक्त विषय से अनभिज्ञ होने पर भी ऐसी गहन जानकारी प्राप्त कर मुक्तकण्ठ से मुनिश्री के प्रशसक ही नही, वरन् सेवक तक बन गए। यह जानकर मेरा मस्तिष्क अनायास ही गर्वोन्नत हो उठा। इसी को कहते हैं प्रभावी व्यक्तित्व।

मेरे सस्मरण के उक्त कथन से यह तो स्पष्ट ही है कि मुनिश्री के व्यक्तित्व मे आवश्यक ज्ञान-साधना की वह विशेषता विद्यमान है जो न केवल जैन धर्मानुयायियोको, वरन् जैनेतर शिक्षितो और विद्वानो को भी आकर्षित करके उन्हे लोकप्रिय और लोकपूज्य बना रही है।

आज के वैज्ञानिक युग की बदलती हुई मान्यताओ और परिस्थितियो मे आपके आचरण की सरलता भी उदाहरणीय है। उनकी सरल आहार-विधि इसका ज्वलन्त उदाहरण है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नही वे मुनि विधि-विधान का उल्लघन करते हैं। प्रयोजन इतना ही है कि विधान की मर्यादा के भीतर ही वे सरलता और सर्व सुलभता के पक्षपाती जान पडते हैं।

विषय निरीहता, आरम्भ हीनता और परिग्रह-विहीनता तो दिगम्बर वेश मे बाह्य रूप से प्रत्यक्ष ही है, अतरग रूप मे भी इसकी विपरीतता का कोई आभास नही मिलता। अत यह कहने मे किसी को भी सकोच नही हो सकता कि मुनिवर विद्यानन्द जी का व्यक्तित्व सच्चे साधु के पूर्वोक्त लक्षणो से सर्वथा पूर्ण है। इसी कारण ज्ञान ध्यान तप आदि के विशिष्ट गुणो से युक्त व्यक्तित्व के धनी होने के कारण शिक्षित अशिक्षित, बाल युवा वृद्ध, नर-नारी, अमीर गरीब और जैन अजैन सभी मे लोकप्रिय होकर पूज्य, स्मरणीय और बन्दनीय बन गए हैं। ऐसे ही व्यक्तित्व को पाकर हम स्मरण करते हैं —

'णमो लोए सव्व साहूणम्'

भुक्तोज्झिता मुहुर्मोहान् मया सर्वेऽपि पुद्गलाः।
उच्छिष्टेष्विव तेष्वद्य मम विज्ञस्य का स्पृहा॥

संत शिरोमणि के चरणों में नमस्कार है बारम्बार

(श्री अनूपचन्द न्यायतीर्थ, जयपुर)

सत शिरोमणि मुनि विद्यानन्द
तुमको बारबार प्रणाम।
नग्न दिगम्बर परम तपस्वी
सरस्वती साधक गुणधाम॥

पुरातत्व प्रेमी अन्वेषक
शोधक श्रमण सस्कृति-सार।
सत् साहित्य प्रणेता युग के
विद्वज्जन - प्रिय स्नेहागार॥

बरद पुत्र मा सरस्वती के
जिनवाणी के भक्त महान।
सदा अध्ययन चितन से ही
प्राप्त किया है तुमने ज्ञान॥

वाणी मे अमृत रस झरता
प्रवचन सुनने हेतु अपार।
बालक वृद्ध युवा आ जाते
करने को अपना उद्धार॥

है युग के अनुरूप तुम्हारे
हे मुनि! सादा स्वच्छ विचार।
अनुकरणीय वृत्ति निर्भयता
निष्कलक निर्मल आचार॥

सत्य अहिसा के प्रतिपादक
निष्कषाय वक्ता निर्भीक।
सहृदयी भावुक मुनि-पु गव
विश्व धर्म के प्रबल प्रतीक॥

दक्षिण से उत्तग हिमालय—
तक, हो गया प्रदेश पवित्र।
जहँ जहँ चरण पडे सतो के
सुख समृद्धि बढी सर्वत्र॥

परिनिर्वाण महोत्सव ऐसा
सुन्दर ढग से मने विशाल।
राष्ट्रसत! यह प्रबल भावना
जागी तुम मे हुए निहाल॥

तुमने अपनी सूझ-बूझ से
शासन ध्वज का नया स्वरूप।
केशरिया झण्डे को देकर
बना दिया है पचरग रूप॥

विद्वानो की सेवाओ का
मूल्याकन कर तुमने आज।
सम्मानित कर उन्हे यथोचित
गौरवान्वित किया समाज॥

खोज रहे नित नयी योजना
कैसे हो मानव उत्थान।
कैसे धार्मिक जागृति आवे
कैसे हो जग का कल्याण॥

हित-मित-प्रिय भाषी सन्यासी
विज्ञ विवेकी परम उदार।
सत शिरोमणि के चरणो मे
नमस्कार है बारबार॥

मोहावस्था मे मैने सम्पूर्ण पुद्गलों का बार-बार उपभोग किया तथा बार-बार त्याग किया। वे सब मेरे लिए [illegible] जान लेने पर मेरी उनमे आसक्ति कैसे हो सकती है?

श्रमण संस्कृति के प्रतीक, हिमालय के मुनि

पूज्य मुनि विद्यानन्द जी महाराज की

५० वीं वर्षगांठ पर

श्री होशियार सिह बुद्धूमल जैन बालिका इन्टर कालिज

विकासनगर (देहरादून)

की

प्रबन्धक समिति, अध्यापिकाओ, स्टाफ एवं छात्र-छात्राओं

की ओर से

दीर्घायु एवं स्वास्थ्य की शुभकामनाओं सहित

शत शत वंदन,

शत शत अभिनंदन

स्कूल के प्रागण मे मुनि विद्यानन्द जी

महाराज श्री की पंकज धूलि से पवित्र

एवं

आशीर्वाद प्राप्त विद्यालय

पुनः दर्शनो की अभिलाषा करता है ।

शत शत वन्दन-शत शत प्रणाम

श्री शर्मनलाल जैन 'सरस' सकरार

जो–जीत रहे निज इन्द्रिय को, जिनमें जिनकी ज्योति ललाम,
हे विद्यानन्द तुम्हे युग का–शत शत वन्दन, शत शत प्रणाम,

जिनके तन का वाहन सयम मन पहने मुक्ति का लिबास,
मडरा कर खुद ही मुड जाती, इच्छाये जिनके आस पास,
जिनने दे दिया सभी जग को, जग से वरदान नही मांगा,
जिनकी हरबार बहारो ने, सयम के सगम को साधा,
जो सत्य शिवम के स्वयम रूप, कण कण जिनको करता प्रणाम,
हे युग सत तुम्हे युग का, शत शत वंदन - शत शत प्रणाम,

जिनने भौतिक अस्थिरता से नित अपनी दृष्टि हटा डाली,
जिनने मिट्टी के चोले से, मुक्ति को राह बना डाली,
जिन पर, न रूप की धूप चढी, छल सका न छल जिनवानी को,
चाहा हरबार बहारो ने, बहला ले जिनकी जवानी को—
ऐसे है पूजनीय जिनके, पग से पावन हो धरा धाम,
हे विद्यानन्द तुम्हे! युग का शत शत वदन शत शत प्रणाम,

जिनने दी त्याग लगोटी तक, व्रत से तनका शृगार किये,
अभिषेक किया करता सयम, तट पर तप का आधार लिए,
नैनो मे करुणा की गगा, यह हृदय धर्म की धार बना,
जिनका अब पिछी कमडल ही, इस धरती का संसार बना,
जो त्याग रहे यह बधु विश्व, दुनियां से जिनको नही काम,
हे विद्यानद तुम्हे युग का, शत शत वदन शत शत प्रणाम,

हे वर्तमान के सर्वोदय! हे–सत्य शिवम के सघन मेघ,
हे सयम के साकार सिधु–हे पचशील की अमर रेख,
पूरब पश्चिम दक्खिन उत्तर, हर ओर तुम्हारी गाया है,
लगता है कुंद कुंद मुनिका, अब फिर से वह युग आया है,
गा रही अलकनंदा गौरव, हर समय तुम्हारा लिए नाम,
हे विद्यानन्द तुम्हें युग का शत शत वंदन शत शत प्रणाम,

इस जन्म जयन्ति वेला पर, हर प्राणी मन से वारे हैं,
तुम इतने वर्ष जियो गुरुवर, जितने अम्बर में तारे हैं,
हे विश्व धर्म के उन्नायक, हे भक्तों के चिर तीर्थ धाम,
है सरस जैन का शत वंदन, है सरस जैन का शत

पूज्य मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज के सान्निध्य में दो सप्ताह

लेखक—श्री ज्ञानचन्द्र जैन 'स्वतंत्र'

पूज्य मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज के चातुर्मास काल मे अब की बार सौभाग्य से वीर निर्वाणोत्सव पर्व पर मेरठ आना हुआ, और पूज्य श्री के आदेशानुसार दो सप्ताह तक तीर्थंकर महावीर ग्रथ के लिये (कविवर नवल शाह कृत वर्द्धमान पुराण के उपयोगी अगो के हिन्दी अनुवाद के लिये) कार्यवश रुकना पडा।

इन दो सप्ताह के बीच मैंने निकट से देखा कि पूज्य श्री सतत आत्म चिन्तन आत्म साधना अनेक ग्रन्थो के अध्ययन मनन परिशीलन आलोडन मे ही आपका समय यापन हो रहा है।

पूज्य महाराज श्री को यही भावना रहती है ससार का किसी तरह कल्याण हो। तदनुसार लोकोपयोगी विश्वधर्म पर ही आपके प्रेरणात्मक एव जागृति के प्रतीक प्रवचन भाषण एव उपदेश होते है। पूज्य श्री की मगलमय कामना है कि २५०० वे निर्वाणोत्सव पर भ० महावीर से सम्बन्धित (ऐतिहासिक ठोस प्रमाणो के आधार पर उनका जीवन चरित्र और उपदेश) ऐसा नूतन मौलिक साहित्य प्रकाशन हो कि वह सर्वसाधारण जनता के लिये समान रूप से उपयोगी हो।

आपके भाषण मे इस आशय का सकेत होने पर जैन समाज मेरठ की ओर से तत्क्षण देखते देखते पचास हजार की निधि एकत्रित हो गयी और आपके ही सान्निध्य मे 'वीर निर्वाण भारती' नामक सस्था की भी स्थापना हो गयी है, जिसके द्वारा जैन शासन का ध्वज, भारतीय सस्कृति और श्रमण परम्परा' आदि लघु पुस्तिकाये प्रकाशित हुयी हैं जो कि नूतन मौलिक एव सार्वजनीन हैं। इसके अतिरिक्त नवीन नवीन ग्रन्थ एव पुस्तको के प्रकाशनार्थ सतत सशोधन और सपादन कार्य चल ही रहा है।

सस्कृत मे निम्न दो सूक्तिया हैं। 'परोपकाराय सत्ता विभूतय' सन्ता परार्थतत्परा' सत्पुरुषो द्वारा परोपकार करना ही उनकी अमर विभूति है, सत्पुरुष प्राणियो का सतत कल्याण ही करते हैं। परम हस दिगम्बर निर्ग्रन्थ मुनि, तत्व ज्ञानी अखड बाल ब्रह्मचारी ब्रह्मयोगी सस्कृत अग्रेजी हिन्दी कन्नड गुजराती मराठी प्राकृत अपभ्र श आदि अनेक भाषाओ के ज्ञाता, आध्यात्मिक साधना सरस्वती की उपासना, एव अजोड साहित्य सेवा मे पूज्य मुनि श्री को विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

आपका जहा चातुर्मास होता है वहा की जनता मे अभूतपूर्व जागृति होती है और आपका चातुर्मास का समय वहा की जनता के लिये अविस्मरणीय ऐतिहासिक घटना हो जाती है। भावनात्मक एक्य का आप सतत प्रयत्न करते रहते हैं अद्भुत व्यक्तित्व, त्यागी विरागी साधनामय जीवन, समदृष्टि, समान रूप से सभी के कल्याणकर्त्ता,

गुरूपदेशादभ्यासात् सवित्तेः स्वपरान्तरम्।
जानाति यः स जानाति मोक्षसौख्य निरन्तरम्॥

साम्प्रदायवाद घेरे बन्दी फिरके बन्दी से दूर अति दूर ऐसे हैं पूज्य विद्यानन्द जी मुनि।

जिन्होने आज तक पूज्य श्री मुनि विद्यानन्द जी को न देखा हो, वे उनकी कृतियो को देख कर पता लगा सकेंगे कि पूज्य मुनि श्री की साधना विवेक एव विद्वत्ता कैसी है। आपकी प्रवचन आम सभा मे हजारो श्रोताओ की उपस्थिति होना तो साधारण सी बात है, पर उसमे सभी सम्प्रदाय के स्त्री पुरुषो का बिना किसी भेदभाव के आना और प्रति दिन आते रहना एक महत्वपूर्ण बात है।

आज के व्यस्त जीवन मे समय का त्याग कर मुनिश्री के प्रवचन मे नियमित आना, यह पूज्य श्री की अद्भुत अमृतमयी वाणी का ही प्रभाव है। जिस प्रकार चुम्बक पत्थर लोहे को अपने आकर्षण से सहज ही अपनी ओर खीचता है, उसी प्रकार पूज्य श्री की वाणी मे विचित्र ही एक प्रकार का जादू या चुम्बक है जिसके प्रभाव से आकर्षण से जनता स्वय ही खिचती चली आती है।

त्याग विराम सयम साधना ज्ञान समता जागृति पैनी सूझ बूझ खोज शोध प्रेरणा इन सभी का सगम पूज्य मुनिश्री मे खुल खिलकर निखरा है। आपकी पुण्य वर्गणाये और यश कीर्ति नाम कर्म, विकसित पुष्प की सुरभि की तरह सर्वत्र ही प्रसारित हो रहा है। एक कवि के शब्दो मे—

साधु ऐसा चाहिये, जैसा सूप सुभाव।
सार सार को गह रहै, थोथा देइ उडाव॥

गोस्वामी सन्त तुलसीदास जी के शब्दो में.—

सन्त हृदय नवनीत समाना,
कविन कहा पर कहि न जाना।
निज पर ताप दहै नवनीता,
पर दुख द्रवहि सु सन्त पुनीता॥

विद्वत् समाज के संरक्षक

बीसवी शती मे पूज्य श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी महाराज एक ऐसे सन्त हुये हैं कि जिन्होने सामाजिक अधश्रद्धाओ एव कुरूढियों को नष्ट करने मे जीवन भर सघर्ष किया। शिक्षा के प्रचार मे तो आपके लिये उच्चकोटि का स्थान प्राप्त है। आप विद्वानो के जनक तो थे ही पर विद्वानो के सरक्षक भी थे।

पूज्य वर्णी जी जैसी रचनात्मक कार्य प्रणाली के पूज्य मुनिश्री मे भी स्पष्ट दर्शन होते हैं। पूज्य मुनिश्री का कहना है कि विद्वान मार्ग दर्शक एव धर्म प्रचारक है और भविष्य मे भी रहेगे। पर आज के अधिकाश विद्वान् अल्प वेतन भोगी हैं। अनेक विद्वान् अभाव ग्रस्त हैं, समाज ने विद्वानो का मूल्याकन सही नही किया है।

विद्वानो के प्रति आपकी "गुणिषु प्रमोदम्" भावना रहती है, आपका कहना है कि विद्वानो को श्रम का उचित मूल्य मिलना चाहिये। इस जगह समाज को अपना दृष्टिकोण बदलना होगा। विद्वानो के उचित सम्मान के लिये आप समाज को प्रेरित करते रहते हैं और विद्वानो को पुरस्कार योजना के प्रेरक भी आप ही हैं।

जो पुरुष गुरू के उपदेश से; अभ्यास द्वारा तथा अनुभव से स्व और पर के पार्थक्य को जान लेता है, वही अव्याबाध मोक्ष-सुख को जानता है।

दस वर्ष पूर्व की बात है। मई १९६४ मे आचार्य श्री देशभूषण जी का सघ जयपुर मे आया और दीवान अमर चन्द जी के मन्दिर मे ठहरा। सघ मे अन्य मुनियो के साथ मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज भी थे। उस समय कोई नही जानता था कि आज के युग का महान सत उस मन्दिर की एक छोटी सी कोठरी मे बैठा चुपचाप अध्ययन रत है न अधिक किसी से बोलना न चर्चा करना। थोडा बहुत भाषण दिन मे कभी कभी देते थे। आपके उदार दृष्टिकोण और सुलझे हुए विचारो का लोगो पर प्रभाव पडा और युवको की अधिक सख्या आपके पास आने लगी। जहां तक मुझे याद है श्रुत पचमी सन् १९६४ को आदर्श नगर स्थित दिगम्बर जैन मदिर मे पूज्य मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज एव प्रसिद्ध विद्वान प० चैनसुखदास जी के भाषण एक साथ हुए। एक गृह विरत तपस्वी और दूसरे गृहस्थ मे रहते हुए भी त्यागी-दो विभूतियो का यह प्रथम सम्मिलन था। पडित जी के निर्भीक विचारो से मुनिश्री प्रभावित हुए और मुनिश्री के मर्मस्पर्शी भाषणो से पडितजी। उस दिन पडितजी ने साधुत्व आत्मा मे रहता है बाह्य प्रदर्शनो मे नही—यह कहकर जहा मुनिश्री का ध्यान आकृष्ट किया तो मुनिश्री ने इसी विषय को इतने आकर्षक ढग से प्रस्तुत किया कि लोग साधुत्व व्याख्या सुन आत्म विभोर हो उठे। मुनिश्री का सार्वजनिक क्षेत्र मे उतरने का यह प्रथम दिन था। इसके पश्चात् तो प्रति दिन विभिन्न स्थानीय मदिरो मे एव रविवार को सार्वजनिक स्थानो पर भाषण होने लगे। मुनिश्री के भाषण को सुनने जनता उमडने लगी और हजारो की सख्या मे श्रोता आने लगे।

जयपुर जेल मे १४-६-६४ को मुनिश्री ने कैदियो के बीच जीवन को पवित्र बनाने और अपराधी जीवन न बिताने के लिये जो प्रेरणादायक सदेश दिया तो कई कैदी कहने लगे कि ऐसे सत को सुनने का यदि पहले अवसर मिला होता तो आज हम जेल मे न होते।

मुनि श्री का जयपुर में वर्षा-योग

एक संस्मरण

(प० भंवरलाल न्यायतीर्थ, जयपुर)

२ अगस्त को मुनिश्री की सार्वजनिक सभा मे भाषण देते हुए विधान सभाध्यक्ष श्री निरजन नाथ आचार्य ने कहा कि—भाषण मैने बहुत सुने हैं बहुत दिये हैं। बीसों जैन साधुओ के भी प्रवचन सुने है पर मुनिश्री जैसे निर्भीक वक्ता का प्रवचन आज ही सुना है।

स्वतन्त्रता दिवस के दूसरे दिन १६ अगस्त को राजस्थान के मुख्यमन्त्री श्री मोहन लाल सुखाडिया (वर्तमान मैसूर राज्य के गवर्नर) ने महाराज श्री के प्रवचन की सराहना करते हुए

अभवच्चित्तविक्षेप एकान्ते तत्त्वसंस्थितिः।
अभ्यास्येदभियोगेन योगी तत्त्वं निजात्मनः॥

कहा कि आध्यात्मिकता मे ही सुख और शान्ति है। आज मैं अतिथि के रूप मे आया हूं आज से साधारण श्रोता के रूप मे आऊँगा।

हम दुखी क्यो हैं---इस प्रवचन की शृखला मे राजस्थान के राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्द ने कहा कि दुख की अनुभूति विवेक होने पर ही होती है। विवेक के अभाव मे सग्रह मे सुख मानना मानव की भूल है। सग्रह से दूर रहने वाले ऐसे साधु सुखी हैं। मुनिश्री के जीवन से वे बहुत प्रभावित हुए।

मुनिश्री का जयपुर वर्षायोग उनके जीवन के एक नये मोड को शुरूआत थी। एक पिजरे मे बन्द पक्षी चहकता है–बोलता है–खाता-पीता है पर वह पिजडे मे है। पिंजरे से निकलने के बाद वह खुली हवा मे श्वास लेता है। उसका बोलना और चहकना कुछ और ही हो जाता है। मुनिश्री का यह उत्कर्ष, उनके सुधारवादी क्रान्तिकारी विचार प० चैनसुखदास जी सरीखे विद्वान का सम्पर्क आदि बातें उस समय कुछ स्थिति पालको को सहन नही हुआ। पर सामने आकर किसी के बोलने की हिम्मत न हुई–पर्दे की ओट कुछ पर्चे-बाजी, कुछ हल्के स्तर के पत्रो में असत्य बाते छपवाई वातावरण गन्दा करने का प्रयत्न किया–पर साच को आंच कहाँ। बादल कितना ही प्रयत्न करे सूर्य ज्योति को पूर्णत: सदा ढक नही सकता। जयपुर के गगन मे यह ज्योति चमकी और सारे देश में वह फैली हुई है। जो लोग विरोध करते थे वे आज चुपचाप मुनिश्री की महानता के प्रशसक हैं। आज साधुसमाज मे मुनिश्री का स्थान सर्वोपरि है जो जागरण आज मुनि विद्यानन्द जी द्वारा हो रहा है वह इन सौ डेढ सौ वर्षों मे किसो से नही हुआ।

पडित चैनसुखदास जी और मुनिश्री की कई एकान्त चर्चाओं मे लेखक भी साथ रहा है। समाज की कुरीतियो, बुराइयो, धर्म के प्रति विमुखता, साधु संस्था मे व्याप्त शिथिलता, ज्ञान की कमी, साहित्य के प्रति रुचि का अभाव, अहिंसा धर्म का प्रचार आदि कई बातो पर चर्चाए हुई हैं। उन सब मे मुनिश्री का उदार दृष्टिकोण रहता था। आज उनमे से कई बातो को साकार होते हम देख रहे हैं। २५०० वा निर्वाण महोत्सव के सिलसिले मे मुनिश्री जो कार्य कर रहे हैं वह महान है। प० चैनसुखदास जी यदि आज होते तो अपने विचारों को साकार रूप मे देख पाते।

मैं मुनिश्री के पावन जन्म दिन पर उनके चरणो मे कुसुमांजलि अर्पित करते हुए उनके दीर्घ सफल जीवन की कामना करता हूं।

चित्त-विक्षेप से (मानसिक व्यग्रता से) रहित होकर, एकान्त प्रदेश मे तत्व में स्थितीकरण करते हुए योगी को निरन्तर निजात्म तत्व का अभ्यास करना चाहिये।

मुनि श्री विद्यानन्द आपको कवि का सौ सौ बार नमन है

श्री हजारीलाल 'काका' सकरार

जिनकी वाणी से बहती है विश्व धर्म की पावन धारा,
जिनके सद् आचार विचारो से जगने निज को शृगारा,
जन-जन के कल्याण हेतु होता जिनका पावन प्रवचन है,
श्री मुनि विद्यानन्द आपके चरणो मे शतबार नमन है,

कभी आपने हिमगिर की चोटी पर से आवाज लगाई,
कभी मरूस्थल मे जाकर अपनी अमृत वाणी वर्षाई,
कहा, मोक्ष का अधिकारी वह इच्छाओ का जहा दमन है,
श्री मुनि विद्यानन्द आपके चरणो मे शतबार नमन है,

तत्व स्वरूप समझ करके जो जान गया जग की नश्वरता,
जन्मोत्सव की तरह मृत्यु का जो हँसकर आलिगन करता,
सम्यक दृष्टी सदा समझता प्रथक प्रथक चेतन वतन है,
श्री मुनि विद्यानन्द आपके चरणो मे शतबार नमन है,

तरह तरह से जिनवाणी का सत्य स्वरूप सदा समझाया,
एक आत्मा ही अपना है झूठी है जग की सब माया,
तन से पहले मन को धो लो अगर मोक्ष की तुम्हे लगन है,
श्री मुनि विद्यानन्द आपको कवि का सौ सौ बार नमन है,

निशामयति निःशेषमिन्द्रजालोपम जगत् ।
स्पृह्यत्मात्मलाभाय गत्वान्यत्रानुतप्यते ।।

'श्राम्यति इति श्रमणः' अर्थात् जो सम्यक् श्रमण करे वही श्रान्त है, वही श्रमण है। 'श्रम-मानयति पचेन्द्रियाणि मनश्चेति वा श्रमण. श्राम्यति ससार विषयेषु खिन्नो भवति तपस्यति वा स श्रमण.'—पाच इद्रियो तथा मन को तप: श्रम से श्रान्त करने वाले अथवा सॉसारिक विषयो से उपरत होने वाले तपोनिष्ठ सन्यासी श्रमण होते हैं। मुनि श्री विद्यानन्द जी ऐसे ही श्रमण हैं—श्रमण संस्कृति के शुभ्रोज्ज्वल दर्पण हैं। यदि साधु को समाज का दर्पण माना जाय तो मुनि श्री ऐसे ही साधु-सन्त हैं। साधु का चरित्र पूर्णत धवल और शुभ्र होता है तथा वह माया, लोभ, तृष्णा आदि कषायो से स्वय दूर रहता है और दूसरो को भी दूर रखता है, स्वय 'कामिल' होता है और दूसरो को भी 'कामिल' बनाता है, ऐसा मनुष्य ही सर्वोत्कृष्ट होता है। वह देश और समाज की बुराइयो, विकारो, सघर्षो को अपने सदुपदेशो, प्रवचनो के द्वारा विनष्ट करने के लिए कृतसकल्प होता है, वह कर्मशील होता है, कथनी-करनी मे समान होता है। मुनि महाराज इसी प्रकार के प्रबुद्धचेता सन्त हैं, एक युगपुरुष हैं।

युगपुरुष या इतिहास पुरुष का जन्म दिन सदैव सर्जनमूलक होता है, एक नूतन प्रेरणा प्रदान करने वाला होता है। मुनि श्री अदम्य प्रेरणाओ के मानसरोवर हे। तेजोद्दीप्त दिगम्बर नरसिह, तप पूत शरीर, निर्द्वन्द्व एव मन्द स्मति से खिला मुखमण्डल, परम सवेदनशोल, एव परमतत्व ज्ञानी, सात्विकता एव सौम्यता की मूर्ति, अहिंसा के आराधक, तप-ज्ञान-कला-साहित्य के अनन्य साधक मुनिवर के गुरुत्वाकर्षणमय व्यक्तित्व ने देश के बाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी को आकृष्ट एव प्रभावित किया है। पूर्णतः निष्काम यह सन्त जनवादिता, समन्वय वादिता, कर्म प्रधानता और चरित्रवादिता की ज्योति कण कण मे, घट-घट मे विकीर्ण करने वाले 'चरैवेति चरैवेति' मत्र को साकारित कर रहे हैं। उनका यह सदैव चलने वाला विलक्षण व्यक्तित्व सभी

युग पुरुष

मुनिश्री विद्यानन्द जी

डॉ० निज़ाम उद्दीन
अध्यक्ष हिन्दी विभाग, इस्लामिया कालेज
श्रीनगर (कश्मीर)

को चलने को प्रेरणा देता है और जितना हम चलेगे, कर्म और तप करेगे उतना ही ऊपर उठेगे 'तप' का विलोप 'पत' है 'पत' से नीचे गिरते हैं, नीचे की ओर मूलवत अधोगति को प्राप्त होते हैं और 'तप' करने से उन्नति को प्राप्त होते हैं। तप करना, चलना जीवन है और ठहरना, रुकना मृत्यु है। आज वस्तुओ का जो परिग्रह किया जाता है—उन्हे यत्र-तत्र चलाया या भेजा नही जाता, वरन् एकत्रित किया जाता है—जमा किया जाता है इसी कारण तो हम मर रहे हैं, जीवन की गति रुकी हुई है। समाज और देश की

जैसे-जैसे आत्मतत्व का अनुभव वृद्धिगत होने लगता है, वैसे-वैसे भव्यात्माको यह सम्पूर्ण जगत एक इन्द्रजाल प्रतीत होने लगता है वह निरन्तर आत्मलाभ की स्पृहा करता है तथा पर-परिणति से अनुताप अनुभव करता है।

उन्नति मे ठहराव है और यह सब इसीलिए कि वस्तुओ मे ठहराव है—वे काल कोठरी मे बन्द हैं। इस प्रकार मुनि श्री का व्यक्तित्व हमे चलने—वस्तुओ को चलाने—अपरिग्रह करने का मूक सदेश देता है।

मुनि महाराज महा जनवादी या मानवतावादी हैं। हिन्दू, मुसलमान या ईसाई उनकी दृष्टि मे समान हैं उनमे वह कोई भेद नही मानते। वह मानवता को ही मनुष्य का सर्वोच्च गुण स्वीकार करते हैं। यही कारण है कि उनके प्रवचनो को सुनने के लिये सभी वर्गों एव सम्प्रदायो के लोग आते हैं। उन्हे हरिजनो से भी उतना ही प्रेम है जितना जैन ब्राह्मण आदि से है। वर्ग-वैषम्य के वह प्रबल विरोधी हैं, और सामाजिक समानता तथा भावात्मक एकता के उद्घोषक हैं। कृषको श्रमिको से भी उन्हे अत्यधिक प्रेम है, उनमे मुनिश्री को भारत की श्रम व सस्कृति के दिग्दर्शन होते हैं, यही उन्हे 'देश के सच्चे मालिक' प्रतीत होते हैं और इसीलिए मुनिश्री सैकडो ग्रामो मे मगल-विहार कर चुके हैं और करते रहे हैं।

समन्वयवादिता उनके जीवन की एक महान विशेषता है। वह वर्गों—सम्प्रदायो का समन्वय, उनकी एकता तो चाहते ही हैं, साथ मे वह पंजाबी, मद्रासी, आसामी, बगाली की पृथकतावादी भावना को तिरस्कृत एव परित्यक्त कर राष्ट्रीय एकता पर अधिक जोर दिया है। यही राष्ट्रीय एकता अथवा भारतीयता की भावना देश को सुदृढ एव सपुष्ट बना सकती है। उन्होंने जैनेतर धर्मों एव मतो का व्यापक और तलस्पर्शी अध्ययन किया और कहा कि जो अशाति से रहना सिखाये या परस्पर लडाई झगडा कराये वह धर्म नही हो सकता। धर्म तो एकता, शाति और समन्वय का मार्ग प्रशस्त करता है। अपने-अपने विश्वास के अनुसार सभी को अपने धर्म ग्रन्थो से लाभ उठाना चाहिए और जो बाते जीवन को उन्नत बना सकती हैं उनको अमल मे लाना चाहिए।" इसी धार्मिक समन्वय की भावना को आधार मानकर उन्होने विश्व धर्म के दस लक्षण प्रस्तुत किये—क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य। ऐसा धर्म ही सर्वहितकर्ता हो सकता है। वह स्पष्टत उल्लेख करते हैं कि जब ससार मे सूर्य एक है, आकाश एक है तो धर्म या सस्कृति कैसे भिन्न हो सकते हैं। जब मुनि जो यह कहते हैं कि "समाजवाद जम्बू जैट से नही आयेगा बडी-बडी कारो से भी नही आयेगा, जब आयेगा, जन-सहयोग से आयेगा। सब बातो को सोचकर मिल बाटकर पदार्थों का उपयोग करना चाहिए। सबको अपना अपना भाग मिलते रहना ही समाजवाद है,।" तो उपर्युक्त समाजवाद की प्राप्ति के लिए वह समन्वयवाद या एकता का ही समर्थन करते हैं।

मुनिश्री की धारणा है कि राष्ट्र का बहुमुखी विकास कर्तव्यपालन तथा कर्मशीलता से ही सम्भव होगा। मुनिश्री की प्रेरणा से ही देश के विविध भागो मे वीर-निर्वाण-साहित्य-भारती की

परः परस्ततो दुःखमात्मैवात्मातत. सुखम्।
अत एव महात्मानस्तन्निमित्तं कृतोद्यमाः॥

स्थापना हुई, अनेक पुस्तको का प्रकाशन हो रहा है, जैनशासन का पचरगी ध्वज शान से फहरा रहा है। ससार मे जितने भी महापुरुष हुए हैं उन्होने अपनी चरित्रवादिता के बल पर अपने देश और काल की सीमा का अतिक्रमण कर दूर-दूर तक मनुष्यो पर प्रभुत्व जमाया, उन्हे प्रभावित किया। वे सर्वथा अपरिग्रही होते हैं, त्यागी होते हैं। उनका जीवन दूसरो के हितार्थ होता है। आज मुनिश्री भी लोगो के चरित्र को उन्नत बनाने मे कर्मरत हैं। वे हिसा और परिग्रह के विरोधी हैं। भौतिकता एव ऐश्वर्य की जगमगाहट मे मनुष्य के नेत्रो की सम्यक् ज्योति समाप्त हो गई है। मुनिश्री अपने शुद्धाचरण से उसी सम्यक् ज्योति को विकीर्ण कर रहे हैं जिसके सामने भौतिकता और ऐश्वर्य की जगमगाहट स्वतः हत-प्रभ हो जाती है। वे राष्ट्रचरित को सभी भारत-वासियो मे देखने की कामना मे लगे हैं। एक 'मिशनरी स्प्रिट' लिये देशवासियो के उत्थान मे लगे युगपुरुष मुनिश्री विद्यानन्द जी को उनके ५१ वे जन्म दिन पर कोटिशः नमन।

पर पदार्थ सदा ही पर है, अतः उससे दुःख होता है। परन्तु आत्मा ही स्वद्रव्य है, उससे ही सुख होता है; अतएव महात्मा उस आत्मा के लिए उद्यमशील होते है; आत्म-प्राप्ति का प्रयत्न करते हैं।

प्रात स्मरणीय आध्यात्मिक सन्त पूज्य श्री १०८ मुनिविद्यानन्दजी महाराज के पचासवे जन्म दिवस के पुनीत अवसर पर 'वोर' का 'मुनिश्री विद्यानन्द विशेपांक' नयी साज सज्जा के साथ निकल रहा है, यह प्रसन्नता तथा गौरव की वात है। गुरु गोपालदास वरैया जन्म शताव्दी समारोह के अवसर पर केवल एक दिन पूज्य मुनि जी के दर्शन करने तथा प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला था। तव मुनि जी के व्यक्तित्व, विद्वत्ता, प्रवचन-शैली आदि गुणो से मैं वहुत प्रभावित हुआ था।

आपने अनेक ऐसी नूतन प्रवृत्तियो को जन्म दिया है जिनकी वर्तमान युग मे नितान्त आवश्यकता थी। सच्चा धर्म वही है जिसमे साम्प्रदायिकता की गन्ध न हो। आपके प्रवचनो की यह सवसे वडी विशेपता है कि सव सम्प्रदायो के लोग विना किसी भेदभाव के उनमे सम्मिलित होते हैं और धर्म लाभ लेते हैं। आपके प्रवचन सर्वजन-हिताय और सर्वजन सुखाय होते हैं। जो सिद्धान्त या धर्म विश्व के कल्याण के लिये है, आप उसी धर्म का उद्घोप कर रहे हैं। अत. आप सही अर्थ मे विश्व धर्म के उद्घोपक हैं।

आपकी अनेक प्रवृत्तियो मे से एक प्रवृत्ति विद्वानो को प्रोत्साहन देने तथा उनकी सेवाओ का मूल्यांकन करने की है, जो सर्वथा अनुकरणीय और स्तुत्य हे। जिन विद्वानो ने विद्या या साहित्य के क्षेत्र मे उल्लेखनीय कार्य किया है उनका सम्मान होना ही चाहिये। आपकी प्रेरणा से अभी तक अनेक विद्वानो का सम्मान हो चुका है। श्री भारतवर्षीय दिगम्वर जैन विद्वत्परिपद् ने विद्वानो के कल्याण के लिये एक निधि एकत्रित करने की योजना वनाई थी। उस योजना को मुनिश्री का पूर्ण समर्थन मिला और 'महावीर विद्यानिधि' के नाम से उसका श्रीगणेश भी आपके शुभाशीर्वाद पूर्वक आपके सान्निध्य मे गतवर्ष श्रुत-पञ्चमी के अवसर पर मथुरा मे हो चुका है।

विश्व धर्म के उद्घोषक

(प्रो० उदयचन्द जैन, वाराणसो)

भगवान् महावीरके २५००वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर आपके द्वारा अनेक ऐसी योजनाओ का निर्माण तथा कार्यान्वयन हो रहा है जिनके द्वारा पारस्परिक सद्भाव धर्म प्रचार तथा जन-कल्याण होना सुनिश्चित है। जन-कल्याण की दृष्टि से ही आपने हिमालय के दुर्गम प्रदेश मे भी विहार किया है, जहा वर्तमान युग मे अन्य कोई दिगम्वर साधु नही गया था।

ऐसे आध्यात्मिक सन्त के पुनीत जन्म दिवस पर मैं उनके चरणो मे श्रद्धा के सुमन अर्पित करता हूँ और श्री जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता हूँ कि आप शताधिक वर्ष समाज के मध्य विद्यमान रहकर धर्म, समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याण करते रहे।

रोचते दर्शित तत्त्व जीव. सम्यक्त्वभावित:
ससारोद्वेगमापन्न: सवेदादिगुणान्वित' ॥

शांति और त्याग की साक्षात मूर्ति मुनि श्री आज के युग मे ऐसी अद्भुत ज्ञान प्रतिभा को लेकर अवतरित हुए कि इन्होने अपने भाव रूपी सागर को मथकर अनेक अमूल्य ग्रन्थ रूपी रत्न निकाले हैं। ये ऐसे अद्वितीय रत्न हें कि जिन्हे प्राप्त करके राजा और रंक दोनो ही अपने जीवन को सार्थक समझते हैं। इन रत्नो की उपलब्धि मे मुनि श्री को कुवेर से बढकर महा कुवेर बना दिया है। इस महा कुवेर ने मुक्त हस्त से, त्याग, प्रेम, परोपकारिता, कर्तव्य परायणता स्वाभिमानता सतोष और आदर्शवादिता जैसे गुण रूपी मोतियो को विश्व मानवता के मध्य वितरित किया। इस लिये इस महान त्यागी को जो परिगृह से रहित है महाराज कहकर सम्बोधित किया जाता है। महाराज अर्थात राजा के भी राजा।

इस अनुपम और अद्वितीय प्रतिभा के कारण ही इन्हे भारत के ही नही अपितु विश्व के महान सन्तो मे उच्च आसन प्राप्त है। इन्होने अपने ज्ञान खड्ग से अज्ञान तिमिर को दूर कर जन साधारण के हृदय को जीता है इसी से जन-जन का हृदय इन्हे महान सन्त मानता है।

महाराज श्री सस्कृत के महान विद्वान और साहित्य उपवन के सबसे सुन्दर पुष्प हैं। इस पुष्प के अपूर्व ज्ञान रूपी वैभव से धर्म साहित्य रूपी उपवन भारतीयो को ही अपनी ओर आकर्षित नही करता अपितु विश्व मानवता जिज्ञासा और सम्मान की दृष्टि से उनकी ओर निहारती है। मुनि श्री ने अहिसा नाम की मजरी विश्व के परांगण मे इस प्रकार बखेरी है कि उसकी सुगन्ध से समस्त मानवता आप्लावित हो उठी है **आज सरस्वती के इस महान पुत्र को प्राप्त कर हिन्दी और सस्कृत भाषाएं धन्य हो उठी। भाषा ही नही अपितु सम्पूर्ण जगत धन्य हो उठा है।** जिन्होने अपने हाथो को पात्र चरणो को वाहन, भिक्षा-वृत्ति को अन्नपूर्ति, दिशाओं को वस्त्र पृथ्वी को शय्या मान लिया जो अपनी आत्मा में निमग्न है और जो सम्पूर्ण दैन्य जनक परिस्थितियो से सन्यास लेकर अपने कर्मो का निरमूलन करते हें

लोकप्रिय संत मुनि विद्यानन्द

(कु० कामिनी जैन, खतौली)

और जो अपने दिव्य प्रकाश ज्ञान के द्वारा यहीं बैठे हमे विश्व का दिग्दर्शन करा रहे हे।

महाराज श्री को धर्म के क्षेत्र मे अद्वितीय स्थान व सम्मान प्राप्त है इसका सवल कारण है कि ये कोरे साधु मात्र ही नही वल्कि एक समाज सुधारक सृष्टा दृष्टा और लोक नायक भी हैं। इतने गुणो का एक साथ समनवय भारत ही नही विश्व के लिये किसी साधु का होना सम्मान और गौरव की बात है। मुनि श्री के प्रवचन की शैली इतनी सरल पुनीत और हृदयग्राही है कि वह सभी के लिये सुलभ है। उनके रस को अवगाहण करके ज्ञानी और अज्ञानी आसक्त, राजा और रंक स्त्री

सम्यक्त्व-भावित जीव को आत्मरति से प्रतीयमान तत्व के प्रति रुचि होती है। उस समय वह सवेदादि गुणों से युक्त होकर संसार से उद्वेग का (संसार-भय का) अनुभव करता है।

ग्रौर पुरुष, वृद्ध ग्रौर युवा, देशी ग्रौर विदेशी सभी समान रूप से ब्रह्मानन्द की प्राप्ति करते हैं। सरस्वती के इस महान पुत्र ने अपनी अद्वितीय साधना से धर्म के क्षेत्र को सर्वदा शाश्वत ग्रौर कीर्तिमान बना दिया है। इन्होने अपनी पुनीत लेखनी से ऐसी भावधारा प्रवाहित की है कि जिसमे अवगाहन करके मानवीय ग्रात्मा अपने स्वरूप को पहचानने मे समर्थ हुई। ग्राज के घोर भौतिकवादी युग मे मै तो यह कहती हू कि यदि विश्व को कोई सद मार्ग दिखा सकता है तो वह मुनि श्री का अहिंसा परमोधर्म से ग्रोतप्रोत विश्वधर्म ग्रौर चन्द्रमा व चन्दन से भी अधिक शीतल चीज साधु सगति। क्योकि जिस प्रकार ज्योति पाने के पश्चात दीपक अपने स्नेह को सजोकर नही रखता ग्रौर जहां प्रकाश का ग्रभाव होता है वहा जा पहुंचता है ग्रौर अन्धकार को समाप्त करके प्रकाश देता है, उसी प्रकार साधु-रूपी दीपक अपनी ज्ञान रूपी ज्योति से अज्ञान रूपी अन्धकार के गहरे गर्त मे डूबते मानव को बचाकर ज्ञान का ग्रालोक दिखाते हैं।

मुनि श्री परमार्थ पुरुष हैं उनके प्रवचन ज्ञान के अतलन्त समुद्र है। जहा ज्ञानी को अधिक ज्ञान ग्रौर भटके हुए को मजिल मिल जाती है। वह भूम उठता है मुनि श्री के जीवन सकेतो पर। ग्रालोक के लिये ग्रालोक, उज्ज्वलता के लिये उज्ज्वलता पवित्रता के लिये पवित्रता के अजस्र स्रोत मुनि श्री विद्यानन्द के पावन चरणों मे कामनी का शतशत वन्दन।

एकमपि क्षणं लब्ध्वा सम्यक्त्वं यो विमुंचति ।
संसारार्णवमुत्तीर्य लभते सोऽपि निवृंतिम् ।।

मुनि श्री विद्यानन्द जी से मैं उनकी पार्श्व-कीर्ति क्षुल्लक अवस्था से परिचित हूँ। उनकी उस अवस्था मे भी उनका प्रवचन सुन्दर होता था। वे अपने समय को व्यर्थ नही खोते थे। किन्तु अध्ययन मे सतत दत्त चित्त और नई नई बातो को जानने की ओर उनकी दृष्टि बनी रहती थी। जब उनकी विश्वधर्म की रूप-रेखा का प्रथम सस्करण जैन साहित्य सदन को ओर से प्रकाशित हुआ, तब मैंने उसकी प्रस्तावना लिखी थी।

बाद मे उन्होने जब मुनिदीक्षा ले ली, तब भी उनसे जैन सस्कृति के सम्बन्ध मे चर्चा करते हुए मैंने उनसे कहा था कि महाराज! अब आप लोक मे विशेष ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्त करेगे। उनके उच्च विचारो और भावना से मुझे उस समय यह कहने मे कोई सकोच नही हुआ। मुनि जी मे निर्भयता है वे कार्य सम्पादन मे कर्मठ हैं। जिस कार्य का वे निश्चय कर लेते हैं, उसे पूरा किये बिना चैन नही लेते। वे ज्ञान वृद्धि के अध्यवसाय मे निरन्तर लगे रहते हैं। गुण ग्राही और उच्च विचार के विद्वान हैं। उनको दृष्टि शोध-खोज मे अग्रसर रहती है। उसका अनुभव पाठक श्री वीर प्रभु और तीर्थकर वर्द्धमान पुस्तक को देखकर कर सकते है।

वे विद्वानो का और उनकी कृतियो का मूल्य आंकते हैं और उसी का परिणाम है कि उन्होने 'वीर निर्वाण भारती' मेरठ द्वारा विद्वानो को पुरस्कृत किया है। यह जैन सस्कृति का महत्वपूर्ण अग है, जिसकी ओर उनका ध्यान गया। इससे सांस्कृतिक निर्माण को बल मिलेगा और विद्वान जैन सस्कृति के सम्बन्ध में अपनी अभूतपूर्व खोजो द्वारा उसके महत्व का ख्यापित करेगे।

वर्तमान श्रमण सस्कृति के साधको मे मुनि विद्यानन्द का व्यक्तित्व महान है। उनकी अनु-सधानात्मक प्रवृत्ति उनकी महत्ता की द्योतक है।

मुनि श्री विद्यानंद जी का व्यक्तित्व

(श्री परमानन्द जैन शास्त्री, दिल्ली)

पच्चीस सौवे वीर निर्वाण महोत्सव के सम्बन्ध मे पचरगात्मक ध्वज का सर्व सम्मत रूप तैयार किया, यह उनके असाम्प्रदायिक रूप का सकेत है। जैन सस्कृति के लिये यह ध्वजा जैन समाज मे एकता की द्योतक है।

जैन सस्कृति के लिये उनकी महत्वपूर्ण देन उनके महत्वपूर्ण भाषण और उनकी कृतियां हैं, जिनसे समाज के युवको में स्फूर्ति का सचार होता है। दिल्ली के पिछले चातुर्मास मे जब उन्हे यह ज्ञात हुआ कि जैन समाज के युवक धर्म से परा-न्मुख होते जा रहे हैं, उन्हे धर्म से नफरत होने लगी है, कितने ही युवको ने तो मन्दिर में जाना भी छोड़ दिया हैं। तब मुनि जी ने

(शेष पृष्ठ ६ पर)

जिसने सम्यक्त्व को क्षण भर के लिए भी प्राप्त किया है वह देह-त्याग करने पर संसार समुद्र-सन्तरण कर सुख प्राप्त करता है।

सैंकड़ों वर्ष पश्चात्-
जन मेदिनी उमड़ने लगी

(डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल, जयपुर)

मुनिश्री विद्यानन्दजी सेकडो वर्षो पश्चात् प्रथम दिगम्बर जैन साधु हैं, जिनका नाम भारत के कोटि-कोटि जन के मानस पटल पर अकित हो चुका है। उन्होने गत १० वर्षो के थोडे समय मे जितनी ख्याति, लोकप्रियता एव श्रद्धा अर्जित की है वह केवल जैन सतो के ही नही किन्तु प्रत्येक भारतीय सत के लिए विचारणीय विषय है।

जब सन् १९६४ मे उन्होने जयपुर मे प्रथम वर्षायोग किया था तो वे जैन मन्दिरो के सीमित दायरे से निकलकर सार्वजनिक पार्को मे आये और जब पार्को मे भी उनके श्रोताओ को स्थान नही मिला तो फिर उन्हे अपने प्रवचनो के लिए रामलीला मैदान जैसे विशाल सार्वजनिक स्थानो को चुनना पडा। सतो के धार्मिक एव आध्यात्मिक प्रवचनो को सुनने के लिए ६० हजार तक के जन समूह का उमड पडने के पीछे अवश्य कोई रहस्य है, जिसे हम उनकी आध्यात्मिक साधना एव अलौकिक व्यक्तित्व को ही श्रेय दे सकते हैं। जब वे एक ग्राम से दूसरे ग्राम को, एक नगर से दूसरे नगर को विहार करते हैं तो सारी भारतीय जनता बिना किसी साम्प्रदायिक व्यामोह के उनके स्वागत मे पलक पावडे बिछा देती है, और जब वे प्रवचन देने लगते हैं तो ऐसा मालूम देता है जैसे उस विशाल सभा मे श्वास बन्द किए बैठे हैं। वे हजारो की सख्या मे होने पर भी महाराज श्री मे ही सब अपना अस्तित्व खो बैठे हैं। वास्तव मे उनकी विशाल सभाओ मे जिस तरह का अनुशासन, श्रद्धा एव विनय के दर्शन होते हैं उसे देखकर प्रत्येक भारतीय का मस्तक गर्व से तन जाता है और आज भी सतो की वाणी मे कितना रस भरा पडा है इसका ज्वलंत प्रमाण मुनि श्री मे देखा जा सकता है।

जयपुर के अतिरिक्त बडौत, मेरठ, सहारनपुर कोटा, अलवर एव उज्जैन की सार्वजनिक सभाओ मे मुनिश्री को सुनने का अवसर मिला और यह देखकर हृदय गद-गद हो गया कि उनका व्यक्तित्व दिन प्रतिदिन विकसित हो रहा है और लोग हजारो की सख्या मे उन्हे प्रतिदिन सुनने को आते हैं। जैन समाज मे गत ४००-५०० वर्षो मे सतो के रूप मे भट्टारको के अतिरिक्त किसी भी सत का व्यक्तित्व इतना अधिक उभरा हुआ नही मिलेगा। भट्टारको मे भी प्रारम्भ के भ० प्रभाचन्द्र, भ० पदमनदि, भ० सकल कीर्ति, ज्ञान भूषण जैसे भट्टारको को छोडकर सभवत किसी भी जैन सत के व्यक्तित्व को इतनी अधिक लोकप्रियता प्राप्त नही हुई।

विद्यानन्द जी के व्यक्तित्व मे उनकी स्मरण शक्ति, भाषण शैली, विशाल एव गम्भीर ज्ञान ये

तत्प्रति प्रीतिचित्तेन येन वार्तापि हि श्रुता।
निश्चितं स भवेद् भव्यो भाविनिर्वाण भाजनम्।

सब ऐसे गुण हैं जो एक साथ बहुत कम संतों मे मिलते हैं। वे स्वाध्याय प्रेमी हैं और अनवरत अध्ययन किया करते हैं। जहां भी और जिस पुस्तक मे भी अहिसा, अनेकात एव अपरिग्रह तथा श्रमण सस्कृति की परम्परा एव उसके विषय पर सामग्री मिलती रहती है वे उसे सकलित करते रहते हैं और श्रोताओ को उससे लाभान्वित करते हैं। वे अपने श्रोनाओ को नयी नयी बाते सुनाते हैं जो उसने आज तक नही सुनी थी। इसलिए वह उन्हे मत्र मुग्ध होकर सुनता है।

मुनिश्री विद्वानो का बड़ा सम्मान करते हैं। उन्हे अपनी सभाओ मे उच्चासन तथा बोलने का अवसर प्रदान करते हैं। विचार विमर्श करते हैं अपनी नवीन खोजो से उन्हे परिचित कराते हैं तथा भविष्य की योजनाओ से उन्हे अवगत कराते है। विद्वत् समाज का उनके प्रति आकर्षण के मूल मे यही बात है। इन्दौर, कोटा एव मेरठे मे उन्होने विभिन्न सस्थाओ के माध्यम से जैन सस्कृति के उपासक विद्वानो को सम्मानित करने की जो परम्परा डाली है वह नि सन्देह प्रशसनीय है और इससे जैन एव जैनेतर विद्वानो मे जैन साहित्य, इतिहास एव पुरातत्व पर कार्य करने की अपूर्व प्रेरणा मिली है।

मुनिश्री जैसे प्रतिभाशाली एव अपूर्व व्यक्तित्व के धनी संत को पाकर आज सारा जैन समाज गौरवान्वित है। ऐसे परम दिगम्बर संत के चरणो मे मेरी शतश. श्रद्धाजलियां समर्पित हैं।

मुनि श्री विद्यानन्द जी का व्यक्तित्व

(शेष पृष्ठ १०७ का)

युवकों मे धर्म प्रेम उत्पन्न करने के लिये अपने भाषणो मे कुछ ऐसी सरस चर्चा को स्थान दिया जिससे युवकों की रुचि अपने धर्म की ओर हो। श्रमण जैन भजन प्रचारक सघ की स्थापना भी उसका एक अग है। इसके रिकार्डो से लोगो का रिझाव धर्म की ओर हुआ जरूर है।

आपकी सास्कृतिक कृतियां जीवन दायिनी शक्ति को लिये हुए हैं। उनके अध्ययन से नई पीढी के युवको को अपने धर्म की ओर आकर्षण होगा।

मुनि जी पदार्थ का चिन्तन अनेकान्त दृष्टि से करते हैं, क्योकि अनेकान्त मे विरोध को मैटने को क्षमता है और दोषो को पचाने की भी सामर्थ्य है। उससे सहिष्णुता और विवेक की वृद्धि होती है। इस कारण ऐकान्तिक सदोष कल्पना को बल नही मिल पाता। मेरी हार्दिक भावना है कि मुनिजो दीर्घ जीवी हो और जैन सस्कृति के समुद्धार मे सफल हो। मैं अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

घर घर में महावीर की कथा
अन्यथा सब व्यथा

जिसने प्रसन्न चित्त से उस आत्मा के विषय में वार्ता मात्र भी श्रवण की है, वह आसन्न भव्य निश्चित रूप से भविष्य में निर्वाण-प्राप्ति का पात्र होगा।
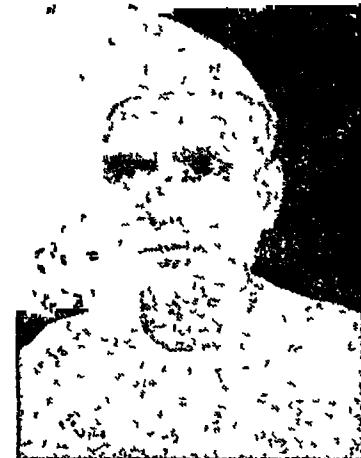
महान तपस्वी मुनि विद्यानंद

(श्री जैनप्रकाश, विकासनगर देहरादून)

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक दिगम्बर जैन मुनियो के दर्शन अति दुर्लभ थे। उत्तरी भारत मे तो केवल कल्पना की ही वस्तु समझा जाता था। लगभग चालीस वर्ष पूर्व पूज्य आचार्य श्री शान्ति सागर महाराज का सघ चौरासी मथुरा आया। पिता जी सपरिवार दर्शनार्थ गये। बडी उत्सुकता से दर्शन किये। उठते रहे विचार क्या कभी उत्तरी भारत मे भी दिगम्बरत्व के दर्शन होगे। पूज्य श्री मुनि विद्यानन्द महाराज के देहला चातुर्मास पर प्रिय रमेश चन्द जैन (श्रीनगर निवासी) के साथ दर्शनो का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उत्तरी भारत मे विहार के निवेदन के समय प्रसिद्धबद्रीनाथ धाम और श्रीनगर गढवाल के दिगम्बर जैन मदिर की विशेष रूप से चर्चा हुई। मुनि श्री के हृदयोद्गारो मे उत्तरी भारत मे हिमालय की चोटियो पर विहार करने के भावो की अभिव्यक्ति मूक स्वीकृति के रूप मे मिली। देहरादून विकासनगर मे पूज्य महाराज के विहार के समय उन विचारो को और बल मिला। सहारनपुर चातुर्मास मे हिमालय की गोद मे वर्फीली चोटियों पर बसे बद्रीनाथ धाम ने पूज्य महाराज श्री के विचारो मे हलचल पैदा कर दी। मैं भी दर्शनो के लिए गया हुआ था। अनेक प्रमुख महानुभावो ने महाराज श्री की बद्रीनाथ धाम की यात्रा के विषय मे असहमति प्रकट की। विचार हुआ कि महाराज श्री से आग्रह किया जाय कि अत्यत ठड-पहाड़ो की वर्फीली चोटियां, तग रास्ते ठहरने आहार आदि की असुविधा किसी भी दिगम्बर मुनि को बाधा उत्पन्न कर सकती है। निश्चय किया गया कि महाराज श्री अपना विचार स्थगित कर दे। मुझसे भी चर्चा हुई। दुविधा मे पड़ गया डरा—बाधाये हैं खतरा है, साहस बटोर कर सोचा किस मुह से अब न जाने के लिए कहूं ? महाराज श्री का निर्णय अटल रहा। सहारनपुर से बिजनौर नजीबाबाद कोटद्वार, दुगड्डा होते हुये पहुंच गये श्रीनगर गढवाल के वर्षो से उपेक्षित दिगम्बर जैन मदिर के प्रागण मे।

दिगम्बरत्व को भूले हुये मेहताओ मे जैनत्व की भावना जाग उठी। रमेशचन्द जैन, राजेन्द्र

ज्ञानेन पुंसां सकलार्थ सिद्धिर्ज्ञानाद् ऋते काचन नार्थसिद्धिः।
ज्ञानस्य मत्वेति गुणान् कदाचिज्ज्ञानं न मुचन्ति महानुभावाः॥

प्रसाद जैन आदि के हर्ष का पारावार न था। निखर उठी वर्षों से सुप्त श्रमण संस्कृति। अलकनन्दा मदाकिनी नदियों के सगम पर बसा रुद्रप्रयाग, गोचर, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग, चमोली, पीपलकोटो होते हुये पहुंचे इस क्षेत्र के प्रमुख नगर जोशीमठ शकराचार्य की नगरी मे। ६००० फीट से भी अधिक ऊंचाई में श्री महेश्वरदत्त डिमरी से भेंट हुई। चर्चा हुई ज्ञात हुआ कि किसी समय के दिगम्बरी हो डिमरी कहलाये जाने लगे। महाराज श्री के विशेष प्रवचन हुए। अनेक प्रमुख व्यक्तियो, शिक्षाविदो ने श्रद्धा के साथ दर्शन किये एव प्रवचन श्रवण किया। पूज्य महाराज श्रो के चरण अब बढ़ चुके थे ७००० फीट से अधिक ऊँचाई पर बसी हनुमान चट्टी पर। बर्फ से ढकी चोटियां, ठण्डी हवाए, मेघाछन्न सूर्य से युक्त मौसम व्यक्तियों मे दांत किटकिटाने की सी अवस्था कर रहा था। तिल-तुष मात्र परिग्रह त्यागी की घोर शीत मे भी निष्कम्प भाव से शीत परिषह सहन करने की अपूर्व क्षमता के समक्ष सभी जैन, जैनेतर नतमस्तक थे। हनु-मानचट्टी से सघ के चरण उल्लास व उत्साह सहित बढे बद्री विशाल की ओर। प्रतिदिन दुर्गम पर्वतो की १० से २० मील तक को पैदल यात्रा हो रही थी।

दुर्गम पगडण्डियो, बीहड़-निर्जन, सुनसान पर्वतो से गुजरते हुये मुनिश्रो सघ सहित थे बर्फीली चोटियो से युक्त, १०५०० फीट की ऊँचाई पर बसे, अपने लक्ष्य बिन्दु बद्री विशाल धाम की सीमा मे। महाराज श्री का अपूर्व साहस, दिव्य आभा, मुख मण्डल को और दैदीप्य-मान बना रही थी। सघ के सभी सदस्य माउण्ट एवरेस्ट के विजेता पर्वतारोही के समान गौरव युक्त थे।

धन्य हो गये थे १२००० फीट की ऊँचाई पर बसे माणा गांव के कण २ भी किसी दिगम्बर मुनि के चरण-स्पर्श से। हजारो वर्षो से विछिन्न दिगम्बर सस्कृति और हिमालय के सम्बन्धो को इतिहास मे अमर कर दिया मुनि विद्यानन्द ने।

ज्ञान से पुरुषों को सम्पूर्ण अर्थसिद्धि प्राप्त होती है और ज्ञान से रहित का कोई भी अर्थ-सिद्धि नहीं मिलती। ज्ञान के इन्हीं विशिष्ट गुणों को मानकर महानुभाव महान् अनुभवशील पुरुष ज्ञान का परित्याग नहीं करते हैं।

समाज की आशा का केन्द्र–
एक देदीप्यमान सबल व्यक्तित्व

(पं० बलभद्र जैन, दिल्ली)

प्रत्येक समाज की कुछ आशाये, आकाक्षाये होती हैं। जैन समाज की भी अपनी कुछ आशाये हैं, आकाँक्षाये हैं। क्या हैं वे आशाये, क्या हैं वे आकांक्षाये। कभी स्पष्ट नही हो पाई। उन्हे मुखर करने को अनेक लोग अनेक प्रकार से प्रयत्न करते रहे हैं। किन्तु क्या वे कभी सुस्पष्ट रूप मे व्यक्त हो पाई हैं। उन आशा-आकाक्षाओ के चित्र को रेखाओ मे तो देखा है। किन्तु उनमे रग भरकर कलात्मक ढग से उन्हे प्रस्तुत कर सके, ऐसा सफल चित्रकार समाज को आसानी से नही मिलता। रग भरने की भी एक कला है। अनेक चित्रकार चित्र बनाते हैं, तूलिका और रगो के सहारे उसे सजाने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु सभी चित्रकार सफल नही हो पाते, सभी चित्र कला के ज्वलन्त रूप नही होते। चित्रकार असफल रह जाते हैं, चित्र रगीन तस्वीर भर रह जाते हैं, किन्तु कला की पकड उन सबमे कहा होती है।

अनेक शिल्पी छैनी-हथौडे की सहायता से मूर्ति बनाते हैं। किन्तु पत्थर की निर्जीव मूर्ति बोलती हो, जिसको देखते ही आखे उस पर से हटाये न हटे, ऐसी प्रभावोत्पादकता कहा होती है उन सब मे। वे तो प्राय पत्थर मे उकेरे हुए आकार मात्र होती हैं। किन्तु कुछ मूर्तिया ऐसी होती हैं जिन्हे देखकर उसके गढने वाले शिल्पी के हाथ चूमनेको जी ललक उठता है। ऐसे विरले ही हाथ होते हैं, जिनके जादू से अनगढ पत्थरो मे प्राण भर उठता है।

यो ही व्यत्तित्व–प्रभावक व्यक्तित्व तो अनेक हैं, जिनके सामने सिर श्रद्धा से स्वत ही झुक जाता है किन्तु ऐसा व्यत्तित्व विरल होता है जिसमे समाज की, देश की, धर्म की आकाक्षाये मूर्त बनकर झाकती- उभरती हो, जिसकी धीमी सी आवाज भी सुप्त प्राणो मे कसमसाहट पैदा कर दे, जन जन का मानस आन्दोलित हो उठे और वह नित नवीन प्रेरणा पा सके।

आज जैन समाज को मुनि विद्यानन्द जी के रूप मे ऐसा ही एक महान व्यक्तित्व मिला है, जिसमे सबको साथ लेकर नेतृत्व करने की क्षमता है, मार्ग-दर्शन का उद्‌बुद्ध विवेक है, नित नवीन सूझबूझ है, जिसके कदम दृढ हैं और समय की गति के साथ उठते हैं। यह व्यक्तित्व प्रभावशालो है, प्रतिभाशाली है। इस व्यक्तित्व मे जैन सस्कृति, जैन इतिहास और जैन धर्म की महान आकाक्षाये मूर्तिमान होकर उभर रही हैं, विकसित हो रही

यथा यथा ज्ञानबलेन जीवो जानाति तत्त्व जिननाथ दृष्टम्।
तथा तथा धर्ममतिप्रसक्तः। प्रजायते पापविनाशशक्तः॥

हैं। आज यह जैन समाज की आशा—आकांक्षाओं का केन्द्र बन गया है। लाखो निगाहे इस पर टिकी हैं। जैन समाज के सभी वर्गो, सभी विचार-धाराओं के विश्वास को ओढ़कर यह व्यक्तित्व हर नये प्रभात में एक नया समुज्ज्वल रूप लेकर विकसित हो रहा है। आज इस व्यक्तित्व के सम्मोहन ने लाखो हृदयो को मोहित कर रक्खा है और वे उसकी हर प्रवृत्ति मे आधुनिक प्रगति-शील युग और पुरातन महान परम्पराओ का अद्भुत सामजस्य देखकर विमुग्ध-विमोहित हो जाते हैं। पुरातन की आत्मा आधुनिकता का बाना पहनकर जब उस व्यक्तित्व में निखर उठती है तो अश्रद्धालुओ—नास्तिको की भी श्रद्धा विग-लित वाणी फूट पडती है। जीवन का सत्य यही है, धर्म का वास्तविक रूप भी यही है; इस धर्म को कौन झुठला सकता है और इसको स्वीकार करने से कौन इन्कार कर सकता है ?

मैंने उन्हे निकट से देखा और परखा है। एक तटस्थ दर्शक के रूप मे देखा है, एक समीक्षक पत्रकार की दृष्टि से परखा है। इसलिये मैं कह सकता हूं कि मेरी राय निर्भ्रान्त है। मुझे उनके सम्बन्ध में अपनी राय स्थिर करने में समय लगा है और मेरे मन में विद्यानन्द जी महाराज के व्यक्तित्व का उज्ज्वल रूप उभरा है।

इनके सयमी जीवन में एक नियमबद्धता परिलक्षित होती है। जैन धर्म और जैन इतिहास को वे ससार के साहित्य मे समुचित स्थान दिलाने को कृतसकल्प हैं। विद्वानो के प्रति उनमे अपार आत्मीयता है। वे चाहते हैं कि सरस्वती-पुत्रो को आर्थिक चिन्ता से मुक्त करने के लिये कोई प्रभाव-कारी और अर्थपूर्ण योजना बनाई जाय। साधु-पद के महत्व और प्रतिष्ठा के प्रति वे सदा जाग-रूक रहते हैं। उनका व्यवहार सरल, सौम्य, उदार और आत्मीयतापूर्ण है। जो उनके पास आता है, वह उनका भक्त बनकर लौटता है, यह उनके व्यक्तित्व का चमत्कार है।

इस चमत्कारी व्यक्तित्व को शत शत वन्दन।

यह जीव ज्ञानार्जन द्वारा जैसे-जेसे जिनेन्द्र-भगवत्-प्रतिपादित तत्त्व को जानता है; वैसे-वैसे धर्म-मति में अपने उपयोग को लगाता हुआ पापों के क्षय करने में समर्थ हो जाता है।

परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते।
स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम्॥

किसी कवि ने ठीक ही लिखा है कि इस परिवर्तनशील संसार में हर प्राणी ही मरकर पुनर्जन्म धारण करता है किन्तु जन्म उसी का सार्थक है जिसके जन्म से सम्पूर्ण वश की उन्नति होती है। यहां वंश का अर्थ हम मानवकुल से लेते हैं तो यह श्लोक मुनि श्री विद्यानंद जी पर ठीक ही उतरता है। ससार मे हजारों व्यक्ति रोज ही जन्मते हैं परन्तु ऐसा नररत्न तो लाखों में एक ही होता है जिसके जन्म लेने से मानवता का उद्धार हो।

मुनि दीक्षा धारण करने के उपरान्त से आप ऐकल विहारी साधु के रूप मे विहार करते हैं और जिस प्रकार कि कल कल निनाद करती सरिताए समस्त धरती की प्यास बुझाती हुई प्रवाहित होती रहती हैं उसी प्रकार मुनि श्री जी स्थान स्थान पर अपने प्रवचनों की पीयूष वर्षा करके जनता को लाभान्वित करते रहते है। भूधरदास जी की यह उक्ति "आप तरहिं पर तारहिं ऐसे हैं ऋषिराज—" मुनि श्री जी पर बिलकुल उपयुक्त बैठती है।

जिस प्रकार कि लोहा पारस पत्थर का स्पर्श करने मात्र से ही सोना बन जाता है उसी प्रकार महाराज श्री जी के सम्पर्क में जो भी व्यक्ति आता है वह निश्चय ही दुर्गुणों को त्याग कर एक सज्जन व्यक्ति बन जाता है कहा भी है :—

चन्दन शीतल लोके चन्दनादपि चन्द्रमाः।
चन्द्र चन्दन योर्मध्ये शीतला साधु सगतिः॥

अर्थात्-संसार में चन्दन शीतल होता है, चन्द्रमा चन्दन से भी शीतल होता है पर साधुओं की संगति इन दोनों से अधिक शीतल होती है।

ऐसे सैंकड़ों उदाहरण हमारे समक्ष हैं कि काफी मात्रा में शराब पीने वाले व मांसाहार करने वाले व्यक्तियों ने मुनिश्री जी के प्रवचनों को सुनकर शराब व मांस का आजन्म परित्याग कर दिया तथा अन्य व्यसनों का भी त्याग कर दिया है क्योंकि—

महाजनस्य संपर्कः कस्यनोन्नतिकारक।
पद्मपत्र स्थितं तोयं धत्ते मुक्ता फलश्रियम्॥

अर्थात् महान पुरुष के सम्पर्क से किसकी उन्नति नहीं होती? कमल पत्र पर स्थित पानी मोती जैसा चमकता है।

गुरुदेव के प्रति—
श्रद्धा के दो पुष्प

(श्रीमती सरला प्रेमबिहारी लाल मेरठ)

आपके अन्तःकरण में वात्सल्य भावना का श्रोत उमडा पड़ता है जिसे आप प्राणीमात्र पर लुटाते चले जा रहे हैं। स्वामीजी का चरित्र हिमालय के समान दृढ़ है। यद्यपि आपने सभी प्रकार की वेशभूषा व वस्त्र धारण का सर्वथा त्याग कर रक्खा है परन्तु आपने समता का ऐसा बाना पहना हुआ है कि आपसे साक्षात्कार करने वाला मनुष्य श्रद्धा से नत हो जाता है। आपका अध्यात्मज्ञान प्रकाश स्तम्भ के सदृश्य है जिसके आलोक से मुमुक्षु जीवात्माए विषम भवसागर को सहज ही पार कर सकती हैं। मैं तो यूं कहूँगी कि आपका जीवन समन्वयवाद की अटूट शृंखला है। स्याद्वाद के सिद्धान्तों एव द्वादशाग वाणी के प्रचारक होकर

क्षेत्रे प्रकाशं नियतं करोति रविर्दिनेऽस्त पुनरेव रात्रौ।
ज्ञानं त्रिलोके सकले प्रकाशं करोति नाच्छादनमस्ति किंचित्॥

भी आपने समन्यवाद की जिस शैली को अपनाया है वह वास्तव में अनूठी है।

यूं तो भारत भूमि में भगवान आदीश्वरनाथ के समय से ही निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधुओं का निरन्तर विहार होता ही रहता है और वे त्यागमूर्ति महामानव यथाशक्ति निज तपश्चरण के द्वारा आत्मकल्याण व जन कल्याण करते ही रहते हैं परन्तु इस साधु वर्ग में भी कोई कोई ही ऐसी अद्वितीय प्रतिभा का धारी होता है कि जिस यश सुरभि दिग्दिगान्तरों तक फैल जाती है क्योंकि—

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो न हि सर्वत्र, चन्दनं न वने वने॥

अर्थात्–हर पहाड पर माणिक नहीं मिलते और न हर एक हाथी में मोती मिलते हैं। प्रत्येक वन में भी चन्दन नहीं होता इसी तरह ऐसे साधु भी सर्वत्र नहीं मिलते।

अन्त में मैं प्रभु से प्रार्थना करती हूँ कि मुनिश्री जी को दीर्घायु एवं स्वस्थ शरीर प्रदान करें ताकि वे स्वयं अपने आत्मकल्याण के साथ साथ मानवमात्र का भी उद्धार इसी प्रकार करते रहें।

सूर्य प्रतिदिन नियत रूप से क्षेत्र में प्रकाश करता है, परन्तु वह पुनः रात होने पर अस्त हो जाता है; अतः तीनों लोक में ज्ञान-सूर्य ही ऐसा प्रकाश उत्पन्न करने वाला है जिसका आच्छादन करने वाला कोई नहीं।

सराक जाति मे किया जा रहा आपका कार्य चिर स्मरणीय रहेगा, यह कष्ट साध्य कार्य आप जैसे कर्मठ कार्यकर्ता के ही बस का है, "आपने जो साहित्य सराक जाति का इतने अल्प समय मे तैयार करके समाज को दिया है वह इतिहास मे सदैव अमर रहेगा" आदि ।

यह वाक्य परम पूज्य श्रद्धेय श्री १०८ मुनि विद्यानन्द जी महाराज ने सहज स्वभाव मे १५ जनवरी १९७४ ई० को मेरठ जैन धर्मशाला मे जब कहे, तब मैं आश्चर्य चकित रह गया कि आज पूज्यवर मेरे पर कृपावत कैसे हुए। कही व्यग तो नही है, क्योकि मैं तो सदैव यह मानकर चल रहा था कि मुनि जी का स्नेह हमे नही मिल सकता कई वर्षो की घटनाओ को स्मरण एक क्षण मे कर गया जिसमे हम व मुनि जी निकट होकर भी दूर दूर रहते आये हैं ।

अत. पुन' उनके चरणो मे निवेदन किया कि महाराज जी आपका यदि पूर्ण शुभाशीर्वाद मिले तो यह कार्य शीघ्र ही अपने असली रूप मे आ जावे। प्रश्न को हमने गहराई से रखा था, उसे मुनिजी ने गहराई से ग्रहण किया और हँसकर बोले, "बाबूलाल जी जिन शकाओ मे आप गोते खा रहे हैं वह शकाये अब मन से निकाल दो, हमने ६ वर्ष से तुम्हे अच्छी तरह परख लिया है और तुम्हारे कार्यकलापो को भलीभाति जाना है, तुम्हारो शक्ति और भक्ति को पूरी तरह जान गया हूँ, तुम जैसा व्यक्ति ही इस समय के वातावरण मे ठीक है मेरा पूरा पूरा शुभाशीर्वाद तुम्हारे साथ है। आदि ।

मैं धन्य हुआ और गद्गद् होकर गुरू चरणो मे वदनाकी। मुनिजी ने अपनी पिच्छिका मेरे सिर पर रख दी, यह प्रथम समय था जो पिच्छिका सिर पर आई। एक भगवान महावीर स्वामी का सिक्का भी प्राप्त किया और साहित्य आदि भी।

मुनि जी स्पष्ट वक्ता हैं अत. उन्होने स्पष्ट बताया कि लोगो ने कितना भ्रम तुम्हारी ओर से फैलाया था, हमे आपको दूर दूर रखा था हमने तुम्हे श्री महावोर जी, आगरा, फिरोजाबाद, देहलो, मेरठ, बडौत, सहारनपुर आदि स्थानो पर

श्रमण संस्कृति के प्रतोक मुनि विद्यानन्द जो के चरणों में शत-शत बार नमन

(श्री बाबूलाल जैन जमादार)

खूब जांचा और आपने (मैंने) पूरा पूरा मौका दूर दूर रहकर दिया। अपने कार्य मे आप सफल हुये। आप जैसे कर्मठ कार्यकर्ताओ की समाज को आवश्यकता है कार्यकर्ता तैयार कीजिये।

पूज्य मुनिविद्यानन्दजी महाराज जब क्षुल्लक अवस्था मे थे और दीक्षा लेने वाले थे उस समय मेरा परिचय मान्य पण्डित बलभद्र जी जैन न्यायतीर्थ ने लच्छीमल जी की धर्मशाला देहली मे कराया था।

मुनि विद्यानन्द जी धर्म पक्ष के स्वामी हैं, दिगम्बर जैनधर्म के परम उपासक हैं, दिगम्बरत्व

इति ज्ञेयं तदेवैकं श्रवणीयं तदैव हि ।
दृष्टव्यं च तदेवैकं नान्यन्निश्चयतो बुधैः ।।

की रक्षा मे तत्पर हैं, विश्व को जैन धर्म की सही सही दिशा बताने वाले हैं, स्वाभिमानी हैं और अपनी परम्परा का स्वाभिमान वह बड़ी से बड़ी जन-सभा मे, बड़े से बडे नेता व श्रीमंत तथा धीमत के सम्मुख निर्भीकता से रखते हैं।

वैज्ञानिको के मध्य हो, साहित्यिको के मध्य हो, श्रीमतो के मध्य हो, कार्यकर्ताओ के मध्य हो, जनता के मध्य हो कही भी हों अपनी परम्परा का स्पष्ट चित्रण करते हैं। विरोधियो को भी वह मौका देते हैं परखने पहचानने का और समर्थको को भी मौका देते हैं परखने पहचानने का। यही कारण है कि आज भारतवर्ष मे सतवर्ग मे आप "सर्वश्री" पद पर हैं उच्चारण किये जाते हैं।

जो रच मात्र भी दिगम्बरत्व के खिलाफ नही सुन सकता वह कभी भी किसी के विरोध में भी नही बोलता यही तो लोकप्रियता है। आज भगवान महावीर स्वामी के २५०० वां निर्वाण शताब्दी महोत्सव के युग मे उनकी ५०वी जन्म जयन्ती सभी को मार्ग दर्शन करावेगी तथा सभी को धर्म पक्ष तथा विश्व अहिंसा धर्म की ममता से ओत-प्रोत करेगी ऐसी मेरी भावना व श्रद्धाजलि है।

जाति-पाति का बन्धन आपके प्रवचनो मे बाधक नही होता है यह अनोखी बात है, ऐसा सभी कहते हैं, पर यह आश्चर्य नही है क्योकि वीतरागी गुरुओ के चरणो मे सदैव से विरोधी जीव (जाति विरोधी) शॉति लाभ लेते आये हैं, ले रहे हैं, लेते रहेगे। इसमे शका नही है। चारित्र धर्म की यही तो महिमा है।

पूज्य मुनि जी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र के धनी हैं, कोरा न चारित्र है और न कोरा सम्यग्ज्ञान या सम्यग्दर्शन का दिग्दर्शन वह तो ज्ञान सहित सम्यग्चारित्र के धनी हैं। अन्त मे रत्नत्रय की पूर्ति करके आत्म-कल्याण करेंगे ऐसी दृष्टि स्पष्ट है।

ऐसे वीतराग धर्म के उपासक श्रमण सस्कृति के प्रतीक निर्ग्रंथ मुनि विद्यानन्द जी महाराज के चरणो मे शत् शत् बार नमन।

इस प्रकार वह आत्मा ही एकमात्र ज्ञेय है, वही श्रवण करने योग्य है, और निश्चय दृष्टि से विद्वानों द्वारा वही एक द्रष्टव्य

मुनि श्री विद्यानंद जी

कुछ संस्मरण

श्री माईदयाल जैन, दिल्ली

समस्त जैन समाज के छ-सात हजार साधुग्रो-साधवियो मे चोटी के दस पन्द्रह साधुग्रो मे मुनि श्री विद्यानन्दजी की गिनती होती है। ग्रापका लम्बा कद, गौर वर्ण इकहरा शरीर, चौडा तथा ऊँचा ललाट ग्रौर तप से तेजस्वी तथा ग्रात्मा पुण्य मुख की छवि देखने योग्य है। मुनि श्री से दस बारह वर्ष से परिचय होने का मेरा सौभाग्य है। यहां उनके कुछ सस्मरण दिये जाते हैं।

तिरंगा झण्डा फहराया

सन् १९४२ के भारत छोडो ग्रान्दोलन ने देशव्यापी रूप धारण कर लिया था। उसके लपेट मे छोटे-बडे शहर कस्बे ही नही गाव तक ग्रागये थे। द्वितीय महायुद्ध चल रहा था ग्रौर ग्रग्रेज सरकार जीजान से युद्ध जीतने पर तत्पर थी। पर 'भारत छोडो' ग्रान्दोलन के कारण भारत के शासको की तो नीद हराम थी। इसी समय शेडवाल नगर के कुछ नवयुवको ने वृक्ष पर तिरगा झडा लहराने का निश्चय किया। सतरह वर्षीय युवक सुरेन्द्र ने उनका नेता बनकर स्वय वृक्ष पर तिरगा झण्डा लहराया। पुलिस उन्हे न पकड़ सकी ग्रौर वे भूमि-गत (ग्रण्डर ग्राउण्ड) हो गये।

उनका विशाल ग्रध्ययन

ग्रापका विशाल ग्रध्ययन है। क्षुल्लक पद ग्रहण करने से ग्रौर उसके बाद मुनि दीक्षा लेने पर ग्राप समस्त भारत मे पदयात्रा करते, ग्रौर चातुर्मास करते घूमे हैं। पूछने पर मालूम हुग्रा कि ग्राप ग्रब तक कोई ग्रडतालीस हजार ग्रन्थो व पुस्तको का ग्रध्ययन कर चुके हैं। धर्मसिद्धान्त, दर्शनशास्त्र, पुराण ग्रादि के ग्रतिरिक्त ग्रापको दूसरे विषयो मे भी रुचि है। मेरी पुस्तक 'हिन्दी राष्ट्र रचना' उन्हे बड़ी पसन्द ग्राई जिसकी प्रशसा उनसे सुन कर मैंने ग्रपने को गौरवान्वित ग्रनुभव किया।

क्रिकेट कमेन्टरी से प्रेरणा

वीर के सम्पादक श्री राजेन्द्र कुमार जैन ने उनसे पूछा, 'ग्रापके यशस्वी होने का क्या कारण है ? 'श्री विद्यानन्द जी ने मुस्कराते हुए बताया 'एक बार मैंने बाजार मे क्रिकेट मैच की कमेन्टरी सुनते हुए पुरुषो-युवको की भीड को देखा। सबको उसमे बडा रस ग्रा रहा था। मैंने सोचा कि धर्म प्रवचनो मे जनता को क्यो रस नही ग्रा सकता ? तब से मैंने शास्त्रो मे बताई प्रवचन शैली का ग्रध्ययन किया। फिर उसे ग्रपने जीवन मे उतारा। फिर धवलादि ग्रन्थो के ग्राधार पर श्रोताग्रो के सामने शास्त्रोक्त धर्म के स्वरूप को प्रवचन मे रखा।'

विद्वानों का समादर

यू तो श्री विद्यानन्द जी के सम्पर्क में ग्राने

(शेष पृष्ठ १२० पर)

द्वैततो द्वैतमद्वैतादद्वैतं खलु जायते
लोहाल्लोहमयं पात्रं हेम्नो हेममयं यथा ॥
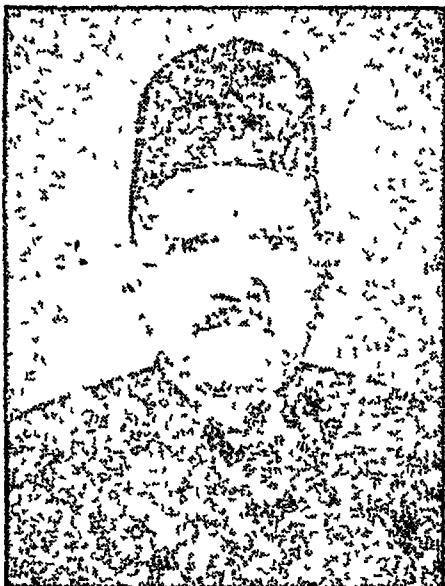
एक संस्मरण

श्री मिश्रीलाल पाटनी
ग्वालियर

मेरे मकान पर आहार निमित्त श्री मुनीराज पधारे थे। मैंने आहार होनेके पश्चात महाराजको अपनी पुस्तकालय के १५०० पुस्तको की सूची अवलोकन कराई। उसमे से १ ग्रन्थ पसद आने पर स्वाध्यायार्थ दिया गया।

उसी समय महाराज श्री ने मुझसे कहा परिवार मे कौन-कौन है मैंने कहा सुमेरचन्द नाम का बच्चा है उसको दत्तक लिया है। मै भी दत्तक ही आया था। कई पीढ़ियो से इस ठिकाने पर दत्तक ही आ रहे हैं। इसी वातावरण मे हमारी धर्म पत्नी ने कहा महाराज अब इस ठिकाने पर आगामी नाम चलने हेतु पुत्रोतपत्ती होगी या नही या इसी प्रकार वश चलेगा। महाराज श्री ने कहा। जिस प्रकार मिश्रीलाल पाटनी की धर्म कार्य मे लगन रहती है उसी कदर तुम्हारी व उनकी लगन धर्म कार्य मे रहेगी तो धर्म प्रभाव से अवश्य पुत्रोतपत्ती होगी व भावना पूर्ण होगी। महाराज श्री के वचन पर श्रद्धा हुई उसके कुछ समय बाद मेरे पुत्र सुमेरचन्द की शादी ३०-११-७२ को हुई व १६-११-७३ को पुत्र उत्पत्ति हुई। यह महाराज श्री के वचन का व आशीर्वाद का फल है।

मैं श्री मुनि विद्यानन्द जी महाराज के चरण कमलो में श्रद्धांजली अर्पित करता हुआ दीर्घ आयु की कामना करता हूँ।

द्वैत बुद्धि से द्वैत तथा अद्वैत से अद्वैत की उत्पत्ति होती है। लौह से लोह-पात्र और सुवर्ण से सुवर्ण-पात्र बनता है; अर्थात् उपादान यदि द्वैत संयोगी होंगे तो उनसे अद्वैत (द्विसंयोग-रहित) आत्मसिद्धि कैसे शक्य होगी?

(शेष पृष्ठ ११८ का)
वाले साधारण व्यक्ति से धनवान तक व युवक-युवतियां, स्त्री-पुरुष हैं। पर विद्वान भी आपसे मिलकर तत्व चर्चा करके प्रसन्न होते हैं। मैंने स्वयं जैन-अजैन बहुत से विद्वानो को उनसे मिलते देखा है। मुनिश्री उनका यथोचित समादर करते हैं।

सभा को मंत्र-मुग्ध करने में कुशल

समय की पाबन्दी और सभा को अनुशासन मे रखने मे आप बड़े सख्त हैं। उनको यह भी पसन्द नही कि बाद मे आने वाले व्यक्ति विशेषकर बडे आदमी आगे बैठने का प्रयत्न करे। बीस-पच्चीस हजार पुरुषो की सभा मे जब आप अपना प्रवचन आरम्भ करते हैं, तो श्रोता मन्त्र-मुग्ध से हो जाते हैं। मजाल नही कही किसी कोने तक मे शोरगुल या बात-चीत हो। बडे बडे राजनीतिक वक्ताओ मे जो गुण होता है, वह आप अध्यात्मिक संत मे है।

संगीत से प्रेम

सगीत, मधुर गायन, धार्मिक रिकार्ड आदि जब आप सुनते हैं तो उसमे इतना रस लेते हैं, मानो उनकी आत्मा को भक्ति-रसाहार मिल रहा हो। ऑल इण्डिया रेडियो के सगीत विभाग के अध्यक्ष तक आपसे मिलते हैं। रेडियो पर जैन भजनोके नियमानुसार विधिवत प्रसारण मे आपकी प्रेरणा ही मुख्य कारण है। भगवान श्री पार्श्वनाथ की निम्न स्तुति जिसका प्रथम चरण नीचे दिया जाता है, आपको बडी प्रिय है.—

तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण
पारस प्यारा, मेटो मेटो जी संकट हमारा ॥

मुद्रक व प्रकाशक श्री सुकुमार चन्द जैन मत्री अ० भा० दि० जैन परिषद ने प्रेमी प्रेस मेरठ से छपवाकर रेलवे रोड, मेरठ शहर से प्रकाशित किया। —सम्पादक प० परमेष्ठीदास जैन

५०वीं जन्म जयन्ती पर

मुनिराज श्री विद्यानन्द जी का

हार्दिक अभिनन्दन
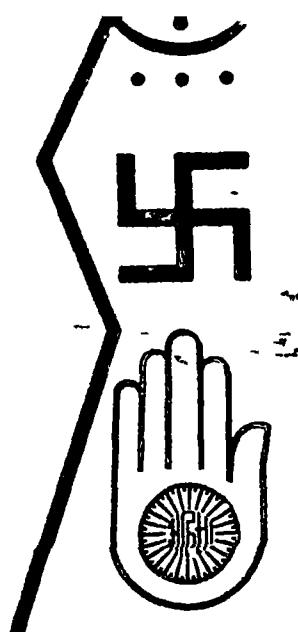
परस्परोपग्रहो जीवानाम्

कन्नड़, मराठी तथा हिन्दी भाषा में

जैन भजन, स्तुति तथा स्त्रोत के रेकार्ड निर्माता

श्रमण जैन भजन प्रचारक संघ

कार्यालय मत्री
२९९२, काजीवाडा, दरि
दिल्ली–११०००६

निम्न स्थानो से भी रेकार्ड प्राप्त किये जा सकते है :—

१. श्री जैन साहित्य सदन, लाल मन्दिर, चांदनी चौक, दिल्ली।
२. महाराज लाल एन्ड सन्स, चांदनी चौक, दिल्ली।
३. श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, श्री महावीर जी (राज०)।